उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.COM-06
संचार कौशल एवं शोध विधि

खण्ड

1

व्यावसायिक सम्प्रेषण (Business Communication)

इकाई - 1 5
व्यावसायिक सम्प्रेषण की अवधारणा, प्रकृति, प्रक्रिया, महत्व, बाधायें एवं दूर करने के उपाय। (Business Communication : Concept, Nature, Process, Importance, Barriers and means to Overcome.)

इकाई - 2 34
व्यावसायिक लेखन, वाणिज्यक पत्र, व्यावसायिक रिपोर्ट एवं मौखिक सम्पेषण (Business writing Commercial Letters, Business Report and Oral Communication)

इकाई - 3 75
रिपोर्ट प्रस्तुतिकरण, सार्वजनिक भाषण एवं विचार-विनिमय द्वारा निर्णयन (Report Presentation, Public Speaking and Negotiation)

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 मूल मोतिहार	प्रोफेसर, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 दिनेश कुमार	एसो0 प्रोफेसर, इलाहाबाद डिग्री कालेज, सम्बद्ध इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, मार्च 2010
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

MCOM : 06 खण्ड- 1 परिचय-Communication and Research Methodology

खण्ड–1 : व्यावसायिक सम्प्रेषण (Business Communication)

इस खण्ड में कुल तीन इकाईयां हैं जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है:

इकाई–1 व्यवसाय में सम्प्रेषण की बड़ी महत्ता है। व्यावसायिक सम्प्रेषण लिखित, मौखिक दोनों प्रकार का होता है। इस इकाई में सम्प्रेषण का आशय, सम्प्रेषण की प्रकृति, सम्प्रेषण की प्रक्रिया, सम्प्रेषण के महत्व एवं सम्प्रेषण में आने वाली बाधाओं तथा उन्हें दूर करने के उपायों के बारे में बताया गया है।

इकाई–2 व्यावसायिक जगत में अनेक अवसरों पर लिखित सम्प्रेषण ही किया जाता है क्योंकि यह भविष्य के लिये प्रमाण के रूप में प्रयोग किया जाता है। व्यापारिक पत्र, व्यवसाय की आत्मा है बिना पत्र व्यवहार के व्यापार होना कठिन कार्य है। व्यवसाय में अनेक व्यावसायिक रिपोर्ट की आवश्यकता पड़ती है। मौखिक सम्प्रेषण तीव्र तथा तुरन्त प्रभावकारी होता है। इस इकाई में उपरोक्त विषयों के बारे में बताया गया है।

इकाई–3 व्यावसायिक रिपोर्ट कैसे बनाई और प्रस्तुत की जाये। सार्वजनिक प्रस्तुतिकरण एवं वार्तालाप की भी व्यवसाय में आवश्यकता पड़ती है। इन सब विषयों को इस इकाई में समझाया गया है।

इकाई–1 व्यावसायिक संप्रेषण : अवधारणा, प्रकृति, प्रक्रिया, महत्व एवं बाधायें (Business Communication : Concept, Nature, Process, Importance, and Barriers)

इकाई की रूपरेखा

1.0 इकाई का उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना : (Introduction)

1.2 व्यावसायिक संप्रेषण : अवधारणा, उद्देश्य एवं विशेषतायें

1.3 व्यावसायिक संप्रेषण की प्रकृति

1.4 व्यावसायिक सम्प्रेषण की प्रक्रिया

1.5 प्रभावशाली सम्प्रेषण के आवश्यक तत्व

1.6 व्यावसायिक संप्रेषण का महत्व

1.7 व्यावसायिक सम्प्रेषण की बाधायें

1.8 व्यावसायिक सम्प्रेषण की बाधाओं को दूर करने के उपाय

1.9 सारांश

1.10 शब्दावली

1.11 अभ्यास के लिये प्रश्न

1.12 संदर्भ पुस्तकें

1.0 उद्देश्य : (Objectives)

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप इस योग्य हो सकेंगे कि :

- व्यावसायिक संप्रेषण की अवधारणा, प्रकृति, उसकी प्रक्रिया के बारे में बता सके;
- व्यावसायिक संप्रेषण केसे प्रभावशाली हो यह बता सके;
- व्यावसायिक संप्रेषण के महत्व को बता सकेंऋ तथा
- व्यावसायिक संप्रेषण की बाधाओं और उन्हें दूर करने के सुझाव बता सकें।

1.1 प्रस्तावना : (Introduction)

आधुनिक युग तकनीकी युग है जहाँ एक ओर भीमकाय उत्पादन सम्भव हुआ है वहीं दूसरी ओर प्रत्येक उद्योग में कार्य करने वाले व्यक्तियों की संख्या में भी पर्याप्त वृद्धि हुयी है। अतः किसी संस्था में सभी व्यक्तियों

को एक सूत्र में पिरोने के लिये सम्प्रेषण व्यवस्था का महत्वपूर्ण स्थान है।

सम्प्रेषण का अर्थ दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य तथ्यों, विचारों, अनुमानों या संवेगों (Emotions) के पारस्परिक आदान–प्रदान से है। वर्तमान समय में तार, टेलीफोन, टेलीविजन तथा रेडियो आदि ने विचारों के सम्प्रेषण को अधिक सुलभ बना दिया है परन्तु ये सभी साधन स्वयं सम्प्रेषण नहीं हैं। चार्ल्स ई0 रेडफील्ड (Charles E. Redfield) के अनुसार सम्प्रेषण से आशय मानवीय तथ्यों एवं विचारों के पारस्परिक विनिमय से है, न कि टेलीफोन, तार, रेडियो आदि तकनीकी साधनों से। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि सफल सम्प्रेषण हेतु सूचना देने वाला और सूचना पाने वाला विषय वस्तु का एक–सा अर्थ बोध करने में समर्थ हो सके। किसी व्यक्ति द्वारा कोई बात कह देना ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि आवश्यकता इस बात की भी होती है कि सूचना पाने वाला सूचना को उसी प्रकार प्राप्त करे एवं उसका वही अर्थ लगावे जो सूचना देने वाला का है। यद्यपि किसी तथ्य पर कहने और सुनने वाले में मतैक्य होना आवश्यक नहीं है परन्तु सम्प्रेषण हेतु उन दोनों ही व्यक्तियों को सम्बन्धित तथ्य या सूचना का एक–सा अर्थ समझना आवश्यक है।

आधुनिक व्यावसायिक युग में व्यापार अथवा उपक्रम की सफलता का मूल तत्व न केवल सम्प्रेषण बल्कि 'प्रभावी सम्प्रेषण' के कारण ही सम्भव है। **सम्प्रेषण ही वह साधन है जिसके द्वारा व्यवहार को क्रियान्वित किया जाता है, परिवर्तनों को लागू किया जाता है, सूचनाओं को उत्पादक बनाया जाता है एवं व्यावसायिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जाता है।** सम्प्रेषण में एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक सूचनाओं का आदान–प्रदान शामिल होता है। आधुनिक संचार क्रान्ति के युग में समस्त व्यावसायिक उपक्रमों की सफलता काफी सीमा तक प्रभावी सम्प्रेषण प्रक्रिया पर निर्भर करती है।

सम्प्रेषण (Communication) शब्द अंग्रेजी के 'Common' शब्द से बना है जिसकी उत्पत्ति लैटिन शब्द 'Communis' से हुई है, जिसका शाब्दिक अर्थ है एक समान। सम्प्रेषण वह साधन हे जिसमें संगठित क्रिया द्वारा तथ्यों, सूचनाओं, विचारों, विकल्पों एवं निर्णयों का दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य अथवा व्यावसायिक उपक्रमों के मध्य आदान–प्रदान होता है। सन्देशों का आदान–प्रदान लिखित, मौखिक अथवा सांकेतिक हो सकता है। माध्यम बातचीत, विज्ञापन, रेडियो, टेलीविजन, समाचार पत्र, ई–मेल, पत्राचार आदि कुछ भी हो सकता हे। सम्प्रेषण को सन्देशवाहन, संचार अथवा संवहन आदि समानार्थी शब्दों से पुकारा जाता है।

1.2 व्यावसायिक सम्प्रेषण की अवधारणा, उद्देश्य एवं विशेषतायें :(Concept, Objectives and Elements of Business Communication)

सम्प्रेषण एक व्यापक शब्द होने के कारण ही विभिन्न विद्वान इसके

अर्थ के सम्बन्ध में एकमत नहीं हैं। कुछ विद्वानों ने सूचनाओं के प्रेषण की प्रक्रिया को ही सम्प्रेषण माना है और कुछ ने प्रेषण के साधनों को ही सम्प्रेषण माना है। अतः इसके अर्थ को ठीक ढंग से समझने के लिये विभिन्न विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषाओं का अध्ययन करना आवश्यक है। सम्प्रेषण की कुछ प्रमुख विद्वानों द्वारा दी गयी परिभाषायें निम्नांकित हैं:–

आंग्ल शब्द Communication को हिन्दी में संचार, संवादवाहन, सम्प्रेषण, सन्देशवाहन नामों से जाना जाता है।

1. **वेब्स्टर शब्दकोष** के अनुसार, सम्प्रेषण से आशय– ''शब्दों, पत्रों अथवा सन्देशों द्वारा समागमः, विचारों एवं सम्मतियों के विनिमय से है।''[1]

2. **कीथ डेविस** के अनुसार, ''सम्प्रेषण वह प्रक्रिया है जिसमें सन्देश और समझ को एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति तक पहुँचाया जाता है।''[2]

3. **लुई ए0 एलेन** के अनुसार, ''सम्प्रेषण में वे सभी चीजें शामिल हैं जिनके माध्यम से एक व्यक्ति अपनी बात दूसरे व्यक्ति के मस्तिष्क में डालता है। यह अर्थ का पुल है। इसके अन्तर्गत कहने, सुनने और समझने की व्यवस्थित तथा निरन्तर प्रक्रिया सम्मिलित होती है।''[3]

4. **न्यूमैन तथा समर** के अनुसार,''सम्प्रेषण दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य तथ्यों, विचारों, सम्मतियों अथवा भावनाओं का विनिमय है।''[4]

5. **मेयर के अनुसार** ''सम्प्रेषण से आशय एक व्यक्ति के विचारों और सम्मतियों से दूसरे व्यक्ति को अवगत कराने से हैं।''[5]

6. **कार्टियर एवं हारवर्ड** के अनुसार, ''सम्प्रेषण स्मरण शक्तियों के दोहराने (Replication) के लिये एक प्रक्रिया है।''[6]

---

1 "Inter course by words, letters or messages, interchange of thoughts and opinions."
-Webster's Dictionary

2 "Communication is the process of passing information, and understanding from one person to another." -Keith Devis : Human Relation in Business, p. 288

3 "Communication is the sum of all things that one person does when he wants to create understanding in the mind of other. It is a bridge of meaning. It involves a systematic and continuous process of telling, listening and understanding."
-Louis A. Allen : Management and Organisation, p. 114

4 "Communication is an exchange of facts, ideas, opinions or emotions by two or more persons." -Newman and Summer : The Process of Managemen, p. 59

5 "Communication means the act of making one's ideas and opinion known to otherss".
-F.G. Meyer

6 "Communication is a process for the replication of memories".
- P.A. Cartier and K.A. Haward

7. **मैक्फारलैण्ड** के अनुसार, ''सम्प्रेषण को विस्तृत रूप में मानवीय पहलुओं के मध्य अर्थपूर्ण बातों का विनिमय करने की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। विशिष्टतया यह वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से मानवों के मध्य समझ को पहुँचाया जाता है तथा अर्थों को समझा जाता है।[1]

8. **स्ट्रॉस के अनुसार,** ''सम्प्रेषण को विस्तृत रूप में मानवो के मध्य अर्थपूर्ण बातों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।''[2]

उपर्युक्त परिभाषाओं का अध्ययन करने से स्पष्ट होता है कि सम्प्रेषण एक सतत् प्रक्रिया है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति अपने सन्देशों, भावनाओं, विचारों, सम्मतियों तथा तर्कों आदि का पारस्परिक विनिमय करते हैं।' इस प्रकार सम्प्रेषण एक ऐसी युक्ति है, कला है जिसके माध्यम से सूचनाओं का आदान प्रदान होता है।

व्यावसायिक सम्प्रेषण के उद्देश्य : (Objectives of Business Communication)

व्यवसाय करने में सम्प्रेषण की अत्यधिक आवश्यकता पड़ती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति तब तक व्यवसाय नहीं कर सकता जब तक कि उसके पास व्यवसाय से सम्बन्धित सूचना के आदान–प्रदान की व्यवस्था न हो। यदि किसी व्यक्ति को रूपया देकर ताले में बन्द करके बिठा दिया जाये तो वह व्यवसाय नहीं कर सकता, ठीक उसी प्रकार व्यवसाय में सम्प्रेषण के निम्न मुख्य उद्देश्य हैं:–

1. **सूचना का आदान–प्रदान :** सम्प्रेषण प्रक्रिया का प्रयोग इसलिये किया जाता है ताकि व्यवसाय से सम्बन्धित समस्त सूचनाओं का विनिमय अथवा आदान–प्रदान किया जा सके। इसके माध्यम से क्रय–विक्रय, ग्राहक, पूर्तिकर्ता तथा अन्य पक्षों के बारे में सभी प्रकार की सूचनायें प्राप्त की जा सकती हैं अथवा भेजी जा सकती हैं।

2. **कार्यवाही (Action) :** सम्प्रेषण इस उद्देश्य से किया जाता है कि निश्चित किये गये लक्ष्यों के बारे में क्या कार्यवाही हो रही है, इसका पता लग सके। इसी कारण प्रबन्धक समय–समय पर अनेक प्रकार के विवरण मँगवाते हैं ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि प्रत्येक स्तर पर कार्यवाही हो रही है।

---

1. "Communication may be broadly defined as the process of meaningful interaction among human beings. More specifically. It is the process by which meanings are perceived and understandings are reached among human beings."
-D.E. McFarland; Managemen : Principles and Practices, p. 552

2. "Communication be broadly defined as the process of meaningful interation among human beings" -Strauss

3. निष्पादन (Performance) : सम्प्रेषण के माध्यम से वास्तव में किये गये कार्य की प्रगति का मूल्याकन हो सकता है। यदि कोई कमी हो तो इसे सुधारा जा सकता है। यदि किसी स्थान पर कोई कार्य नहीं हो रहा है तो उचित कार्यवाही की जा सकती है।

4. समन्वय (Co-ordination) : सभी व्यावसायिक क्रियाओं को सुचारू रूप से चलाने के लिये यह आवश्यक है कि विभिन्न विभागों तथा अनुभागों में समन्वय स्थापित किया जाये और इस कार्य के लिये सम्प्रेषण का सहारा लिया जाता है। सम्प्रेषण का प्रयोग सभी स्तरों पर सूचनायें भेजने, नीतियों को अपनाने तथा श्रमिकों के मनोबल को बढ़ाने आदि में भी प्रयोजित किया जाता है। अतः सम्प्रेषण समन्वय के लिए बहुत सहायक है।

5. प्रबन्धकीय कार्यों का आधार : किसी भी व्यावसायिक संगठन में प्रबन्ध एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा लोगों से कार्य कराया जाता है। प्रबन्ध के मुख्य कार्य हैं– नियोजन, संगठन, मानवीय संसाधनों को जुटाना, नियुक्ति, अभिप्रेरणा आदि। इन सभी कार्यों के लिये सूचना का आदान–प्रदान आवश्यक है जो कि सम्प्रेषण द्वारा किया जाता है। यहॉ तक कि प्रबन्धकीय निर्णय भी सूचना के आधार पर लिये जाते हैं। अतः सम्प्रेषण की अत्यधिक आवश्यकता है।

6. अभिप्रेरणा (Motivation) : कर्मचारियों को कार्य के लिये प्रोत्साहित करने हेतु उन्हें सभी प्रकार की आवश्यक जानकारी देना आवश्यक है और यह कार्य सम्प्रेषण की सहायता से किया जाता है। यदि कर्मचारियों को इस बात का पूर्ण ज्ञान हो कि अच्छा कार्य करने पर उनकी तरक्की होगी अथवा पारितोषिक प्राप्त होगा तो वे निश्चय रूप से ही अच्छा कार्य करेंगे।

7. शिक्षा (Education) : व्यावसायिक संगठनों में कार्मिकों के शिक्षण तथा प्रशिक्षण हेतु सम्प्रेषण की अत्यधिक आवश्यकता है। सम्प्रेषण के माध्यम से समस्त कर्मचारियों और अधिकारियों का ज्ञान वर्धन किया जाता है, ताकि वह अपने कार्य को अधिक निपुणता से कर सकें।

संक्षेप में, हम यह कह सकते हैं कि व्यावसायिक सम्प्रेषण एक व्यवसाय की आधारशिला है और इसी की सहायता से सभी प्रकार के व्यावसायिक उद्देश्यों की पूर्ति की जा सकती है। आधुनिक जगत में व्यावसायिक कार्यकलाप इतने अधिक बढ़ चुके हैं कि उन्हें निपटाने के लिये एक कुशल सम्प्रेषण पद्धति की अत्यन्त आवश्यकता है, विशेषकर बैंकों की प्रबन्धकीय सूचना पद्धति की कुशलता इसी पर आधारित है।

व्यावसायिक सम्प्रेषण के आवश्यक तत्व : (Essential Features of Business Communication)

सम्प्रेषण के परम्परागत स्वरूप में पांच तत्व : (1) सन्देशवाहक, वक्ता

अथवा लेखक, (2) विचार जो सन्देश, आदेश या अन्य रूप में हैं, (3) संवाहन कहने, लिखने अथवा जारी करने के रूप में, (4) सन्दश प्राप्त करने वाला, (5) सन्देश प्राप्तकर्ता की प्रतिपुष्टि या प्रतिक्रिया आदि तत्व होते हैं। लेकिन सम्प्रेषण के आधुनिक स्वरूप का विश्लेषण किया जाए तो सम्प्रेषण के निम्नलिखित तत्व प्रकाश में आते हैं:

(1) सम्प्रेषण एक सतत प्रक्रिया (A Continuous Process) :

व्यावसायिक सम्प्रेषण निरन्तर (सतत्) चलने वाली प्रक्रिया है। क्योंकि ग्राहकों, कर्मचारियों, सरकार आदि बाह्य एवं आन्तरिक पक्षों के मध्य सन्देशों के आदान–प्रदान की प्रक्रिया व्यवसाय में निरन्तर बनी रहती है। सम्प्रेषण में सूचना **(Information),** आदेश, निर्देश, सुझाव, सलाह, क्रियान्वयन, शिक्षा, चेतावनी, अभिप्रेरणा, ऊँचा मनोबल उठाने वाले संदेशों का आदान प्रदान निर्बाध रूप से सतत प्रक्रिया में चलता रहता है।

2. सम्प्रेषण अर्थ सम्प्रेषित करने का माध्यम (A Means to Convey Meaning) :

सम्प्रेषण का आशय सूचनाओं एवं सन्देशों को एक व्यक्ति (समूह) से दूसरे व्यक्ति (समूह) को भेजना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि इसके लिए यह भी आवश्यक है कि सूचना अथवा सन्देश प्राप्तकर्ता उसे उसी भाव (अर्थ) में समझे जिस भाव से उसे सूचना दी गई है। इसलिए सम्प्रेषण प्रक्रिया में सूचना प्रेषण करने वाले को 'Encoder' तथा सूचना प्राप्त करने वाले को 'Decoder' कहा जाता है। इस प्रक्रिया को निम्न ढंग से स्पष्ट किया जा सकता है :

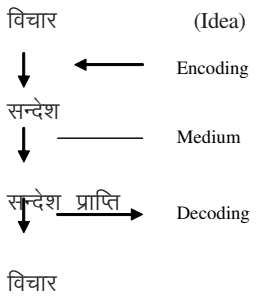

3. सम्प्रेषण द्विमार्गी प्रक्रिया (Communication is a two-way Process):

सम्प्रेषण दोतरफा प्रक्रिया है। सम्प्रेषण में दो व्यक्तियों अथवा समूहों के मध्य सन्देश का आदान प्रदान होता है। सम्प्रेषण प्रक्रिया में सन्देश प्राप्तकर्ता सन्देश भेजने वाले के सही अर्थ भाव को समझता है एवं अपनी प्रतिपुष्टि अथवा प्रतिक्रिया (Feedback) सन्देश प्रेषक को प्रदान करता है। इस तरह सम्प्रेषण मूलतः द्विमार्गी प्रक्रिया है। सन्देश प्राप्त करने पर ही सम्प्रेषण प्रक्रिया

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.COM-06
संचार कौशल एवं शोध विधि

खण्ड

2

सम्प्रेषण कुशलताएँ

इकाई-1 5
व्यावसायिक लेखन कौशल

इकाई-2 21
श्रवण कौशल

इकाई-3 35
गैर शाब्दिक सम्प्रेषण

इकाई-4 55
साक्षात्कार एवं बायोडाटा निर्माण

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	कुलपति - अध्यक्ष
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 मूल मोतिहार	प्रोफेसर, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 नागेन्द्र यादव	एसोसिएट प्रोफेसर, प्रबन्धन अध्ययन विद्याशाखा, उ0 प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, मार्च 2010
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खण्ड-2 (परिचय)

इस खण्ड में विशेषतः सम्प्रेषण कुशलताओं के बारे में चर्चा की गयी है। प्रथम इकाई व्यावसायिक लेखन कौशल में मुख्यतः व्यावसायिक लेखन के प्रकार एवं लेखन की प्रक्रिया की चर्चा की गयी है। चूँकि व्यावसायिक लेखन सदैव से ही व्यावसायिक गतिविधियों की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण रहा है तथा यह व्यवसाय की सफलता एवं असफलता के मापदण्डों को भी प्रत्यक्षाया अप्रत्यक्षरूप से प्रभावित कर सकता है। द्वितीय इकाई में सम्प्रेषण प्रक्रिया के सापेक्ष श्रवण कुशलताओं की चर्चा की गयी है। श्रवण प्रक्रिया प्रभावी बनाने के लिए हमें इसके विभिन्न पहलुओं को जानना अतिआवश्यक है। इसको ध्यान में रखते हुए श्रवण रणनीतियाँ तथा श्रवण बाधाओं की चर्चा इस इकाई में की गयी है। तृतीय इकाई में सम्प्रेषण के अन्तर्गत आने वाले गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की चर्चा विभिन्न मुद्राओं तथा भाव भंगिमाओं की सहायता से की है तथा यह बताने का प्रयास किया है कि गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का शब्दिक सम्प्रेषण के साथ अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अन्तिम, चतुर्थ इकाई में साक्षात्कार के लिए महत्वपूर्ण तथ्यों को बताया गया है। तथा बायोडाटा निर्माण हेतु महत्वपूर्ण बातों का उल्लेख किया है।

इकाई - 1 : व्यावसायिक लेखन कौशल

इकाई की रूपरेखा-

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 व्यावसायिक सन्देश एवं उनके प्रकार

1.3 व्यावसायिक सन्देश लेखन की प्रक्रिया

1.4 व्यावसायिक पत्र के सामान्य भाग

1.5 व्यावसायिक पत्रों के प्रकार

1.6 सारांश

1.7 महत्वपूर्ण शब्द

1.8 स्वपरख प्रश्न

1.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

1.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप निम्नांकित उद्देश्यों की पूर्ति करने में सक्षम होंगेः

- व्यवसाय में लिखित कौशल के महत्व को समझने एवं सीखने में,
- विभिन्न प्रकार के व्यावसायिक संदेशों को लिखने में,
- व्यावसायिक संदेशों को सीधी एवं गैर सीधी विधाओं को जानने में,तथा
- व्यावसायिक संदेशों की प्रक्रिया को समझने में।

1.1 प्रस्तावना

आज के युग में व्यावसायिक गतिविधियों में लेखन का अत्यधिक महत्व है। आपके सोचने की, विचारों की क्षमता कितनी भी मजबूत क्यों न हो परन्तु यदि आप अपने विचारों को सही प्रकार से लिखने में असमर्थ हैं तो आपकी सफलता पर अवश्य ही प्रतिकूल असर पड़ता है। लेखन का महत्व व्यावसायिक गतिविधियों में इसलिए भी अधिक है क्योंकि लिखित पत्रों को या फाइलों को भविष्य में अभिलेखों के रूप सन्दर्भ

या जाँच आदि विभिन्न विषयों के लिए प्रयोग किया जाता है। रिपोर्ट, मैनुअल, निर्देशिका, व्यावसायिक योजनाएं, मेमोरेण्डम, पत्र, ई-मेल आदि विभिन्न प्रकार के लिखित अभिलेख न केवल व्यावसायिक क्रियाकलापों के बारे में सूचनाएं प्रदान कराते हैं अपितु पाठकों को सन्तुष्ट करने में, बल प्रदान करने में, सम्बन्ध विकसित करने में एवं सूचनाओं के संग्रह करने आदि में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। आजके सूचना प्रौद्योगिकी के युग में भी लेखन कुशलता का महत्व कम नहीं हुआ है। आज के नियोक्ता ऐसे अभ्यर्थियों की खोज में रहते हैं जो कुशल रूप से लिखित एवं मौखिक सम्प्रेषण जानते हों। यदि सहायक गण अपने अधिकारी द्वारा दिये गये निर्देशों को सही रूप से संदेश में परिवर्तित करने में सफल नहीं हो पाते हैं तो इसका बहुत ही व्यापक रूप से प्रतिकूल असर उनकें व्यवसाय पर पड़ सकता है। इसका तात्पर्य यह है कि आप चाहे किसी भी नौकरी या व्यवसाय में हो परन्तु आपको प्रायः अपने व्यावसायिक संदेशों के द्वारा अपने उच्चाधिकारी के साथ, कनिष्ठ सहायक अधिकारी के सथ, अंकेक्षक के साथ, बैंक के साथ, उपभोक्ता आदि के साथ सम्प्रेषण करना अत्यन्त आवश्यक होता है। इसके अतिरिक्त लिखित सम्प्रेषण की आवश्यकता आपको अपने दैनिक मामलों के लिए, शुभकामना संदेशों के लिए, ऋणात्मक संदेशों के लिए या सन्तुष्टि संदेशों आदि के लिए अपनी व्यावसायिक भूमिकाओं के निर्वहन के लिए करना पड़ सकता है। इस इकाई में लिखित संदेशों के द्वारा एक प्रभावी लिखित सम्प्रेषण के बारे में आपको बताया जाएगा।

1.2 लिखित व्यावसायिक संदेश एवं उनके प्रकार

लिखित व्यावसायिक संदेशों का महत्व हमेशा से ही रहा है तथा आगे भी बना रहेगा भले ही इसको प्रयोग करने के माध्यम बदल गये हों। ऐसा इसलिए है क्योंकि किसी भी भूतकाल की घटना को सिद्ध करने के लिए लिखित अभिलेख ही सबसे प्रभावशाली तथा सबसे आसानी से प्रयोग किये जाने वाला अभिलेख माना जाता है। चाहे आप सरकारी विभाग में हों या गैर सरकारी, या निजी क्षेत्र की कम्पनी में, लिखित संदेशों/लिखित सम्प्रेषण के बिना किसी भी प्रकार के व्यावसायिक संगठन को चलाया जाना असंभव है। लिखित सम्प्रेषण पर ही सभी संगठनों के आश्रित होने का एक मुख्य कारण यह भी है कि इसको एक स्थिर या सदैव के लिए प्रमाण के रूप में रखा जा सकता है। आज के युग में जब कभी कोई कानूनी प्रक्रिया होती है तो लिखित अभिलेखों की सहायता से ही मामले का निस्तारण किया जाता है। लिखित अभिलेखों के द्वारा ही हम

अपने विचारों को व्यक्त कर सकते हैं तथा अत्यन्त ही सरलता एवं सुगमता से प्रयोग में ला सकते हैं। इसी के साथ साथ लिखित सम्प्रेषण की कुछ कमजोरियाँ भी हो सकती हैं जैसे कि इनको लिखते समय अत्यन्त सावधानी बरतनी चाहिए। उचित शब्दों का प्रयोग, सरल मुहावरों का प्रयोग, सरल भाषा का प्रयोग इत्यादि कुछ ऐसी सावधानियाँ हैं जिनको नहीं बरतने पर पाठक गण पर इसका प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता हैं। प्रायः व्यावसायिक संदेश निम्नांकित प्रकार के हो सकते हैं :

(क) धनात्मक संदेश या अच्छी खबर वाले संदेश

धनात्मक संदेश से हमारा तात्पर्य उन संदेशों से होता है जो किसी व्यक्ति विशेष के बारे में अच्छी खबर देते है या किसी को धनात्मक रूप में प्रतिबिम्बित करते हैं। उदाहरणार्थ धन्यवाद संदेश, बधाई संदेश, समायेाजन संदेश, तारीफ, गुणगान करने वाले संदेश आदि। प्रायः उच्चाधिकारी अपने कार्यालय के अधीनस्थ या समकक्ष कर्मचारियों के या उनके सम्बन्धियों के विवाह आदि के अवसर पर बधाई संदेश भेजते हैं या किसी सदस्य की मृत्यु के अवसर शोक सन्देश भेजते है, उन्नति होने पर बधाई संदेश भेजते हैं आदि। ये सभी धनात्मक संदेश के उदाहरण हैं।

(ख) ऋणात्मक या बुरी खबर देने वाले संदेश

ये वे संदेश होते हैं जो पाठक पर ऋणात्मक प्रभाव डालते हैं या उनको दुःखी कर देते हैं। प्रायः इस प्रकार के संदेशों का प्रयोग कर्मचारियों को दण्डात्मक कार्यवाही के फलस्वरूप दिया जाता है। उदाहरणार्थ, यदि कोई मानव संसाधन प्रबन्धक अपने किसी कर्मचारी को कार्य के पूरा न करने पर कम्पनी से निकालने का आदेश दे या कोई बैंक किसी व्यक्ति के ऋण के अस्वीकार कर दे आदि।

(ग) उदासीन या दैनिक प्रयोग के संदेश

इस प्रकार के संदेशों का महत्व धनात्मक संदेशों के ही लगभग समतुल्य या अधिक भी हो सकता है। परन्तु प्रायः इन संदेशों में भावनात्मकता की कमी होती है। उदाहरणार्थ, किसी प्रार्थना पत्र के लिए प्राप्ति का सन्देश, पूछताछ संदेश, क्रेडिट सूचना का संदेश, व्यक्तिगत परीक्षण इत्यादि के संदेश इस श्रेणी में आते हैं। अर्थात हम कह सकते हैं कि किसी भी व्यवसायिक गतिविधि को संचालित करने में जो भी दैनिक संदेश साधारण रूप में प्रयोग किये जाते हैं उन्हें उदासीन संदेशों की श्रेणी में रखा जाता है।

1.3 व्यावसायिक सन्देश लेखन की प्रक्रिया

व्यावसायिक सन्देश को लिखने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम इसको लिखने की सोच या विधा के बारे में चर्चा कर लें। प्रायः व्यावसायिक संदेश को हम सीधे तौर पर या गैर सीधे तौर पर लिख सकते हैं। अधिकांश व्यावसायिक संदेश सीधे तौर पर लिखे जाते हैं। यदि आपको किसी को किसी विषय के बारे में सूचित करना है तो आप सीधे तौर पर संदेश लिखेंगे। इस प्रकार की विधा में लेखक एवं पाठक दोनों के ही उद्देश्य समान होते है। सीधे तौर पर लिखे गये संदेशों में, संदेश एक दम साफ तथा स्पष्ट होता है तथा किसी भी प्रकार के भ्रम की स्थिति नहीं होती है।

उदाहरणार्थ, ''विश्वविद्यालय में राष्ट्रपति महोदया के आने के उपलक्ष्य में तैयारियों को दृष्टिगत रखते हुए 20 जून 2010 तक विश्वविद्यालय के सभी अवकाश निरस्त किये जाते हैं तथा सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को यह निर्देश दिया जाता है कि वे उक्त दिनांक तक कोई भी छुट्टी नहीं लेंगें।''

उपरोक्त संदेश में सीधे तौर पर यह स्पष्ट किया गया है कि राष्ट्रपति महोदया के विश्वविद्यालय में आगमन के उपलक्ष्य में सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों का विश्वविद्यालय में रहना अनिवार्य है।

इसके अतिरिक्त हम गैर सीधे तौर पर भी संदेश लिख सकते हैं इसका प्रयोग प्रायः इन परिस्थितियों में किया जाता है जब श्रोता या पाठक संदेश सुनने के लिए तैयार न हों या रूचि न ले रहे हों या अन्य कोई बाधा हो। इस प्रकार के संदेशों को एकदम से व्यक्त नहीं किया जाता है अपितु पहले भूमिका बनाकर श्रोताओं में रूचि पैदा करते हैं तथा उसके बाद मुख्य सन्देश की चर्चा करते हैं। लेखन में भी इस प्रकार की विधा को प्रयोग में लाने के लिए पहले हम परिस्थिति को ध्यान में रखकर गैर सीधी बात लिखते है। उसके पश्चात इससे जोड़ते हुए अपने मुख्य विषय की बात लिखते हैं।

उदाहरणार्थ, जब हम पहले विषय से सम्बन्धित कोई घटना क्रम का वर्णन करते हैं तथा उसके बाद उस घटना के मुख्य विषय की चर्चा करें जैसे कि, आपने कल के समाचारों में देखा या सुना होगा कि एक 16 वर्ष की छात्रा ने आत्मदाह कर लिया। क्या आपने इसके कारणों को जानने का प्रयत्न किया। वह बालिका अपने भविष्य के प्रति आशंकित थी तथा उसे लगता था कि उसके कम अंक आने के कारण वह एक अच्छा

भविष्य सुनिश्चित नहीं कर सकेगी। क्या हम लोगों ने कभी इस बात की चर्चा अपने परिवार में की है कि एक अच्छे भविष्य से हमारा तात्पर्य क्या है। क्या समाज में फैली भौतिकतावादी सोच एक अच्छे भविष्य के निर्माण पर हावी हो रही है और उसी को हम अपने बच्चों पर थोप रहे हैं । तो हमें आवश्यकता इस बात की है कि एक अच्छे भविष्य के निर्माण में आने वाले सभी कारकों का खुल कर वर्णन तथा उनकी प्रासंगिकता की हम चर्चा करें जो हमारा आपका मुख्य विषय है।

इस प्रकार आपने देखा कि मुख्य विषय की चर्चा करने से पूर्व हम श्रोताओं या पाठकों का ध्यान आकर्षण करने के लिए एक अन्य वास्तविक घटना का वर्णन करते हैं जो कि गैर सीधे तौर पर संदेश निर्माण का एक उदाहरण हैं।

व्यावयासिक संदेश लेखन के मुख्यतः पाँच पद हो सकते हैं जिसको हम निम्नांकित रेखाचित्र के द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं।

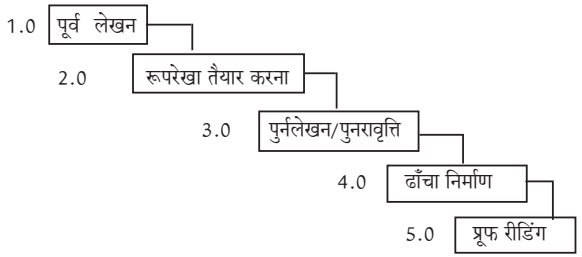

1.0 पूर्वलेखन - पूर्वलेखन एक प्रकार की नियोजन प्रक्रिया होती है जिसके अन्तर्गत हम लिखने वाले विषय के बारे में सोच विचार करते हैं या इस मुख्य विषय से सम्बन्धित अन्य उपविषयों की प्रासांगिकता के बारे में विचार करते हैं । पूर्व लेखन के दौरान हमें निम्नांकित बातों का ध्यान रखना चाहिए :

- अपने लेखन के उद्देश्य का निर्धारण करो
- अपने पाठक को जानों तथा पहचानो
- अपने संदेश के लिए सूचना/डाटा की खोज करो एवं उसे एकत्रित करो
- संदेश को संगठित करो तथा एक खाका तैयार करो।

प्रथमतया, हम अपने व्यावसायिक संदेश को लिखने से पूर्व उसके उद्देश्यों के बारे में सोचते हैं । आपने पिछले एक सप्ताह में अपने आफिस में जितने भी व्यावसायिक संदेशें

का निर्माण किया उसके बारे में मनन करें तथा इन व्यावसायिक संदेशों के लेखन के द्वारा आप इन संदेशों के उद्देश्यों की कितनी पूर्ति कर पाए यह भी एक आवश्यक बिन्दु है।

इसके अतिरिक्त जब आप अपने लेखन उद्देश्य को बखूबी चिन्हित कर लेते हैं तो उसके पश्चात वे कौन से व्यक्ति है जो इस संदेश को पढ़ेंगे उन्हें ध्यान में रखकर अपने संदेश की रूपरेखा, भाषा, माध्यम इत्यादि को चयनित करनी चाहिए।

जब तक आप अपने संदेश को पाठकों या श्रोताओं से जोड़ पाने में सक्षम नहीं होंगे तब तक सम्प्रेषण के पूर्ण होने में संदेह हो सकता है। इसके लिए आवश्यक है कि आप अपने पाठकों के समझने वाली भाषा, माध्यम आदि का प्रयोग करें। यदि आप अपने संदेश के उद्श्यों को पाठक के उद्देश्यों से मिला कर लिखें तो आपके उद्देश्यों की पूर्ति आसानी से हो सकती है। अर्थात संदेश लिखने के पूर्व हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि हम ''मैं'' से ''आप'' की सोच सुनिश्चित करें अर्थात मैं क्या लिख सकता हूँ से मेरा पाठक या आप क्या समझ सकते हैं की सोच रखके सन्देश का निर्माण करें। जब भी आप किसी व्यावसायिक संदेश को लिखें तो इसके पूर्व आपको मुख्य विषय के बिन्दुओं को उल्लिखित कर लेना चाहिए। उदाहरण के रूप में हम अपने व्यावसायिक संदेश को पहले 4 बिन्दुओं में विभाजित कर सकते हैं।

1) असंतुष्ट कार्य सम्पादन

2) सुरक्षा विषयों का उल्लंघन

3) अवज्ञाकारी होना

4) कार्य से अनुपस्थित होना ।

हम उपरोक्त उदाहरण में मुख्य चार बिन्दुओं को पुनः उप बिन्दुओं में विभाजित कर सकते हैं। अर्थात असंतुष्ट कार्य सम्पादन के अन्तर्गत समयानुसार कार्य न करने की प्रवृत्ति, बुरी गुणवत्ता का उत्पादन, कार्य में रूचि न लेना आदि हो सकता है। इसी प्रकार सुरक्षा नियमों के उल्लंघन, अवज्ञाकारी होना तथा कार्य से अनुपस्थित होने को भी संगठन के अनुसार उपबिन्दुओं में विभक्त कर सकते हैं।

निम्नांकित रेखाचित्र के अनुसार हम किसी कार्मिक के व्यवहार को किसी संगठन के अनुसार अनुशासनात्मक कार्यवाही के हेतु दर्शा सकते हैं :

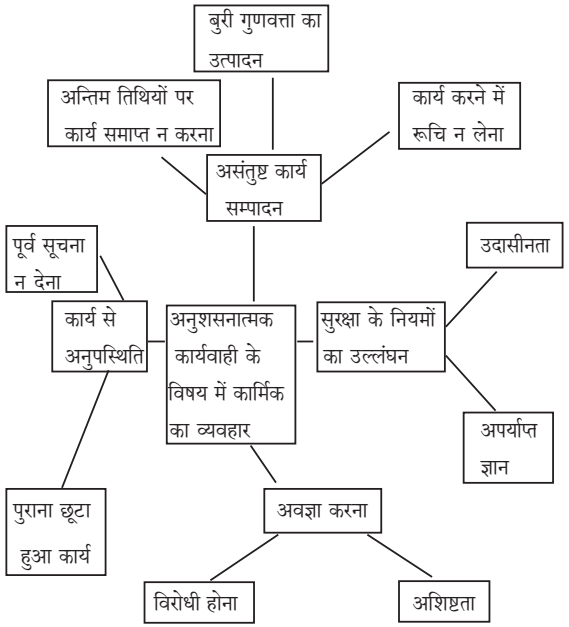

- किसी संगठन के अन्तर्गत अनुशासनात्मक कार्यवाही से सम्बन्धित कार्मिक व्यवहार का सम्भावित दृष्टिकोण।

2.0 रूपरेखा तैयार करना - आपके संन्देश को कितनी अच्छी प्रकार से समझा जाता है, यह आपके संदेश की रूपरेखा पर निर्भर करता हैं । प्रायः सन्देश लिखते समय व्यक्ति जब लिखना प्रारम्भ करता है तो लिखने में बह जाता है। अर्थात अनवरत लिखते जाता है। जिसके कारण ऐसे बिगड़े हुए संदेश की रूपरेखा को पढ़ने में पाठक भ्रमित हो जाते हैं। इसके लिए आवश्यक है कि आप संदेश निर्माण में उचित शब्दों का प्रयोग करें तथा शब्दों को सही प्रकार से प्रयोग करें जिससे कि उसका अर्थ सही रूप में जाना जा सके। एक अच्छा व्यापारिक संदेश वही होता है जिसके द्वारा सरलता से बिन्दुवार सूचना प्राप्त हो जाए। जब कोई संदेश ज्यादा लम्बा हो जाता है उसका अर्थ कहीं न कहीं क्षीण हो जाता है तथा सम्प्रेषण की प्रक्रिया अपूर्ण रह जाती है। एक अच्छे संदेश के निर्माण में यह आवश्यक है कि सही शब्दों का प्रयोग हो तथा शब्दों का सही रूप से प्रयोग हो तथा संदेश बहुत ज्यादा लम्बा न हो। यदि संदेश में शब्दों का बहुत अधिक प्रयोग किया जाए तो यह पाठक को भ्रमित कर सकता है। शब्दों की संख्या के आधार पर संदेश की समझ को निम्नांकित श्रेणी के द्वारा दर्शाया जा सकता है :

- वाक्य लम्बाई तथा समझने की क्षमता में सम्बन्ध

वाक्य लम्बाई	समझने की क्षमता की दर (प्रतिशत)
8 शब्द / वाक्य	100 प्रतिशत
15 शब्द / वाक्य	90 प्रतिशत
19 शब्द / वाक्य	80 प्रतिशत
28 शब्द / वाक्य	50 प्रतिशत

प्रायः सीधे एवं सरल वाक्यों को बनाने के स्थान पर कुछ अनावश्यक शब्दों के प्रयोग से वाक्यों को लम्बा कर देते हैं जो कि वाक्य को समझने की योग्यता पर विपरीत प्रभाव डालते हैं। हम निम्नांकित वाक्यों को सरल करने का तरीका निम्नांकित उदाहरणों की सहायता से करेंगे :

- लम्बा वाक्य : अधिक मात्रा में उत्पादित उत्पादों की बिक्री हमारी एक प्राथमिक आवश्यकता है। (12 शब्द)
- छोटा वाक्य : हमें अधिक मात्रा में उत्पादित उत्पादों को बेचना चाहिए। (9 शब्द)
- लम्बा वाक्य : यह हमारे उत्पादन विभाग की जिम्मेदारी है कि वह यह देखे कि हमारे विक्रय विभाग की आवश्यकताओं की पूर्ति करे। (20 शब्द)
- छोटा वाक्य : हमारे उत्पादन विभाग को, विक्रय विभाग की आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। (12 शब्द)

इस प्रकार हम कम शब्दों का प्रयोग करके वाक्य को और अधिक सरल एवं सुगम बना सकते हैं।

3.0 पुनर्लेखन - प्रायः हम लोग समय के अभाव में या आलस्य के फलस्वरूप लिखे गये संदेश को दोबारा नहीं पढ़ते हैं तथा उसमें प्रयुक्त शब्दों या वाक्यों का पुनः परीक्षण नहीं करते हैं जिससे कि संदेश में गल्तियों के बने रहने का पूर्ण अवसर रहता है जो कि संदेश के अर्थ को प्रभावित कर सकता है। आप अपने द्वारा लिखे गये किसी भी पत्र, ऑफिस पत्र, संदेश आदि को यदि दोबारा पढेंगे तो स्वतः ही कुछ कमियॉ या

गल्तियाँ दूर करने में सक्षम होंगे या कम से कम पहले वाले लिखित से अधिक प्रभावी संदेश को लिखने में सक्षम हो सकते हैं। यदि आप किसी वाक्य या शब्द को दोहरायेंगे तो आपको समझ में आएगा कि इस शब्द या वाक्य से अधिक प्रभावी शब्द या वाक्य आप प्रयोग कर सकते हैं। इसके साथ ही हमें पुन्र्लेखन के लिए स्वयं का आलोचक होना आवश्यक है। क्या हम अपने ही लिखे संदेश की आलोचना कर उसे एक नया रूप दे सकते हैं। हो सकता है कि हमने जो वाक्य लिखा है उसमें कुछ और शालीनता की आवश्यकता है या पाठक की समझ के अनुरूप कुछ और अधिक समझाने की आवश्यकता है। इस प्रकार से हमने जो कुछ भी लिखा है उसके विकल्प ढूँढते हुए उस सन्देश का एक आलोचनात्मक अध्ययन करना चाहिए तथा इसमें अधिक गुणवत्ता लाने हेतु आवश्यकतानुसार बलदाव लाना चाहिए।

4.0 ढाँचा निर्माण - व्यावसयिक संदेशों के लेखन में किसी भी प्रकार के ढांचे या संरचना को एक आदर्श संरचना के रूप में नहीं माना गया है। प्रायः कुछ न कुछ बदलाव हर संदेश में कहीं न कहीं अपेक्षित होते हैं। परन्तु आपने जो भी सार अपने संदेश में लिखा है, उसे जिस संरचना के अन्तर्गत प्रस्तुत किया है, यह सम्प्रेषण को प्रभावित करता है। सबसे पहले पाठक किसी भी संदेश या लेख की संरचना या ढांचे को देखते हैं। यदि दिखने में यह संरचना/ढांचा अच्छा होता है तो मुख्य रूप से अति व्यस्त पाठकों पर यह एक प्रभावी संम्प्रेषण करने में सहायता करता है।

आज के सूचना प्रौद्योगिकी युग में विभिन्न माध्यमों ने कहीं न कहीं संदेश/लेख की संरचना को प्रभावित किया है। यदि हम किसी संदेश को प्रिण्ट माध्यम से सम्प्रेषित करते हैं तो उसका ढांचा / संरचना, इण्टरनेट माध्यम से भेजे गये संदेश से प्रायः भिन्न होता है तथा यदि मोबाइल फोन के द्वारा हम संदेश भेजते है तो ये और भी अधिक भिन्न होता है। कम्प्यूटर में लेख संरचना के जितने विकल्प मिलते हैं उतने मोबाइल सेट पर नहीं मिलते हैं तथा हाथ से लिखे संदेशों में तो यह केवल लेखक के कला ज्ञान पर ही निर्भर करता है कि कितनी आकर्षक संरचना के द्वारा वह संदेश को लिख सकता है।

जब भी आप किसी व्यावयायिक संदेश को हस्ताक्षरित करते हैं तो इसका तात्पर्य यह होता है कि उस संदेश की संरचना, शब्दों आदि के जिम्मेदार आप ही हैं, न कि पत्र/संदेश लिखने वाला या टाइप करने वाला व्यक्ति जिम्मेदार होता हैं। अतः यह आपकी जिम्मेदारी है कि आप किसी संदेश को हस्ताक्षरित करने से पूर्व उसे पढ़ लें तथा यथोचित

संशोधन करके ही उसे अग्रस्तरित करें।

5.0 प्रूफ रीडिंग - किसी भी लेख/संदेश की प्रूफ रीडिंग करने के लिए महत्वपूर्ण बिन्दु नीचे दिये जा रहे हैं :

- प्रूफ रीडिंग सदैव प्रिण्ट कॉपी के द्वारा करना चाहिए न कि कम्प्यूटर स्क्रीन पर सीधे तौर पर करना चाहिए।
- अपने पहले ड्राफ्ट को लिखने के पश्चात ही प्रूफ रीडिंग करना चाहिए।
- प्रूफ रीडिंग हेतु प्रिण्ट कॉपी को दोहरे स्पेस में निकालना चाहिए जिससे कि शब्द आसानी से पढ़ने में आ सकें तथा दोहरे स्पेस में गल्तियों के सुधार को लिखने के लिए आवश्यक स्थान मिल जाता है।
- प्रूफ रीडिंग के लिए पर्याप्त समय देना आवश्यक है। जल्दबाजी में की गयी प्रूफ रीडिंग अप्रभावी एवं त्रुटिपूर्ण सम्प्रेषण का कारण बन सकती है।
- प्रूफ रीडिंग करते समय संदेश को जोर से पढ़ने पर गल्तियों का एहसास जल्दी होता है।
- प्रूफ रीडिंग में अन्तिम पद में इस बात पर जोर दिया जाना चाहिये कि जो भी शीर्षक, नाम या अंक लेख या संदेश में प्रयोग किये गये हों वे सही हों। नामों को विशेषतः दोबारा चेक कर लेना चाहिए ताकि नाम गलत न हो।

यद्यपि व्यावसायिक संदेश की प्रूफ रीडिंग में समय तो लगता है परन्तु इसका अपना महत्व हैं। आप जो भी संदेश किसी व्यक्ति या संगठन को अपनी तरफ से भेजते हैं वह आपकी कम्पनी की प्रतिष्ठा को बना या बिगाड़ सकता है। अतः प्रूफ रीडिंग एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया होती है।

1.4 व्यावसायिक पत्र के सामान्य भाग

एक व्यावसायिक पत्र के लेखन में पूर्णता लाने के लिए यथास्थिति निम्नांकित भागों का होना आवश्यक होता हैं

(क) शीर्षक - शीर्षक के अन्तर्गत प्रेषक/लेखक का पता तथा पत्र लिखने की दिनांक आ सकते हैं । शीर्षक में लेटर हेड के मुख्य भाग/ संरचना के अतिरिक्त केवल दिनांक ही शामिल करना चाहिए तथा लेखक का नाम नही आना चाहिए।

(ख) आन्तरिक पता - आन्तरिक पते में ग्राही का नाम तथा पता लिखा जाता है। जिससे कि यह साफ हो जाए कि पत्र किसके लिए लिखा गया है तथा ग्राही को प्राप्त न होने की दशा में उस पत्र का क्या करना है।ग्राही के नाम तथा पते को लिखने में बहुत सावधानी बरतनी चाहिए ताकि कोई गलती न हो सके।

(ग) सम्बोधन शब्द :- जब हम पत्र में किसी व्यक्ति को किसी शब्द के द्वारा सम्बोधित करते हैं जैसे कि 'प्रिय श्रीमान जी' या 'आदरणीय ग्राहक' या 'आदरणीय' आदि तो इस प्रकार के सम्बोधन शब्दों को उल्टे कामा का प्रयोग करना चाहिए। यदि आप अपने मित्र को पत्र लिखते हैं तो कॉमा का प्रयोग नहीं भी कर सकते हैं। ग्राही के लिंग के बारे में पता न होने पर 'आदरणीय/अदरणीया' या 'प्रिय मित्रों' आदि सम्बोधनों का प्रयोग कर सकते हैं।

(घ) विषय अथवा सन्दर्भ - विषय के अन्तर्गत पत्र का मुख्य विषय एक या दो पंक्तियों में लिखा जाता है। सन्दर्भ के अन्तर्गत यदि पहले भी कोई पत्राचार हुआ हो तो उस पत्रांक संख्या या विषय का उल्लेख करते हैं । कभी कभी पत्र में विषय एवं सन्दर्भ दोनों भी यथास्थिति प्रयोग किये जा सकते हैं।

(ङ) पत्र का मुख्य भाग - किसी भी पत्र के मुख्य भाग में पत्र का मुख्य विषय लिखा जाता है। अर्थात यह पत्र का सबसे अर्थपूर्ण और आवश्यक भाग होता है। प्रायः यह भाग संबोधन शब्द एवं पूरक समाप्ति के मध्य होता है।

(च) पूरक समापन - पूरक समापन वे शब्द होते हैं जो किसी व्यावसायिक पत्र में अन्त होने का सूचक है तथा लेखक को दर्शाते हैं। जैसे कि 'तुम्हारा' , 'आपका आज्ञाकारी', 'भवदीय' आदि। इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग अवश्य करना चाहिए।

(छ) संलग्नक - यदि व्यावसायिक पत्र के साथ कुछ आवश्यक पत्र या दस्तावेज भेजने हों तो उनको संलग्नक में उल्लिखित कर देते हैं। इसके द्वारा पाठक को आवश्यक संलग्नक के बारे में ज्ञान हो जाता है।

(ज) प्रतिलिपि - जब पत्र की प्रतिलिपि किसी अन्य अधिकारी या व्यक्ति को भेजनी हो तो प्रतिलिपि के अन्तर्गत उस व्यक्ति विशेष का पद एवं विभाग लिखा जाता है ताकि पाठक को पता रहे कि अन्य आवश्यक विभाग या व्यक्ति को इस पत्र की प्रतिलिपि प्रेषित की गई है या नहीं।

20 जून 2010 388 एल्गिन सड़क इलाहाबाद, उ.प्र.	शीर्षक - दिनांक एवं प्रेषक का पता
अनन्त नारायण चीफ एक्जीक्यूटिव ऑफिसर पैनारोमा इण्डिया मुम्बई, भारत	आन्तरिक पता- ग्राही का पता एवं नाम
'प्रिय उपभोक्ता'	सम्बोधन शब्द
विषय- आपके शिकायती पत्र दिनांक 1 मई 2010 के सन्दर्भ में,	विषय/सन्दर्भ

आपको सूचित करना चाहूँगा कि हमारी कम्पनी के उत्पाद के प्रयोग करने में आपको जो परेशानी हुई उसके लिए हम क्षमा चाहते हैं परन्तु आपको एक दूसरा नया उत्पाद एक माह के अन्दर आपके पते पर भेज दिया जाएगा। आशा है आप हमारी कम्पनी से भविष्य में भी जुड़े रहेंगे। — पत्र का मुख्य भाग

धन्यवाद !

भवदीय, — पूरक बन्द

हस्ताक्षर

संलग्नकः
(1) शिकायती पत्र
(2) नये उत्पाद सम्बन्धी सूचना — संलग्नक

प्रतिलिपि
(1) मानव संसाधन प्रबन्धक - पैनारोमा इण्डिया — प्रतिलिपि
(2) उत्पादन प्रबन्धक पैनारोमा इण्डिया

1.6 व्यावसायिक पत्रों के प्रकार

निम्न प्रकार के व्यावसायिक पत्र हो सकते हैं :

1.6.1 दैनिक पत्र

दैनिक पत्र वे होते हैं जो किसी भी संगठन में प्रायः रोजमर्रा के कार्य को करने में प्रयोग किये जाते हैं । इस प्रकार के पत्रों में प्रायः तीन भाग- प्रारम्भिक भाग, मध्य भाग तथा अन्तिम भाग हो सकते हैं।

प्रारम्भिक भाग में जो सम्प्रेषण हमें हो चुका होता है उसके बारे में सन्दर्भ उल्लिखित होता है। अधिकांश दैनिक पत्र पूर्व में किये गये सम्प्रेषण का सन्दर्भ रखते हैं। उदाहरणार्थ, आपके 12 नवम्बर 2009 के पत्र में पूछी गयी सूचना के सन्दर्भ में निम्नांकित तथ्य प्रस्तुत हैं -

मध्य भाग में पत्र का पूर्ण विवरण दिया जाता है तथा अन्त भाग में कुछ पूरक शब्दों के अतिरिक्त कुछ भावनात्मक वाक्यों का प्रयोग किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, आपका भविष्य उज्जवल हो, कम्पनी के साथ आप खुश रहेंगे ऐसी हमारी कामना है, आदि।

1.6.2 नौकरी के आवेदन के लिए कवरिंग पत्र

किसी भी नौकरी में चयन के लिए आवेदन करने पर कवरिंग पत्र पहला चरण होता है। क्योंकि इसी के द्वारा कोई भी अभ्यर्थी किसी कार्य या नौकरी के लिए न केवल आपना आवेदन प्रस्तुत करता है अपितु अपनी योग्यता को भी प्रार्थना के रूप में प्रदर्शित करता है। चूँकि आवेदन पत्र के द्वारा ही अभ्यर्थी नियोक्ता पर अपना प्रथम प्रभाव डालता है अतः इसे अत्यन्त सावधानी से लिखना चाहिए। प्रायः इस प्रार्थना पत्र / आवेदन के साथ अभ्यर्थी का बायोडाटा भी संलग्न रहता है।

1.6.3 धन्यवाद/अनुवर्तन पत्र

प्रायः कम्पनियाँ उत्पाद या सेवा को प्रयोग के लिए उपभोक्ताओं को धन्यवाद पत्र लिखती है। या नौकरी में सफलता पाने पर अभ्यर्थी भी नियोक्ता को धन्यवाद पत्र लिख सकता है। इसी प्रकार जब किसी संगठन में कोई अधिकारी या कर्मचारी किसी विशिष्ट कार्य या प्रोजेक्ट में सम्मिलित होते हैं तो एक चरण का कार्य सम्पादन होने पर उस कार्य के अनुवर्तन हेतु भी पत्र लिखा जाता है। जिससे कि कार्य को पूर्ण होने तक व्यक्ति की जिम्मेदारी बनी रहें।

1.6.4 साक्षात्कार अनुवर्तन पत्र

साक्षात्कार अनुवर्तन पत्र के द्वारा अभ्यर्थी अपनी स्थिति के बारे में नियोक्ता को अवगत कराता है। उदाहरणार्थ, ''मैं आपकी कम्पनी में नौकरी का अवसर मिलने पर अत्यन्त प्रसन्नता प्रकट करते हुए यह कहना चाहता हूँ कि मैं 1 जून 2010 से अपना कार्य प्रारम्भ करना चाहूँगा तथा मैं आपसे रू. 50,000/- (पचास हजार मात्र) प्रतिमाह तथा 5प्रतिशत के कमीशन की अपेक्षा रखता हूँ। मैं अपने कार्यक्षेत्र जो कि सम्पूर्ण उत्तर

प्रदेश है, को आपके निर्देशन में अच्छे से प्रबन्ध करने का प्रयत्न करूँगा। आपके द्वारा मुझे अवसर दिये जाने पर मैं आपको धन्यवाद देता हूँ।''

1.6.5 त्याग पत्र

प्रायः लोग त्याग पत्र को बिना अच्छी भाषा का प्रयोग करते हुए लिखते है। । त्याग पत्र को लिखने में भी उसमें प्रयुक्त होने वाले शब्दों का अत्यन्त महत्व होता है।

उदाहरणार्थ, ''आपसे अनुरोध है कि मैं अपने पद (----------) से आज दिनांक 30 अप्रैल 2010 को त्याग रहा हूँ । कृपया मेरा त्याग पत्र स्वीकार करें। मेरा यह त्याग पत्र अगले 2 सप्ताह का नोटिस है। मै अपने इस नोटिस काल में नवागन्तुक को प्रशिक्षण देने को सहर्षता से स्वीकार करूँगा।

आपके संगठन में मैंने आज तक जो भी उन्नति तथा कार्य करने के अवसर प्राप्त किये उसके लिए मैं प्रबन्धन का सदैव अभारी रहूँगा। धन्यवाद !''

1.6.6 पूछताछ, शिकायती या समायोजन पत्र

प्रायः जब कभी हमें किसी विभाग या संगठन से कोई जानकारी चाहिए होती है तो हम पूछ ताछ पत्र के माध्यम से जानकारी प्राप्त करते हैं। पूछताछ पत्रों को प्रयोग करने से पूर्व हमें यह ध्यान रखना आवश्यक है कि हम उचित मात्र में ही जानकारी प्राप्त करें तथा यह जानकारी ऐसी हो जो कि विभाग/संगठन आसानी से उपलब्ध करा पाए।

इसी प्रकार प्रायः कभी कभी किसी उत्पाद या सेवा के उपभोग से यदि हमें असन्तुष्टि होती है तो हम शिकायती पत्र के माध्यम से उस संगठन/विभाग में अपनी असंतुष्टि को व्यक्त कर सकते हैं। इसी प्रकार से कभी कभी यदि हम किसी सरकारी या गैर सरकारी या निजी संगठन में कार्य करते हैं तो विभिन्न प्रकार के आर्थिक या सामान्य लेन देन को समायोजन पत्रों के द्वारा समायोजित कर सकते है।

1.6.7 स्वीकृति पत्र

ये वे पत्र होते हैं जिनके द्वारा हम किसी व्यक्ति को किसी बात के लिए राजी करते हैं । यह पत्र दो प्रकार के हो सकते हैं। एक तो वे जिसमें पाठक के द्वारा प्रार्थना को स्वीकार कर लिया जाता है तथा दूसरे वे जिसमें पाठक के द्वारा प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया जाता है।

अवगत है कि दूसरी श्रेणी वाले पत्र अत्यन्त कठिन होते हैं जिसमें पाठक आपकी प्रार्थना को अस्वीकार कर देते है। यदि आपको लगता है कि पाठक आपकी प्रार्थना को स्वीकार कर लेंगे तो नीचे की पंक्ति में प्रार्थना करते हुए पत्र में अन्य विवरणों का उल्लेख

करना चाहिए। इस प्रकार के पत्रों को हम सिफारिशी पत्रों के द्वारा उदाहरण दे सकते है। इस प्रकार के पत्रों में आप सिफारिश करने वाले व्यक्ति / पाठक को कम्पनी का नाम, कम्पनी में व्यक्ति का नाम तथा पद लिखने के साथ जिस कार्य को करने के लिए सिफारिश करनी होती उसको विषय में इंगित्त करते हैं। इस प्रकार के पत्रों में लेखक तथा लेखक के संगठन की एक अच्छी छवि के साथ साथ अच्छे सम्बन्धों का प्रतीक होना भी आवश्यक है।

जब आपको यह भय हो कि पाठक आपकी प्रार्थना को नकार देंगे तो आपके लिए यह आवश्यक है कि आप संयम रखें तथा उसे एक निश्चित अन्तराल के बाद प्रेषित करते रहें।

1.6 सारांश

यद्यपि आज के युग में लिखित सम्प्रेषण सूचना प्रौद्योगिकी पर बहुत ही ज्यादा निर्भर है परन्तु फिर भी उसमें लिखा जाने वाला सार पारम्परिक लेखन पर ही निर्भर करता है। जब हम विभिन्न व्यावसायिक संदेशों को लिखते हैं तो हमारी सोच तथा विधाएं उन अन्देशों के अनुरूप भिन्न होती हैं।

सकारात्मक या उदासीन व्यवसायिक संदेशों के लिए जहाँ हम सीधी भाषा का प्रयोग करते हैं, वहीं ऋणात्मक व्यावसायिक संदेशों के लिए गैर सीधी भाषा का प्रयोग करना चाहिए।

व्यावसायिक संदेश को लिखने के लिए पाँचों चरणों का विशिष्ट ध्यान रखना चाहिए।

व्यावसायिक क्रिया कलापों में हमें विभिन्न प्रकार के आशय के पत्रों को लिखना होता है जो कि साधारण जीवन में भी कहीं न कहीं कार्य में आ सकते हैं। अतः उनका ज्ञान हमारे सम्प्रेषण को अत्यन्त प्रभावी बनाता है।

1.7 महत्वपूर्ण शब्द

व्यावसायिक संदेश, सकारात्मक संदेश, नकारात्मक संदेश, उदासीन संदेश, सीधी विधा, गैर सीधी विधा, पूर्वलेखन, रूपरेखा तैयार करना, पुनर्लेखन, ढाँचा निर्माण, प्रूफ रीडिंग आदि।

1.8 स्वपरख प्रश्न

प्र.1 लिखित सम्प्रेषण की व्यावसायिक संगठनों में क्या आवश्यकता है? कृपया उल्लेख करें।

प्र.2 व्यवसायिक संदेश को लिखने की प्रक्रिया का सोदाहरण वर्णन करें।

प्र.3 व्यावसायिक पत्र कितने प्रकार के हो सकते हैं? कृपया उदाहरण सहित वर्णन करें।

1.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्त्रोत

- लीश्कर, रेमण्ड वी., जौंन डी. पेतिट एण्ड मैरी ई. फ्लैटली, लीश्करस बेसिक बिजनेस कम्यूनिकेशन, आठवां एडीशन, टाटा मैक्ग्राहिल, नई दिल्ली।
- पी. प्रसाद, कम्यूनिकेशन स्किल्स, एस.के.कटारिया एण्ड सन्स।
- मीनाक्षी रमन, प्रकाश सिंह, बिजनेस कम्यूनिकेशन्स, आक्सफोर्ड पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।
- मधुकर आर.के. बिजनेस कम्यूनिकेशन्स एण्ड कस्टमर रिलेशन्स, विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई - 2 : श्रवण कौशल

इकाई की रूपरेखा-

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 श्रवण की प्रकृति

2.3 श्रवण के प्रकार

2.4 प्रभावी श्रवण की रणनीतियाँ

2.5 श्रवण में बाधाएँ

2.6 सारांश

2.7 महत्वपूर्ण शब्द

2.8 स्व-परख प्रश्न

2.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

2.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सफल होंगें :

- सम्प्रेषण में श्रवण कौशल के महत्व को परखने में,
- श्रवण प्रकृतियों के अनुसार श्रवण क्षमता विकसित करने में, तथा
- श्रवण क्षमता को विकसित करने हेतु प्रभावी तकनीकों को समझने में।

2.1 प्रस्तावना

किसी भी संस्था में एक व्यक्ति को लिखने पढ़ने से ज्यादा कहने एवं सुनने के द्वारा सम्प्रेषण करना पड़ता है। एक व्यापारिक प्रतिष्ठान में किसी भी व्यक्ति को अधिकांशतः अनौपचारिक सम्प्रेषण में ही लिप्त होना है तथा इस अनौपचारिक सम्प्रेषण में श्रवण एक अत्यन्त महत्वपूर्ण प्रक्रिया है तथा एक कौशल भी है। यदि श्रवण कौशल को हम समझने का प्रयत्न करें तो यह व्यक्ति की श्रवण कुशलता पर ही निर्भर करेगा कि उसने किसी बात को अथवा संदेश को सही रूप में समझा है या नहीं। और यदि संदेश को सही प्रकार से नहीं समझा गया तो वह व्यक्ति गलत निर्णय का शिकार हो सकता है।

साथ ही इससे संगठन की कुशलता एवं सफलता दोनों पर ही विपरीत प्रभाव पड़ सकता है। श्रवण कुशलता के महत्व को हम तीन प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं। सर्वप्रथम तथ्य यह है कि हम मौखिक सम्प्रेषण की कुशलता को बोलने, पढ़ने एवं लिखने के द्वारा ही अर्जित कर सकते हैं और शब्दों के उच्चारण, उनके उचित अर्थ को समझने में श्रवण कुशलता की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। द्वितीयतः हमारी श्रवण क्षमता 45 प्रतिशत तक हमारी मौखिक सम्प्रेषण समय को प्रभावित करती है। तृतीयतः किसी भी व्यापार में श्रवण का एक महत्वपूर्ण योगदान होता है। हम सुनकर ही बड़े-बड़े उद्यमियों अथवा प्रबन्धन गुरूओं की बातों को समझने के अगले चरण में ले जाने में सक्षम होते है तथा यही हमें नयी एवं धनात्मक सोच पैदा करने में सहायक होते हैं। एक और महत्वपूर्ण बात जो किसी भी संगठन के कर्मचारियों को भाती है वह यह भी है कि उनके प्रबन्धक या सुपरवाइजर उनकी बातों को सुनते हैं। परन्तु श्रवण क्रिया दिखने या प्रतीत होने में जितनी आसान लगती है। उतनी है नहीं। क्यों जब कभी हम सुनते हैं तो उसी समय हमारे मस्तिष्क में एक समानान्तर विचार प्रक्रिया प्रारम्भ हो जाती है। इसी समय हम भी अपने अपने प्रकार से बोलने वाले की बातों को अपने परिपेक्ष में सोचने लगते हैं जो हमको एक नयी दुनिया में या अपनी दुनिया में सोचने पर मजबूर कर देती है तथा तुरन्त ही हमारे सुनने की प्रक्रिया प्रभावित होती है और जब तक हमें ध्यान आता है तब तक एक अच्छा अन्तराल आ चुका होता है। अर्थात श्रवण एक ध्यान लगाने की भी प्रक्रिया है अर्थात जब भी हम सुन रहे होते हैं तो हमें अपने ध्यान को न केवल श्रवण के लिए केन्द्रित करना होता है अपितु एक समानान्तर सोच विचार की प्रक्रिया को भी नियन्त्रित ढंग से चलने देते रहना होता हैं ताकि बोलने वाले की बातों का हम विश्लेषण भी कर सकें। यदि हम चाहें कि पहले केवल श्रवण ही करेंगे तथा बाद में उन बातों का विश्लेषण, तो इसके लिए श्रवण कर्ता का एक अच्छा साधक होना आवश्यक हो जो कुछ समय पूर्व में सुनी गयी बातों को संग्रहीत कर सके तथा तत्पश्चात उनका विश्लेषण कर सके और उनको किसी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में रिकार्ड भी कर सके जो कि उसके स्वयं के विचारों को बनाने में सक्षम हों।

2.2 श्रवण की प्रकृति

प्रायः हम यह सोचते हैं कि श्रवण शायद केवल ध्वनि को सुनने या महसूस करने की एक साधारण प्रक्रिया होती है। परन्तु श्रवण प्रक्रिया में केवल शब्दों या ध्वनियों को कानों के द्वारा महसूस नहीं किया जाता है अपितु श्रवण प्रक्रिया के अन्तर्गत हम किसी व्यक्ति के द्वारा बोले गये शब्दों के अर्थ को एक निश्चित परिस्थिति के अनुसार समझते

हैं तथा उसी के अनुसार व्यक्ति को सीख मिलती है। उदाहरणार्थ, यदि हम कक्षा में बैठकर ध्यान पूर्वक अपने शिक्षक के द्वारा दिये गये व्याख्यान को सुनते हैं तो हम तुरन्त ही उस वक्तव्य के मुख्य शब्दों को सुनकर उसके बारे में एक समानान्तर सोचने की प्रक्रिया को प्रारम्भ करते हैं तथा यदि हमें शिक्षक के द्वारा दिये गये व्याख्यान में तथा हमारी समानान्तर सोच में कुछ प्रासांगिकता समझ आती है तो हमारे अन्दर उस विषय की अच्छी पकड़ हो जाती है। और यदि कहीं पर कुछ अन्तर या विरोधाभास होता है तो तुरन्त हमारे मन में कुछ प्रश्न उत्पन्न होते हैं जिनका समाधान हम अपने शिक्षक से पूछ कर करते हैं। अर्थात कहने का तात्पर्य यह है कि श्रवण प्रक्रिया के अन्तर्गत केवल भौतिक प्रक्रिया ही नहीं होती है वरन यह एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें हमारा मस्तिष्क अपने पूर्व के अनुभवों तथा नयी सुनी गयी बातों को एक दूसरे के सापेक्ष रखकर एक निर्णय लेने में सक्षम होता है जो पुनः हमें नयी सीखने की क्षमता को बढ़ाने में सहायक होता है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि श्रवण प्रक्रिया में छानने, महसूस करने एवं याद रखने की प्रक्रिया भी शामिल होती है।

श्रवण = महसूस करना + छानना + याद रखना

(Listening)= Sensing + filtering + (remembering)

महसूस करना (Sensing): - अपने आस पास के वातावरण में शब्दों को महसूस करने में दो मुख्य कारक होते हैं। प्रथमतया, ध्वनि को सुनने में हमारी क्षमता अर्थात हमारे कान किसी ध्वनि को कितनी अच्छी तरह से सुन सकते हैं। हम सभी को विदित है कि हमारी सुनने की क्षमताएं अलग अलग होती हैं, यद्यपि आज के युग में मशीनों के माध्यम से सुनने की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है।द्वितीयतः हमारे सुनने की तत्परता अथवा सावधानी । यह प्रायः हमारे मानसिक ध्यान पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ, यदि हम किसी कार्यशाला में किसी प्रवक्ता को सुनते हैं और हम अपनी निजी जिन्दगी में किसी बात को लेकर परेशान होते हैं तो वक्ता के द्वारा कितनी भी अच्छी बात क्यों न बताई जा रही हो परन्तु हमारी मानसिक स्थिति उस बात को समझने के लिए बिलकुल भी उपयुक्त नहीं होती है या हम चाह कर भी उस ओर ध्यान नहीं लगा पाते हैं।

इसी प्रकार यदि हम किसी व्याख्यान को सुन रहे हैं तो एक निश्चित अवधि में शब्दों को महसूस करने की हमारी क्षमता भिन्न भिन्न समय पर भिन्न भिन्न होगी। यह इस पर भी निर्भर करेगा कि हम अपने मस्तिष्क को कितनी सावधानी से शब्दों को महसूस करने के लिए केन्द्रित कर पाते हैं। यदि अपनी कक्षा में आप अपने शिक्षक के द्वारा समझाए जा रहे व्याख्यान को बहुत ही ध्यान लगाकर एवं मस्तिष्क केन्द्रित करके सुनते

हैं तो वो अध्याय आपको एक बार पढ़ने पर ही कंठस्थ हो जाता है क्योंकि आपके द्वारा श्रवण प्रक्रिया के शब्द, पठन प्रक्रिया के शब्दों को महसूस करने में समानता रखते हैं।

छानना (Filtering) : - श्रवण में छानने का तात्पर्य सुने गये शब्दों के अर्थ अथवा मतलब को समझने से होता है। छानने की प्रक्रिया मूल रूप से हमारे ज्ञान कोष में उपलब्ध शब्दों पर निर्भर करता है। उदाहरण के रूप में अंग्रेजी के तीन शब्दों,Adapt, adept एवं Adopt का अर्थ अलग अलग होता है। Adapt का अर्थ वातावरण के अनुसार बदलने या अनुकूलन से है, adept का अर्थ कुशलता या निपुणता से है तथा Adopt का तात्पर्य किसी को ग्रहण या अपनाने से होता है । परन्तु यदि हमें इन तीनों के अर्थ नहीं पता हों तो वक्ता के द्वारा बोले गये किसी भी शब्द का हमें एक ही अर्थ प्रतीत होगा। अर्थात शब्दों को छानने की प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ेगा। और यदि हमें तीनों शब्दों के अर्थ पता भी हों तो प्रभावी श्रवण के लिए हमें बहुत ध्यान लगाकर सुनने पर जोर देना चाहिए।

3. **याद रखना (Remembering):** - श्रवणोपरान्त हम किसी भी बात को याद रख पाते हैं या नहीं यह एक तीसरी महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। दुर्भाग्य से हम प्रायः सुनी हुयी बातों में से बहुत कम याद रख पाते है।। प्रायः हम कुछ बातों को तो सुनने के तुरन्त बाद ही भूल जाते हैं और कुछ बातों को कुछ समय पश्चात। बहुत कम बाते ऐसी होती हैं जिन्हें हम दीर्घकाल तक याद रख पाते हैं। कुछ शोध के द्वारा यह पाया गया है कि दो दिनों के बाद हम किसी वक्तव्य का एक चौथाई भाग ही याद रख पाते हैं। यदि हमने कभी इस बात पर गौर किया हो तो हम सहमत होंगे कि हमारी स्मरण शक्ति केवल उन्हीं बातों की अधिक होती है जिनके प्रति हम समानान्तर सोच प्रक्रिया में सम्मिलित होते हैं। यदि हम वक्ता के वक्तव्य को अपनी सोच से मिला कर सोचते हैं तो शब्दों एवं विचारों का विश्लेषण उसी दाम से होने लगता है और इस प्रकार की बातों को हम अधिक समय तक स्मरण कर सकते हैं अन्यथा नहीं। इस प्रकार श्रवण की प्रक्रिया को हम उसकी प्रकृति के आधार पर निम्न प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं :

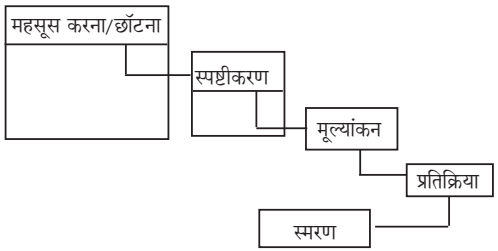

2.3 श्रवण के प्रकार

श्रवण की प्रकृति के अनुसार श्रवण के सभी प्रकारों को समझने के लिए कुछ विशिष्ट कुशलताओं को जानने की आवश्यकता होती है। इसके द्वारा हम अपने श्रवण व्यवहार को बेहतर करने के लिए कुछ मुख्य श्रवण कुशलताओं का अध्ययन करेंगें। इन निर्देशों को समझने से पूर्व यह आवश्यक है कि हम विभिन्न प्रकार के श्रवण कलाओं को जाने।

(क) सूचनात्मक श्रवण - सूचनात्मक श्रवण से हमारा तात्पर्य उस श्रवण से है जिसके द्वारा हम अधिकतम सूचनाओं का संग्रह करने के लिए संदेश को सुनते हैं। प्रायः हम जीवन के हर क्षेत्र में श्रवण के द्वारा सम्बन्धित जानकारी हासिल करने का प्रयत्न करते हैं। यदि हम समाचार सुनते हैं तो अपने आसपास के वातावरण के बारे में तथा सामाजिक गतिविधियों के बारे में जानकारी प्राप्त करते हैं। जब हम अपने शिक्षक का व्याख्यान कक्षा में सुनते हैं तो हम उस विषय से सम्बन्धित सूचनाएं तथा जानकारी हासिल करने का प्रयास करते हैं। कुछ विद्यार्थी एक बार में ही सब कुछ समझ पाते हैं क्योकि वे बड़े एकाग्र मन से श्रवण करते हैं जबकि कुछ व्यक्ति ध्यान से कुछ सुन नहीं पाते हैं। किसी भी स्थिति में श्रोता के लिए यह आवश्यक है कि वह संदेश पर अत्यधिक ध्यान दें तथा संदेश दाता के स्त्रोत को पहचानें। सूचनात्मक श्रवण से सम्बन्धित निम्नांकित तीन मुख्य घटक होते हैंः

(1) शब्द कोश

(2) ध्यान/एकाग्रता

(3) स्मरण शक्ति

यद्यपि शब्दकोश एवं समझने की कुशलता के मध्य सम्बन्ध को बहुत प्रभावी रूप से दर्शाया नहीं जा सका है फिर भी यह बात तय है कि यदि आपके शब्द कोष की क्षमता बढ़ती है तो आपके समझने की शक्ति भी बढ़ती है। क्योंकि प्रायः लोग एक शब्द के स्थान पर दूसरे समान अर्थ परन्तु भिन्न भाव वाले शब्द का प्रयोग करते हैं। उदाहरणार्थ अंग्रेजी में adjust एवं Accomodate दो ऐसे शब्द हैं जिनका अर्थ समायोजित करने से होता है। परन्तु Accomodate शब्द का सही अर्थ स्थान को सामन्जस्य के लिए किया जाता है जबकि Adjust का प्रयोग साधारणतया किया जाता है। अर्थात कभी कभी आप के शब्द कोष के ज्ञान में कमी होने पर आपकी श्रवण क्षमता मे कमी आ सकती

है। एकाग्रता की भी श्रवण कुशलता की वृद्धि में एक अहम भूमिका होती है। यदि आप सुनते समय अपने मन को एकाग्र नहीं करते हैं तो धीरे धीरे आपका ध्यान उस विषय से भटक कर कहीं और चला जाता है और स्वाभाविक रूप से आप गहन रूप से इस अलग विषय में खो जाते हैं । इस कारण इस बीच जो भी संवाद होता है वह आप किसी भी तरह सुन नहीं पाते हैं तथा आपके श्रवण में कमी आती है। यदि आपको अपने श्रवण की क्षमता एवं कुशलता को बढ़ाना है तो उस विषय को सुनने के लिए आपको अपने मन में एकाग्रता लानी ही होगी तथा अपने मन को दूसरे विषय पर भटकने से बचानाहोगा तथा नियन्त्रण रखना होगा । अतः श्रवण कुशलता को बढ़ाने के लिए एकाग्रता की आवश्यकता होती है तथा एकाग्रता के लिए अभिप्रेरण, स्वीकृति तथा जिम्मेदारी की आवश्यकता होती है। श्रवण कुशलता को बढ़ाने के लिए स्मरण शक्ति की भी अत्यन्त मतत्वपूर्ण भूमिका है। प्रायः जब कोई भी बात या विषय सुनते हैं तो उस विषय की स्वीकृति हमारे पूर्व में स्मरित बातों के आधार पर ही होती है। अर्थात यदि हमें, हमारे द्वारा पूर्व में ज्ञानार्पित बातों में तथा श्रवण की जा रही बातों के बीच समानता मिलती है तो हमारी समझ उस विषय के लिए बढ़ जाती है। परन्तु यदि हमारी कमजोर स्मरण शक्ति के कारण स्मरित बातों/ज्ञान के आधार पर विषमता मिलती है या बात नयी लगती है तो इसका हमारी श्रवण कुशलता पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। स्मरण शक्ति हमारी श्रवण क्षमताओं को निम्न तीन प्रकार से प्रभावित करती है।

1. स्मरण के बिना हम किसी प्रकार के ज्ञानकोश को विकसित नहीं कर सकते हैं तथा यह हमारा ज्ञान कोश ही होता है जिसके आधार पर हम नये विचारों की पुष्टि करते हुए अपने श्रवण कुशलता में वृद्धि कर सकते हैं। यदि हमारे पास पूर्व के अनुभव या ज्ञानकोश न हो तो विषय की समझ हमारे लिए कठिन हो सकती है।

2. जब तक आपके पास अपने पुराने अनुभव नहीं होंगे तब तक आप नये विषयों की सार्थकता को सिद्ध नहीं कर पायेंगे अर्थात जीवन में आने वाली समस्याओं का कोई भी व्यक्ति अपने पूर्व में अर्जित किये गये ज्ञान एवं अनुभवों को द्वारा ही निवारण कर सकता है जिसके लिए स्मरण शक्ति का होना अत्यन्त आवश्यक होता है।

3. यदि आपके स्मरण में कोई भी सिद्धान्त या विचार नहीं है तो आप किसी भी विषय को विश्लेषित नहीं कर सकते हैं, यह आपको समझने की कुशलता को प्रभावित करेगा।

(ख) एकाग्र श्रवण - एकाग्र श्रवण के अन्तर्गत व्यक्ति बहुत ध्यान पूर्वक बातों को

सुनता है तथा उनको याद करने का भी प्रयास करता है। इसके अतिरिक्त एकाग्र श्रोताओं का एक निर्धारित लक्ष्य होता है जिसके अन्तर्गत वे समूह में या संवाद के द्वारा एक धनात्मक प्रभाव छोड़ना चाहते हैं, अपने सम्बन्धों को बढ़ाना चाहते हैं या वे ये प्रदर्शित करते हैं कि वे जो भी सुन रहे हैं इसकी परवाह उनको है। सम्प्रेषण शोध कर्ताओं के द्वारा निम्नांकित तीन श्रवण कुशलताओं को पहचाना गया है जिनका विवरण निम्न प्रकार है:

(1) एकाग्र कुशलताएं

(क) सम्मिलित होने की शारीरिक भंगिमा - जब हम वक्ता को ध्यानपूर्वक सुनते हैं तो नैसर्गिक रूप से हमारी शारीरिक भंगिमा इस प्रकार होगी कि हमारे शरीर का झुकाव उस वक्ता की ओर होगा।

(ख) उपयुक्त शारीरिक गति या इशारा - समय समय पर हम वक्ता के विचारों के प्रति अपना सिर हिला कर या अपने चेहरे के भावों से स्वीकृति या समानता या असमानता प्रकट करते हैं।

(ग) आँखों का सम्पर्क - हमारी आँखों का सम्पर्क सदैव ही वक्ता की आँखों से बना रहेगा या हम सदैव ही वक्ता के चेहरे की ओर देखते रहेंगे तथा हमारी आँखों के भाव वक्ता के विचारों के समान या विपरीत प्रतिक्रिया व्यक्त करेंगें।

(घ) विचलित न करने वाली गतिविधियाँ - एकाग्र श्रोता को किसी भी ऐसी गतिविधि से बचना चाहिए जो कि वक्ता का ध्यान विचलित करे या ध्यान हटाए।

(2) अनुसरण कुशलताएँ

अनुसरण कुशलताओं से हमारा तात्पर्य उस व्यवहार से है जो कि वक्ता को अपना वक्तव्य देने के लिए प्रोत्साहित करे तथा साथ ही श्रोता एवं वक्ता की रूचि बनी रहे।जैसे कि हामी भरना या अन्य सम्बोधन शब्दों का प्रयोग करना। इसके अतिरिक्त कभी कभी खुले प्रश्न पूछना तथा एक समय पर एक ही प्रश्न पूछना परन्तु इतने ज्यादा प्रश्न न पूछना कि वक्ता का ध्यान मुख्य विषय से भंग हो जाए। अच्छी श्रवण कुशलता को विकसित करने के लिए यह आवश्यक है कि शान्त रहते हुए अधिक से अधिक एकाग्रता पूर्वक विचारों को सुना जाये।

(3) परावर्तित कुशलताएँ

एक अच्छे श्रोता के लिए यह आवश्यक है कि हम मन ही मन में वक्ता के द्वारा दिये गये विचार के समानान्तर वाक्य बना कर उसे उदाहरण के रूप में स्थापित करें।

उदाहरणार्थ ''हाँ इस स्थिति में एक बार मेरे साथ भी ऐसा हुआ था।''

इसके अतिरिक्त यदि हम वक्ता के विचारों से सहमत होते हैं तो अपने भावों के द्वारा उसे व्यक्त करना चाहिए। इस प्रकार एक अच्छे श्रोता के लिए आवश्यक होता है कि प्रत्येक विचार रूपी क्रिया के सापेक्ष उसकी अपनी समानान्तर विचार रूपी प्रतिक्रिया होनी चाहिए।

(4) सम्बन्ध श्रवण

सम्बन्ध श्रवण का उद्देश्य प्रायः या तो व्यक्तियों की सहायता के लिए होता है या दो व्यक्तियों के मध्य सम्बन्धों को सुधारने में होता है। उपचारिक श्रवण भी एक विशिष्ट प्रकार की श्रवण कुशलता होती है जो एक प्रकार का सम्बन्ध श्रवण होता है। उपचारिक श्रवण का प्रयोग प्रायः परामर्शदाताओं के द्वारा, या चिकित्सकीय व्यक्तियों के द्वारा किसी व्यक्ति या परेशान व्यक्ति के उपचार के लिए किया जाता है। सम्बन्ध श्रवण की विशेषता यह होती है कि यह दूसरे व्यक्ति के समझने की शक्ति एवं सूचनाओं पर निर्भर करती है। सम्बन्ध श्रवण के लिए तीन प्रकार की अभिवृत्तियों का होना आवश्यक होता है - उपस्थिति या ध्यान देना, समर्थन करना एवं सहानुभूति।

सम्बन्ध श्रवण में उपस्थिति/ ध्यान देने का अर्थ यह है कि श्रोता वक्ता पर पूर्ण रूप से ध्यान केन्द्रित करता है तथा इसके अन्तर्गत गैर शाब्दिक संकेत अत्यन्त महत्वपूर्ण होते हैं । चक्षु सम्पर्क इनमें एक अत्यन्त महत्वपूर्ण अवयव है। चक्षु सम्पर्क एंव शारीरिक भंगिमाओं के द्वारा सम्बन्ध श्रवण में यह पता चलता है कि श्रोता, वक्ता के प्रति ध्यान देता है या नहीं। वक्ता के वक्तव्य के दौरान की गयी बहुत सी प्रतिक्रियाएं ऋणात्मक या असमर्थन करती प्रतीत होती है। उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति वक्ता से बहुत अधिक प्रश्न करता है या विषय को बदलने का प्रयास करता है या बात चीत को अपने अनुसार बदलने का प्रयत्न करता है तो ये सारी गतिविधियाँ वक्ता के असमर्थन को दर्शाती है । सम्बन्ध श्रवण में एक अच्छे श्रोता को यह अच्छी तरह पता होता है कि वक्तव्य के दौरान कहाँ बोलना है और कहाँ नहीं बोलना है। एक समर्थन करने वाले श्रोता की पहचान तीन बातों से की जा सकती है अर्थात वह इस बात में विभेद कर पाता है कि कहाँ पर क्या कहना है और क्या नहीं, वक्ता की योग्यता पर पूर्ण विश्वास होता है तथा इतना धैर्य होता है कि और लोग भी अपनी बातों को वक्तव्य के दौरान रख पाएं तथा सन्तुष्ट हो पाएं।

सम्बन्ध श्रवण के अन्तर्गत वक्ता के प्रति सहानुभूति होना भी आवश्यक होता है। इसका तात्पर्य यह है कि श्रोता, वक्ता के हर दृष्टिकोण को न केवल भली-भाँति समझता

है अपितु उस दृष्टिकोण को यथासम्भव अपनाता भी है।

(5) प्रशंसनीय श्रवण

प्रशंसनीय श्रवण का तात्पर्य उस श्रवण से होता है जो हम अपने आनन्द की अनुभूति के लिए करते हैं। जैसे कि संगीत सुनना, विभिन्न कलाकारों को सुनना, पिक्चर या नाटक देखना एवं सुनना आदि। प्रशंसनीय श्रवण की गुणवत्ता मुख्य रूप से तीन कारकों पर निर्भर करती है यथा प्रस्तुतीकरण, दृष्टिकोण एवं पूर्व अनुभव । प्रशंसनीय गुणवत्ता के लिए प्रस्तुतीकरण इस लिए आवश्यक होता है क्योंकि प्रत्येक श्रोता की अपनी पसंद होती है तथा इसके अन्तर्गत वक्ता की वेषभूषा, माध्यम, भाषा इत्यादि आते हैं। इसके अतिरिक्त श्रोता या दर्शक का दृष्टिकोण भी प्रस्तुतीकरण पर ही निर्भर करता है। हमारी जो भी आशाएं होती हैं वे हमारे दृष्टिकोण पर ही निर्भर होती है तथा हमारा दृष्टिकोण ही हमारी अभिवृत्ति को निर्धारित करता है और कोई भी व्यक्ति किसी भी कार्यक्रम को अपने दृष्टिकोण एवं अभिवृत्ति के अनुरूप ही पसन्द करता है। यदि हमने अपने पूर्व के अनुभव में किसी संगीत, कार्यक्रम या नाटक आदि को पसन्द नहीं किया है तो पुनः इन कार्यक्रमों को देखने से पहले वे कई बार सोचेंगे और प्रस्तुतकर्ता को इन परिस्थितियों के लिए तैयार रहना होगा।

(6) आलोचनात्मक श्रवण

प्रायः हम अपनी कई सारी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु आलोचनात्मक श्रवण को पसंद करते हैं। राजनीतिज्ञ, मीडिया, वकील, विक्रेता, हमारी अपनी आर्थिक भावनात्मक, बौद्धिक, भौतिक एवं आध्यात्मिक आवश्यकताएँ हमें आलोचनात्मक श्रवण के लिए प्रेरित करती हैं।

(7) विभेदात्मक श्रवण

विभेदात्मक श्रवण बाकी की श्रवण श्रेणियों के लिए आधार का कार्य करता है क्योंकि इसके द्वारा ही हम श्रवण के परिणामों में विभेद कर पाते है।यदि कोई वक्ता अपने वक्तव्य के दौरान अपने बोलने के गति, या तीव्रता या पिच आदि में अन्तर लाता है तो एक सूचनात्मक श्रोता उसको बड़ी आसानी से विभेद कर लेता है। विभेदात्मक श्रवण के लिए सुनने की योग्यता, आवाज की पहचान तथा शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक संकेतों के मिश्रण का ज्ञान होना अति आवश्यक है क्योंकि इसी के बल पर श्रोता, श्रवण के परिणामों एवं गुणवत्ता में विभेद करने में सक्षम हो पाते हैं।

2.4 प्रभावी श्रवण की रणनीतियाँ

मानव मस्तिष्क के विकसित होने में श्रवण एवं दृश्य की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है एवं एक साधारण मनुष्य बातचीत के द्वारा ही अपने विचारों को एवं दृष्टिकोण को विकसित करता है। अतः यदि हम श्रवण प्रक्रिया से पूर्व ही स्वयं को सीखने की रणनीति के अनुसार नियन्त्रित करके बैठते हैं तो हम अधिकतम लाभ उठा सकते हैं। यदि आप सुनने में अत्यन्त कुशल हैं तो आपको आपकी नेतृत्व क्षमता के विकास में, टीम को संगठित करने में, सम्बन्ध बनाने आदि में महत्वपूर्ण सफलता अर्जित हो सकती है।

यदि आप निम्नांकित रणनीतिक सुझावों पर अमल करें तो श्रवण क्षमता एवं कुशलता में वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती हैः

2.4.1 बातचीत के लिए अपने लक्ष्य को निर्धारित करना

एक कुशल श्रोता बातचीत की प्रक्रिया हेतु अपनी भूमिका के बारे में अपना लक्ष्य निर्धारित कर लेते हैं तथा अपने बोलने एवं सुनने की पसंद को इन लक्ष्यों के आधार पर ही चुनते हैं। किसी व्यापारिक बातचीत के लिए निम्नांकित रणनीतियाँ हो सकती है :

(1) प्रायः हम बातचीत के दौरान कुछ सूचनाओं के आदान प्रदान में ज्यादा इच्छुक होते हैं । अतएव बातचीत के दौरान हमें किस प्रकार की सूचनाओं की आवश्यकता है इसका पूर्व आंकलन हमारे लिए लाभदायक सिद्ध हो सकता है ताकि हम उन बिन्दुओं को अवश्य शामिल कर लें।

(2) व्यापारिक बातचीत के दौरान हम यदि कार्यकारी सम्बन्धों को बनाने में सक्षम होते हैं तो ये सम्बन्ध भविष्य में हमारी व्यापारिक गतिविधियों के लिए लाभप्रद हो सकते हैं। उदाहरणार्थ , एक विक्रेता को अपने उपभोकताओं से अच्छे सम्बन्ध विकसित कर लेने चाहिए ताकि भविष्य में उनकी सहायता से व्यापार को बढ़ाया जा सके।

(3) जब कभी हम व्यापारिक बातचीत करें तो यह ध्यान रखें कि जो भी प्रस्ताव हम इस बात चीत में रखें वे अच्छा महसूस करने वाले हों तथा दूसरे की भावना एवं सम्मान का पूरा ध्यान रहे।

2.4.2 अपने विकल्पों का ज्ञान होना

जब कभी भी अप बात चीत का एक हिस्सा होते हैं तो आपके पास बोलने एवं सुनने की ही भूमिकायें हो सकती हैं। आपको अपने विकल्पों के बारे में पता होना चाहिए

अर्थात किस समय आपको बोलना है तथा किस समय आपको ध्यानपूर्वक सुनना है। यदि आप बात चीत के दौरान तीव्रता से अपने बोलने या सुनने के विकल्प को कार्यान्वित कर लेते हैं तो आप निश्चित ही इसका लाभ उठा सकते हैं।

जब कभी आप किसी व्यापारिक उद्देश्य से बात चीत के लिए या उपभोक्ता सम्बन्ध विकसित करने के लिए या किसी सौदेबाजी के लिए वार्तालाप में प्रतिभाग करते हैं तो याद रखिए कि एक कुशल श्रोता होने का लाभ आपको सदैव मिलेगा। यद्यपि आप अधिकारी के रूप में हों तो इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं निकालना चाहिए कि आपका अधिक बोलना ही आपके लिए हितकर होगा अपितु ज्यादा से ज्यादा सूचनाओं को एकत्र करने के लिए आपका ज्यादा श्रवण करना अधिक लाभदायक हो सकता है। यदि आप साक्षात्कार में जाएं तो भी आप यह सुनिश्चित कर लें कि साक्षात्कार बोर्ड के सदस्यों को भली भाँति सुनकर ही आपको उनके उचित उत्तर देने हैं ताकि अपने हिसाब से ज्यादा बोलना और कम सुनना कि आप दोषी न रहें। यदि अनवरत रूप से वार्तालाप चल रहा हो तो आप आज्ञा लेकर बोलने का प्रयत्न करें।

2.4.3 अपने बोलने को केन्द्रित एवं स्पष्ट करना

प्रायः ऐसा होता है कि हम श्रवणोपरान्त प्रश्न पूछते समय कहना कुछ और चाहते हैं तथा कह कुछ और जाते हैं। ऐसा इसलिए होता है कि बहुत अधीरता दिखाने पर हम बात पूरी तरह से सुनते नहीं है। तथा परिणाम स्वरूप अपने प्रश्न को भी बहुत स्पष्ट एवं केन्द्रित नहीं कर पाते हैं। यदि आपको कुछ प्रस्तुतीकरण करना है तो आपको चाहिए कि जो मुख्य श्रोत्र आप बोलना चाहते हैं उनको भली भाँति तैयार कर लें ताकि आपके श्रोता गण उस विषय को अच्छे से समझ जाएं तथा आप एक कुशल श्रवण में मदद कर सकें।

2.5 श्रवण में बाधाएँ

श्रवण कभी भी आसान नहीं होता है क्योंकि यह आस पास के वातावरण पर अत्यधिक निर्भर होता है।

- एक साधारण व्यक्ति अपने जगे हुए काल के 70 प्रतिशत समय में सम्प्रेषण करता है तथा उसमें से 45 प्रतिशत केवल श्रवण करता है।
- एक 10 मिनट के प्रस्तुतीकरण में केवल 50 प्रतिशत ही रह जाता है तथा दो दिनों में यह 25 प्रतिशत रह जाता है।

- यदि आपको अपनी श्रवण कुशलताएं बढ़ानी है तो आपके लिए यह आवश्यक है कि आप श्रवण के वातावरण के कारकों जैसे कि विषय सार, वक्ता, प्रलोभन, मस्तिष्क की अवस्था, भाषा, श्रवण गति आदि को समझें।

इस प्रकार श्रवण में निम्न प्रकार की बाधाएं हो सकती हैं।

(क) विषय सार - यदि श्रोता को विषय सार के बारे में अधिक ज्ञान है तो उसकी श्रवण में रूचि कम हो जाती हैं । यदि श्रोता को विषय के बारे में बहुत कम पता है तो भी वह उसको समझने के लिए अधिक प्रयास नहीं करता है और इस प्रकार से श्रवण अप्रभावी रह जाता है।

इससे छुटकारा पाने के लिए एक श्रोता को मूर्ति रूप में नहीं बैठना चाहिए तथा वक्ता एवं वक्तव्य के प्रति आस्थावान रहना चाहिए ताकि कुछ नये विषय या नये आयाम उस वक्ता के द्वारा सीखने को मिल सके। यदि आपको किसी विषय में बहुत अधिक ज्ञान भी हो तो भी आप ध्यान से श्रवण करने पर कुछ न कुछ नया विषय या उसके बारे में नये आयाम सीख सकते हैं।

(ख) माध्यम - श्रवण प्रक्रिया में माध्यम अति आवश्यक होता है। यदि वक्ता की दूरी बहुत अधिक हो तथा वह श्रोता को नजर नही आये तो भी श्रवण में रूचि कम हो जाती है। यदि वक्ता एवं श्रोता में सीधे तौर पर नजरों के मिलने का अवसर होता है तो श्रवण अधिक प्रभावी होता है। इसके अतिरिक्त माध्यम के रूप में जिस भी भाषा का तथा अन्य साधनों का प्रयोग किया जाता है वह भी श्रवण प्रक्रिया को अधिक प्रभावी बनाते हैं।

(ग) अन्य प्रलोभन - यदि वक्तव्य के स्थान पर अत्यधिक साज सज्जा, इधर उधर घूमने वाली वस्तुएं, आवाज में परिवर्तन आदि हों तो श्रोता का ध्यान इससे भंग होता है तथा यह श्रव्ण को अप्रभावी बनाता है। श्रोता के लिए यह आवश्यक है कि इस प्रकार के प्रलोभन होने की स्थिति में वह इन प्रलोभनों पर ध्यान न दे, अपने ध्यान को श्रवण में स्थापित करे।

(घ) मस्तिष्क अवस्था - किसी व्यक्ति की मस्तिष्क अवस्था श्रवण में सबसे अधिक महत्वपूर्ण होती है। यदि व्यक्ति का मस्तिष्क शान्त नहीं है, पूर्व से ही श्रवण के लिए तैयार नहीं है या किसी अन्य व्यक्तिगत समस्या से परेशान है तो ऐसी अवस्था में श्रवण का प्रभावी होना अत्यन्त मुश्किल हो पाता है।

ऐसे में श्रोता को चाहिए कि वह अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को श्रवण प्रक्रिया से अलग रखें, दूसरे व्यक्ति के मूल्यों एवं विश्वास को आदर दें, यदि दूसरे के दृष्टिकोण

से सहमत न हो तो उसे समझने का प्रयास करें।

(ङ) भाषा - जब भी कोई व्यक्ति किसी भी स्थान पर बोलने जाता है तो उस प्रान्त या क्षेत्र की भाषा का अत्यधिक ध्यान रखना चाहिए क्योंकि उस क्षेत्र के लोग अपनी भाषा को ही अच्छी तरह समझ सकते हैं तथा भाषा के सरल एवं सुगम होने पर श्रवण पूर्ण प्रभावी हो सकता है तथा कम से कम बाधाओं को उत्पन्न करता है। श्रोता के लिए भी यह आवश्यक है कि वह बोले जाने वाले शब्दों के अर्थ तथा परिस्थितियों के अनुसार शब्दों के अर्थ को समझे तथा उसके अनुसार ही विश्लेषण करें।

(च) श्रवण गति - साधारणतया किसी व्यक्ति की बोलने की गति 125-150 शब्द प्रति मिनट होती है तथा श्रवण गति 500 शब्द प्रति मिनट होती है जिसमें से सोचने के समय को सम्मिलित नहीं किया गया है।

जब कभी श्रोता, श्रव्ण करते समय अन्यत्र कहीं सोचने लगता है तो श्रवण प्रक्रिया प्रभावी होती है तथा श्रोता को समानान्तर रूप में तो सोचना आवश्यक है परन्तु उसे इतना नियन्त्रण रखना होगा कि वह विषय वस्तु से बहुत अधिक दूर न हो जाए।

(छ) प्रत्युत्तर / पुनर्भरण - यदि वक्ता बोले गये वक्तव्य को प्रत्युत्तर या पुनर्भरण के द्वारा स्पष्ट न करे तो श्रवण में भ्रांतियाँ पैदा हो सकती हैं। इसी प्रकार श्रोता का भी यह कर्तव्य है कि यदि कोई विषय उसे समझ में नहीं आ रहा हो तो वह वक्ता से पूछ कर अपनी समस्या या संशय को स्पष्ट कर ले । इस प्रकार सम्प्रेषण हेतु श्रवण में भी प्रत्युत्तर या पुर्नभरण की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

2.6 सारांश

अब तक के पाठन से हम यह समझ चुके हैं कि श्रवण एक सक्रिय प्रक्रिया है इसको प्रभावी बनाने के लिए किसी भी व्यक्ति का सक्रिय होना अति आवश्यक होता है तथा साथ ही विषय को समझने के लिए अपना ध्यान भी जागृत रखना आवश्यक होता है। यदि कोई व्यक्ति अपने श्रवण की क्षमता को अत्यन्त प्रभावी बना लेता है तो यह उसको अत्यन्त ही सफल व्यक्ति बना सकती है।। जो हम सुनते हैं उससे ही हमारी सोचने तथा विश्लेषण करने की क्षमता का विकास होता है।

2.7 महत्वपूर्ण शब्द

प्रभावी श्रवण, श्रवण बाधाएँ, विभेदात्मक श्रवण, संबंध श्रवण, प्रशंसनीय श्रवण, आलोचनात्मक श्रवण, परावर्तित कुशलताएँ, अनुसरण कुशलताएं, एकाग्र कुशलताएं,

सूचनात्मक श्रवण, महसूस करना, छानना, याद करना आदि ।

2.8 स्वपरख प्रश्न

प्र.1 सम्प्रेषण में श्रवण के महत्व की व्याख्या उदाहरणों की सहायता से कीजिए।

प्र.2 किसी संगठन में श्रवण की सहायता से एक नियोक्ता तथा कार्मिक के मध्य सम्बन्ध किस प्रकार अच्छे हो सकते हैं?

प्र.3 श्रवण में क्या क्या बाधाएँ आ सकती हैं? कृपया उल्लेख करें।

प्र.4 श्रवण कितने प्रकार का हो सकता है? सोदाहरण विवेचना करें।

2.9 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्त्रोत

- लीश्कर, रेमण्ड वी. जैन, डी. पेरिट एण्ड मैरी ई. फ्लैटली, लीश्करस बेसिक बिजनेस कम्यूनिकेशन, आठवाँ एडीशन, टाटा मैक्ग्राहिल नई दिल्ली।
- पी. प्रसाद कम्यूनिकेशन स्किल्स, एस. के. कटारिया एण्ड सन्स।
- मीनाक्षी रमन प्रकाश सिंह, बिजनेस कम्यूनिकेशन्स, ऑक्सफोर्ड पब्लिकेशन्स नई दिल्ली।
- मधुकर आर. के, बिजनेस कम्युनिकेशन एण्ड कस्टमर रिलेशन्स, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा. लिमिटेड, नई दिल्ली।

इकाई - 3 : गैर शाब्दिक सम्प्रेषण

इकाई की रूपरेखा-

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 व्यावसायिक संगठनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व

3.3 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रकार

3.4 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के लिए महत्वपूर्ण बातें

3.5 सारांश

3.6 महत्वपूर्ण शब्द

3.7 स्व-परख प्रश्न

3.8 अन्य महत्वपूर्ण पाठन स्रोत

3.0 : उद्देश्य

इस इकाई को समग्र रूप से पढ़ने के पश्चात आप निम्न उद्देश्यों की प्राप्ति में सक्षम होंगेः

- गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को परिभाषित करने में,
- व्यापारिक संगठनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के महत्व को समझने में,
- विभिन्न गैर शाब्दिक संकेतों को विस्तृत रूप से समझने में,तथा
- गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के आंकलन में।

3.1 प्रस्तावना

हमारे शाब्दिक सम्प्रेषण के अतिरिक्त हमारे चेहरे के भाव, हाथों का प्रयोग, आँखों की गतिविधियाँ आदि भी एक प्रकार से सम्प्रेषण का ही भाग होते हैं तथा इनको हम गैर शाब्दिक सम्प्रेषण कहते हैं। आज के युग में संगठनों में प्रबन्धन की प्रक्रिया के दौरान इन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण संकेतों का भी अत्यधिक महत्व होता है। यदि देखा जाए तो गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व शाब्दिक सम्प्रेषण से भी अधिक होता है। आपका व्यक्तिगत आविर्भाव, चेहरे का भाव, शारीरिक गतिविधियाँ, आँखों का प्रभाव, आवाज की पिच

इत्यादि सभी गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के मुख्य स्रोत होते हैं। इस प्रकार के सभी गैर शाब्दिक सम्प्रेषण अन्तरवैयक्तिक संचार के समय एक दूसरे की भावनाओं को और मजबूती से व्यक्त करते हैं। आपने प्रायः महसूस किया होगा कि यदि व्यक्ति आपसे जाते हुए कुछ भी नहीं कहता है तो इस शान्ति का मतलब नाराजगी होता है या फिर यदि व्यक्ति प्रेम एवं मीठी वाणी में नमस्ते कहता है तो आपको उसके सौहार्द्र पूर्ण व्यवहार की अनुभूति होती है परन्तु यदि व्यक्ति बहुत तेज आवाज में आक्रोश के साथ नमस्ते कहता है तो इसका तात्पर्य यही होता है कि वह दोबारा आपसे मिलने में बिलकुल भी रूचि नहीं रखता है। गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के तरीके जानबूझ कर या अनजाने में भी व्यक्त होते हैं। प्रायः यदि आपको कोई प्रश्न या स्थिति समझ में नहीं आती है तो स्वतः ही आपकी भवें सिकुड़ जाती हैं तथा आँखें भी संकुचित हो जाती हैं अर्थात यह आपके द्वारा अनजाने में किया गया गैर शाब्दिक सम्प्रेषण है जो कि किसी विषय वस्तु की कम समझ को प्रदर्शित करता है। इस इकाई में हम विभिन्न प्रकार के गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रकार को तथा उनके विश्लेषण आदि को भली भाँति समझने का प्रयास करेंगे।

3.2 व्यावसायिक संगठनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व

यदि हम सम्प्रेषण के सबसे पुराने स्वरूप को जानने की कोशिश करें तो शाब्दिक सम्प्रेषण से अधिक महत्वपूर्ण गैर शाब्दिक सम्प्रेषण है। इस काल में इशारों तथा शारीरिक गतिविधियों के द्वारा ही एक दूसरे को समझने का प्रयत्न करते थे। आज भी एक छोटा शिशु बिना बोले अपने भावों को सफलतापूर्वक व्यक्त करता है तथा जिन शब्दों को हम बोलते हैं वे शिशु के लिए जाने पहचाने नहीं होते हैं तथा फिर भी वह उनको भली भाँति समझता है। जैसे ही हम अपनी व्यावसायिक जिन्दगी को जीने के लिए किसी संगठन में प्रवेश करते हैं तो हम शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के मध्य विरोधाभास के बीच तालमेल बैठाने की ही कोशिशों में लगे रहते है। हमारे लिए यह अति आवश्यक है कि अपने संगठन में अपने से नीचे तथा ऊपर दोनों ही कर्मियों के द्वारा प्रयुक्त गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को समझने का प्रयास करें क्योंकि इस प्रकार के आभास हमें प्रायः भविष्य की अच्छी या बुरी स्थिति को नियन्त्रित करने में सहायक होता है। जब कभी शब्दों एवं क्रियाओं के मध्य विरोधाभास होता है तो प्रायः हम क्रियाओं या भावों पर ज्यादा विश्वास करते है। और शब्दों के प्रभाव को भावों की तुलना में ही विश्लेषित करते हैं। विशेषकर मौखिक सम्प्रेषण में हमारे लिए यह जानना अधिक आवश्यक है कि बातों को हम कैसे कहते हैं, बजाय क्या कहते हैं। वास्तविकता में सम्प्रेषण मौखिक या शाब्दिक रूप से कहीं अधिक होता है। शोध के परिणामों से पता चलता है कि सम्प्रेषण के कुल भाग का 70

से 90 प्रतिशत भाग गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के द्वारा ही निर्धारित होता है। परन्तु इस परिणाम का एक पहलू यह भी है कि हमें यह ज्ञात होना चाहिए कि किसी भी कार्यशाला या संगोष्ठी या जन उद्‌बोधन के दौरान किन किन क्रियाओं या भावों के रूप में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का क्या विश्लेषण हो सकता है। यदि आपको प्रेषक या वक्ता के शाब्दिक सम्प्रेषण या संदेश के बारे में ही जानकारी है तो आप अधिकांश सम्प्रेषण को समझने में नाकाम हो सकते है। परन्तु यदि आपको शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक दोनों ही प्रकार के सम्प्रेषण के बारे में जानकारी है तो यह आपको एक प्रभावी समझ में मदद करेगा। यदि आपको गैर शाब्दिक भावों/क्रियाओं को समझने में कुशलता प्राप्त है तो आप दूसरे के द्वारा व्यक्त किये गये विचारों को अधिक प्रभावी रूप से समझ सकते हैं परन्तु कभी कभी यह आपके लिऐ हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है। उदाहरणार्थ, यदि आप किसी सभा को सम्बोधित कर रहे हैं तथा श्रोतागण के कुछ व्यक्ति जाने या अनजाने कुछ न कुछ विरोधाभासी भावों या क्रियाओं को व्यक्त करते हैं तो आपका स्वयं का विश्वास कमजोर पड़ सकता है। कभी कभी यदि हम पूर्ण वक्तव्य को अत्यन्त ध्यान से भी सुनते हैं तथा यदि हमें जवाँई आ जाए तो हम इसे रोक नहीं पाते हैं और वक्ता यह समझेगा कि हमारा ध्यान उसके वक्तव्य में नहीं है या हमें वह अरूचिकर लग रहा है।

यदि हम व्यावायिक संगठनों में प्रबन्धकों के लिए गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के महत्व की बात करें तो चूँकि वे एक समूह का नेतृत्व करते हैं इसलिए निम्नांकित कारणों से यह उनके लिए अति आवश्यक होता हैः

प्रथमतः एक प्रबन्धक को एक अच्छा नेता बनने के लिए अपने समूह के कर्मचारियों तथा साधियों से अधिकतम संवाद करना होता है तथा इस संवाद में शाब्दिक एवं गैर शाब्दिक दोनों ही सम्प्रेषण का प्रयोग होता है जिनको समझना अति आवश्यक है। जब गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को अथवा भावों को भली भाँति समझ लिया जाता है तो यह किसी प्रबन्धक को एक उपयोगी माध्यम प्रदान करता है। एक समूह के विभिन्न सदस्य अपने भावों को तथा अभिवृत्ति को प्रायः गैर शाब्दिक क्रिया कलापों के द्वारा ही सम्प्रेषित करते हैं तथा ऐसी स्थिति में इसकी प्रभावी समझ अत्यन्त आवश्यक है। किसी टीम की कुछ व्यक्तिगत आवश्यकताएं स्वीकृति/अनुमोदन, वृद्धि, उपलब्धि एवं पहचान आदि हो सकती है। इन व्यक्तिगत आवश्याकताओं की पूर्ति में इस बात का अत्यन्त महत्व होता है कि किस प्रकार से तथा किस सीमा तक समूह के सदस्य आपस में एक दूसरे के गैर शाब्दिक भावों एवं क्रिया कलापों को समझते हैं । यदि टीम/समूह के सदस्य आपस में गैर शाब्दिक इशारों को अच्छी तरह से समझते हैं तो संगठन की वृद्धि एवं विकास के

अच्छे आसार नजर आते हैं क्योंकि ऐसे में यह इकाई/समूह एक मुक्त, ईमानदार एवं प्रतिस्पर्धात्मक होता है।

द्वितीय चरण में, कोई बात किस ढंग से कही गयी है उसका ज्यादा महत्व होता है, बजाय क्या बात कही गयी है अर्थात किन शब्दों का प्रयोग किया गया है । कही गयी बात का दृष्टिकोण इस पर निर्भर करता है कि बात शब्दों को मुस्कुराहट के साथ कहा गया है या माथा चढ़ाकर , जोर से डाँटने वाली आवाज में कहा गया है या धीमी एवं मासूम वाणी में कहा गया है अर्थात शब्दों के शाब्दिक अर्थ से ज्यादा महत्वपूर्ण गैर शाब्दिक भाव होते हैं। बोलने वाले व्यक्ति को यह जानना अत्यन्त आवश्यक है कि जिस समूह के समक्ष इसे बोलना है वहाँ उसके बात करने का ढंग, गैर शाब्दिक भावों का दृष्टिकोण श्रोताओं के लिए क्या होगा? गैर शाब्दिक सम्प्रेषण केवल अन्तर वैयक्तिक ही नहीं होता हैं वरन् व्यक्ति में आन्तरिक रूप से भी होता है। कभी कभी व्यक्ति के हाव भाव या प्रतिक्रियाएं उसके विचारों से विरोधाभास या समानाभास रखती हैं। लोग कभी कभी घृणात्मक या दुःखी भाव बनाते हैं या किसी विशेष स्थिति में खड़े होते हैं या इस प्रकार से व्यवहार करते हैं कि वे स्वंय के दृष्टिकोण का या छिपे हुए विश्वास को सुदृढ़ करते है।। अनजाने में वे स्वयं को ही सलाह देते हैं कि जो भूमिका वे निभा रहे हैं वे सही या इन्हें उन भूमिकाओं को निभाने में कुछ बदलाव की आवश्यकता है जैसे कि विनम्र या दबंग, विश्वसनीय या सतर्क, नियन्त्रित या सहज आदि।

ऐसे व्यक्ति जो समूह में कार्य करते हैं या समूह के लिए कार्य करते हैं (जैसे कि प्रबन्धक या शिक्षक आदि) तो उनके लिए गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का समझना अति आवश्यक होता है। सामाजिक वैज्ञानिक प्रारम्भ से गैर शाब्दिक भाषाओं के रहस्य को जानने में शोध करते रहे हैं परन्तु पिछले कुछ समय से व्यापार जगत ने गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रभाव एवं महत्वप को जाना है तथा इसकी शक्ति को एक प्रभावी सम्प्रेषण हेतु पहचाना है। खामोश भाषा या गैर शाब्दिक भाषाओं में पिछले कुछ वर्षों में प्रबन्धन से जुड़े क्षेत्रों में सीधे तौर पर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका को प्रभावी रूप से मनवाया है। पहले तो किस प्रकार से प्रबन्धक अपने कर्मियों को प्रोत्साहित करते हैं तथा दूसरा वे किस प्रकार से व्यवस्थापाकें या प्रबन्धकों को निर्णय ले ने की क्षमता के स्टाइल को एवं नेतृत्व को सम्प्रेषित करते हैं । प्रायः नौकरी के लिए साक्षात्कार देते समय तथा विज्ञापनों में गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का महत्व हमको देखने को मिलता हैं ।

3.3 गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के प्रकार

गैर शाब्दिक सम्प्रेषण में चेतन या अचेतन संदेश शामिल हो सकते हैं।

3.3.1 चेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण

चेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को करने वाले प्रेषक या संचारकर्ता अपने द्वारा भेजे जा रहे संदेश के प्रति सजग एवं जागरूक होते हैं तथा उनको इस संदेश का तात्पर्य अथवा अर्थ भी ज्ञात होता है।

यदि आप किसी व्यक्ति को अपनी बाहों में भरते हैं तो आपको पता होता है कि इस प्रकार का संदेश (गैर शाब्दिक) केवल उन्हीं व्यक्तियों के लिए है जिनको आप बहुत प्यार करते हैं तथा ऐसा करके आप उससे गहन प्यार की अभिव्यक्ति करते हैं । इसी प्रकार चेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के ग्राही भी इस के सन्देश के अर्थ को समझने में सक्षम होते हैं। अर्थात यदि आपको कोई अपनी बाहों में भर लेता है तो आपको पता होता है कि वह व्यक्ति आपसे गहन प्यार का इजहार कर रहा है तथा उसके लिए आपके मन में अपार स्वीकृति है।

3.3.2 अचेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण

अचेतन संदेशों का सम्प्रेषण प्रायः ग्राही के अचेतन मस्तिष्क में होता है। अचेतन संदेशों के ग्राही इस प्रकार के संदेशों के प्रति जागरूक नहीं होते हैं, यद्यपि ये संदेश उनके लिए महत्वपूर्ण होते हैं।

- उसकी अर्न्तक्रियाओं (उदाहरणार्थ ह्रदयगति, कंपन आदि) का होना आपके गैर चेतन पाठन के अचेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के कारण होता हैं ।
- पोलीस एवं मिलिट्री बल की वेशभूषा उनकी शक्तियों एवं अधिकारों को परिभाषित करती हैं।
- यदि कोई व्यक्ति अत्यन्त मँहगी वेशभूषा एवं आभूषण धारण किये हो तथा मँहगी गाड़ी में हो तो उस व्यक्ति की पृष्ठभूमि को आप आसानी से परिभाषित कर सकते हैं।
- विज्ञापनों में अधिकाधिक जवान महिलाओं का प्रयोग जवान पुरूषों के समूह में उनकी स्वीकृति एवं प्रभाव को दृष्टिगत रखते हुए ही किया जाता है।

अचेतन संदेश यद्यपि चेतन स्तर पर कोई जागरूकता उत्पन्न नहीं करते हैं परन्तु फिर भी वे ग्राही को प्रभावित करते हैं। वास्तविकता में तो अचेतन संदेश, चेतन संदेशों से ज्यादा प्रभावी प्रतीत होते हैं।

विज्ञापन की दुनिया में अचेतन गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का अधिकाधिक प्रयोग होता है।

3.3.3 स्वैच्छिक एवं अस्वैच्छिक संदेश

चेतन एवं अचेतन संदेशों को स्वैच्छिक एवं अस्वैच्छिक दोनों ही प्रकार से भेजा जा सकता है।

अधिकांश गैर शाब्दिक संदेश अस्वैच्छिक होते हैं। वास्तविक रूप में अधिकांश सम्प्रेषण कर्ताओं को यह नहीं पता होता है कि वे गैर शाब्दिक सम्प्रेषण करते हैं।

शारीरिक भाषा एक ऐसा क्षेत्र है जो गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की अस्वैच्छिक प्रकृति को दर्शाता है। प्रति दिन व्यक्ति अपने हाव भावों के द्वारा , चेहरे के भाव के द्वारा या अन्य शारीरिक गतिविधियों के द्वारा गैर शाब्दिक सम्प्रेषण को अंजाम देते हैं।

चूँकि अस्वैच्छिक गैर शाब्दिक सम्प्रेषण एक अनियोजित शारीरिक प्रतिक्रिया को प्रदर्शित करते हैं अतः सम्प्रेषण का यह प्रकार, शाब्दिक अथवा मौखिक सम्प्रेषण से अधिक ईमानदार प्रतीत होता है। गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का नियन्त्रण एक ज्ञानी व्यक्ति के द्वारा भी हो सकता है अर्थात सचेत व्यक्ति के द्वारा भी हो सकता है। यदि किसी व्यक्ति को पता हो कि झूठ बोलने वाला व्यक्ति कभी आँखों मे आँखें डालकर बात नहीं कर सकता है तो वह अपने आपको नियन्त्रित करके झूठ बोलने पर भी आँखों में आँखे डालकर बात कर सकता है।

यदि किसी व्यक्ति को पता हो कि बाहों में भरने का मतलब किसी व्यक्ति से अत्यन्त अपनापन दिखाने से होता है तो वह अपने शत्रु को भ्रमित करने के लिए भी ऐसा दिखावा कर सकता है।

उपर्युक्त वर्णित वर्गों के द्वारा गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का एक ढाँचा सैद्धान्तिक रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है जो कि वास्तव में संकेतों का एक यौगिक होता है जो सम्मिलित रूप से कुछ अर्थ को व्यक्त करते हैं संकेत, निश्चित एवं संगठित अभिव्यक्ति के माध्यम होते हैं जो प्रतीकों/चिन्हों एवं नियमों के संयोग से बने होते हैं तथा प्रयोग

में आते हैं। यद्यपि ये संकेत एक निश्चित वर्ग में प्रस्तुत किये जाते हैं तथा वे एक साथ होते हैं और नैसर्गिक रूप से शाब्दिक सम्प्रेषण के साथ एकीकृत होते हैं। यदि किसी सम्प्रेषण के अर्थ के लिए हम केवल शाब्दिक या गैर शाब्दिक संकेत पर ही ध्यान देंगे तो ऐसे में सम्प्रेषण अप्रभावी एवं अपूर्ण होगा। यदि हम गैर शाब्दिक संकेतों के एकीकरण को समझना चाहते हैं तो हमारे लिए यह आवश्यक है कि हम इनके कार्यों को समझें। साधारणतया गैर शाब्दिक संकेत/सम्प्रेषण व्यक्तियों के बहुत से उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं।

(क) प्रभाव छोड़ने में - गैर शाब्दिक संकेतों को सम्प्रेषण में प्रयोग करने पर समूह या अन्य व्यक्ति एक अच्छा प्रभाव पर होता है। यदि किसी बात को बिना गैर शाब्दिक सम्प्रेषण के कहते हैं तो वह इतना प्रभावी नहीं होता है।

(ख) आपसी मेल-जोल को प्रबन्धित करने में - गैर शाब्दिक सम्प्रेषण का प्रयोग चूँकि व्यक्ति को मनोभाव को भी प्रदर्शित करता है । अतः आपसी मेल जोल के बढ़ाने में गैर शाब्दिक संकेतों की एक अहम भूमिका होती है। उदाहरणार्थ, व्यक्ति के कन्धे पर हाथ रखना, व्यक्ति को बाहों में भरना आदि।

(ग) अन्तर्सम्बन्धों को प्रबन्धित करने में - यदि हम किसी व्यक्ति के पास अपना कोई प्रस्तुतीकरण करने जाते हैं या किसी समूह के सामने व्यावसायिक प्रस्तुतीकरण करते हैं तो गैर शाब्दिक संकेत जैसे कि चेहरे के भाव, आवाज का उतार चढ़ाव आदि का प्रयोग हमारे प्रभाव को इन अन्तर्सम्बन्धों में काफी बढ़ा देता है।

(घ) धोखेबाजी को पहचानने में - गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा ही हम धोखेबाजी के व्यवहार को आसानी से पढ़ लेते हैं। जैसे कि यदि कोई व्यक्ति आँखों के सम्पर्क से बचकर बात करता है तो वह सत्य नहीं बोल रहा होता है।

(ङ) शक्ति एवं राजी करने के संदेश को देना - नेतृत्व में लोगों को मना लेने का एवं शक्ति / अधिकार का संदेश प्रायः गैर शाब्दिक संकेतों के द्वारा ही दिया जाता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि विभिन्न प्रकार के लोग गैर शाब्दिक संकेतों एवं सम्प्रेषण का प्रयोग भिन्न भिन्न उद्देश्यों की पूर्ति के लिए करते हैं।

गैर शाब्दिक सम्प्रेषण की विधियों का वर्णन हम निम्नलिखित सारणी की सहायता से कर सकते हैं।

गैर शाब्दिक सम्प्रेषण विधि	उदाहरण
काइनेसिक्स	चेहरे के भाव, शारीरिक भंगिमा, भाव प्रदर्शन क्रिया
ऑक्यूलेसिक्स	नेत्र सम्पर्क
हैप्टिक्स	स्पर्श सम्प्रेषण
प्राक्सेमिक्स	दूरी एवं स्थान का सम्प्रेषण
आविर्भाव एवं आभूषण	शारीरिक लक्षण, वेशभूषा एवं उपसाधन जैसे कि सुगन्धित इत्र, मेकअप, आभूषण आदि ।
पैरालिंगिस्टिक्स /वोकालिक्स	पिच में विविधता, चाल, आयतन एवं रूकने का अर्थ
क्रोनेमिक्स	सम्प्रेषण पर समय का प्रभाव

(1) काइनेसिक्स (Kinesics) - किसी भी व्यक्ति की प्रबन्धकीय क्षमताओं को जानने के लिए यह सुनना आवश्यक नहीं है कि वह क्या कह रहा है अपितु यह आवश्यक होता है कि उनके बोलते समय हम उनका परिपेक्षण करें। शारीरिक भाषा एक ऐसी प्रक्रिया है जो कि किसी भी व्यक्ति को बोलते समय विभिन्न बातों के लिए भिन्न भिन्न होती है तथा व्यक्ति के चेहरे के हाव भाव भी बात के साथ साथ बदलते रहते हैं और चेहरे के हाव भाव एवं शारीरिक भाषा किसी बात के वजन को घटाने या बढ़ाने में सक्षम होते हैं। गैर शाब्दिक भाषा बोलने वाले के भावों की सच्चाई को प्रकट करती है तथा ग्राही की क्षमता भी एक हद तक इस प्रकार के गैर शाब्दिक संकेतों पर निर्भर करती है।शोध के द्वारा यह ज्ञात होता है कि लगभग 70 प्रतिशत से 90 प्रतिशत संदेश का सम्प्रेषण हमारी शारीरिक भाषा के द्वारा ही सफल होता है, तथा केवल लगभग 10 प्रतिशत भाग शाब्दिक अर्थ के द्वारा सफल होता हैं।

काइनेसिक्स का अर्थ शरीर की विभिन्न मुद्राओं से है या बात चीत के दौरान हमारी माँस पेशियों के संकुचन के द्वारा उत्पन्न शारीरिक मुद्रा या हमारे शारीरिक संरचना के झुकाव आदि द्वारा बनी मुद्रा से होता है। काइनेसिक्स के अन्तर्गत सभी प्रकार के शारीरिक, शारीरिक अन्तःक्रियाओं, स्वजनित परावर्तन क्रियाएं, शारीरिक भंगिमा, चेहरे के हाव भाव, एवं अन्य शारीरिक अंगों की गतिविधियां आदि आती है। शारीरिक भाषा, शारीरिक मुहावरे, अंग भाषा एवं काइनेसिक्स ऐसे ही कुछ शब्द हैं जिनका प्रयोग हम काइनेसिक्स में करते हैं।

(अ) चेहरे के भाव - यदि आपके उच्चाधिकारी के चहेरे पर मुस्कराहट हो तो आप

सहज महसूस करते हैं परन्तु यदि उच्चधिकारी के चेहरे की भवें तन जाएं तो आप असहज महसूस करते हैं। इसी प्रकार से यदि आपके अधीन साथी के चेहरे पर कुछ भ्रम के भाव आएं या आँखें संकुचित हो जाएं तो आप उसे ज्यादा समझाकर सन्तुष्ट करना चाहते हैं। इसी प्रकार से चेहरे के भाव सम्प्रेषण को सम्पन्न करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। निम्नांकित चित्रों में चेहरे के भावों को परिभाषित करने का प्रयास किया जा सकता हैं :

चेहरे का भाव

उपरोक्त चित्रों में हम चेहरे के भावों के द्वारा रूचिकर, अरूचिकर, स्वीकृति एवं अस्वीकृति की अवस्थाओं को स्पष्ट रूप से ज्ञात कर सकते हैं तथा इनका प्रयोग प्रायः हमने वक्तव्य को श्रोता की प्रतिक्रिया के अनुसार बदल सकते हैं जो कि हमारे सम्प्रेषण की प्रक्रिया को पूर्ण करने में सहायक होते हैं ।

(ब) शारीरिक भंगिमा (Posture) - प्रायः आपने कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को स्टेज पर बोलते देखा एवं सुना होगा। वे अपनी शारीरिक भंगिमाओं के साथ साथ आपको

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

M.COM-06
संचार कौशल एवं शोध विधि

खण्ड

3

शोध विधियों से परिचय

इकाई-1 5
शोध विधियों की प्रकृति तथा क्षेत्र एवं शोध समस्याओं का प्रतिपादन

इकाई-2 24
अनुसंधान प्रक्रिया एवं अवधारणाओं का निर्माण

इकाई-3 31
अनुसंधान प्ररचना

इकाई-4 56
निदर्शन अभिकल्प

इकाई-5 82
परिकल्पनाओं का निर्माण एवं परीक्षण

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 एस0 ए0 अंसारी	निदेशक, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 सुबोजीत बनर्जी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, डिपार्टमेन्ट आफ बिजनेस एडमिनिस्ट्रेशन, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, मार्च 2010

मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खण्ड-3 (परिचय)

प्रस्तुत खण्ड 3 को 5 इकाईयों में विभाजित कर प्रस्तुत किया गया है।

इकाई-01 शोध विधियों की प्रकृति तथा क्षेत्र एवं शोध समस्याओं के प्रतिपादन से सम्बन्धित हैं। इस इकाई में शोध की पद्यति, अनुसंधान के विभिन्न चरणों का विवरण, अनुसंधान समस्या के चयन आदि पर प्रकाश डाला गया है।

इकाई-02 के अन्तर्गत अनुसंधान के विभिन्न चरण, अवधारणा का अर्थ एवं उसके विशेषताओं का वर्णन किया गया है।

इकाई-03 में अनुसंधान प्ररचना की परिभाषा, उद्देश्य, विशेषताओं एवं वर्गीकरण की विस्तृत व्याख्या की गई है।

इकाई-04 निदर्शन की परिभाषा, विशेषतायें, इसके विभिन्न अवयव तथा वर्गीकरण से सम्बन्धित है।

इकाई -05 में परिकल्पना से सम्बन्धित बातों पर प्रकाश डाला गया है। इस इकाई के अन्तर्गत परिकल्पना का अर्थ, उद्देश्य, विशेषतायें, वर्गीकरण आदि की विस्तृत व्याख्या की गयी है।

इकाई - 1 : शोध विधियों की प्रकृति तथा क्षेत्र एवं शोध समस्याओं का प्रतिपादन (Nature and Scope of Research Methodology and Formation of Research Problem)

इकाई की रूपरेखा-

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 अनुसंधान

1.2.1 शोध तथा वैज्ञानिक पद्धति

1.2.2 वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ

1.3 वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति

1.3.1 अनुसंधान के विभिन्न चरण

1.3.2 अनुसंधान का महत्व

1.3.3 अनुसंधान के प्रकार

1.4 अनुसंधान समस्या का चयन एवं उसकी परिभाषा

1.4.1 अनुसंधान - समस्याओं के स्रोत

1.4.2 अनुसंधान की समस्याओं के लक्षण

1.4.3 समस्या की पहचान अथवा निर्वचन

1.5 परिस्थिति विश्लेषण अथवा क्षेत्र निर्धारण

1.6 उद्देश्यों का निर्धारण

1.7 सारांश

1.8 बोध प्रश्न

1.9 संदर्भ पुस्तकें

1.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात आप जान सकेंगे -

- शोध का अर्थ तथा शोध एवं खोज में अन्तर,

- शोध का ज्ञान सृजन से सम्बन्ध, तथा आज के परिप्रेक्ष में शोध की उपयोगिता,
- शोध की प्रकृति एवं प्रकार
- शोध समस्या का चयन तथा उसकी परिभाषा, तथा
- शोध समस्या के स्त्रोत, एवं समस्या की पहचान तथा निर्वचन।

1.1 प्रस्तावना

अनुसंधान अथवा शोध, मानव जाति के लिए आग और पानी जितना ही पुराना है। भोजन और आश्रय के लिए उसके द्वारा बार बार किये गये खोज, पूर्वानुमानित घटनाओं को अनुभव द्वारा समझने में उसकी मदद करता रहा है और इस प्रकार प्रकृति के हर चुनौती का सामना उसे प्रकृति के रहस्यों को समझने के और करीब ले आता रहा है। जब भी मनुष्य किसी नई परिस्थिति में आता तो वह पुनः यह खोज की प्रक्रिया शुरू हो जाती। मनुष्य के आगे, उसके अस्तित्व के लिए किये गये संघर्ष के परिणाम ने शोध का रूप ले लिया। 'रिसर्च' शब्द लैटिन भाषा से उदघृत है, जिसका अर्थ है जानना। तथापि यह विचारणीय है कि खोज एवं शोध में क्या अन्तर है। खोज वह गतिविधि है जिसके माध्यम से हम किसी व्यक्ति अथवा वस्तु विशेष को सुव्यवस्थित विधि द्वारा ढूँढने का प्रयास करते हैं।

खोज दो प्रकार के होते हैं : प्रथम वह खोज है जिसका कि अस्तित्व निर्धारित है, परन्तु उसकी स्थिति का पता लगाना है एवं द्वितीय उस वस्तु अथवा लक्ष्य के लिए खोज है जिसका अस्तित्व अनिश्चित है। यह स्पर्शागम्य व्यवहारों के सन्दर्भ में रूपकालकार प्रयोग में लाया जाता है, उदाहरणार्थ स्मृति तथा मनोभाव। खोज एक पुनरूक्ति क्रिया के स्थान पर, एक स्वाभाविक क्रिया है। खोज के विपरीत, अनुसंधान एक क्रमबद्ध प्रक्रिया है, जो कि एक योजना के अनुरूप व्यवस्थित होती है यद्यपि यह एक सुनियोजित क्रमबद्ध प्रक्रिया है, किन्तु हर परियोजना की अपनी नीति विलक्षण होती है, अनुसंधान का उद्देश्य योजनाबद्ध अन्वेषण के द्वारा तथ्यों को सत्यापित करना है, अनुसंधान ऐसे प्रश्न अथवा समस्याओं के समाधान ढूँढता है जिसके उत्तर पहले से अस्तित्व में न हों।

1.2 अनुसंधान का उद्गम

अनुसंधान का उदगम एक ऐसे शब्द से हुआ है, जिसका अर्थ 'सब दिशाओं में जाना' होता है। वैसे भी 'रिसर्च' शब्द स्वयं ही दो शब्दों 'री' तथा 'सर्च' से मिलकर

बना है, अतः सम्पूर्ण 'रिसर्च' शब्द से एक ऐसे सम्मिलित अर्थ का बोध होता है जिसका उद्देश्य 'खोज' की पुनरावृत्ति होता है' अथवा एक 'अन्वेषण' होता है, अज्ञात विषयों तथा घटनाओं के प्रति अन्वेषण करना वास्तव में मानव स्वभाव का अभिन्न अंग रहा है।

आदि काल से आश्चर्यजनक प्राकृतिक घटनाओं की व्याख्या मानव ने संभवतः पहले जादू के आधार पर की, क्योंकि उसकी साधारण बुद्धि प्रकृति में घटित होने वाली विषम घटनाओं की व्याख्या इससे अधिक करने में प्रायः असमर्थ रही है। शनैः शनैः नवीन कल्पनाओं तथा धारणाओं से मानव ज्ञान अर्जन की विधि को दार्शनिक विचारधाराएँ मिलीं और चिन्तन में निगमनात्मक तर्क का उदय हुआ। इस प्रकार की विचारधाराओं में तर्क बुद्धिवादी पर्याप्त समय तक प्रधान एवं प्रभावशाली रही। परन्तु आगे चलकर परिवर्तन आया और संशयवाद जागृत हुआ, जिससे परम्परागत धार्मिक शास्त्र-पद्धति तथा ईश्वर परक हठ मतों को बहुत बड़ा धक्का लगा और इसका परिणाम यह हुआ कि मानव चिन्तन में इन्द्रियनुभववाद का युग आया। इस युग ने मानव चिन्तन और अन्वेषण पद्धति को एक नई दिशा प्रदान की और परिकल्पना आधारित निगमनात्मक विधि का विकास हुआ।

इस विचारधारा से प्रभावित होकर अगस्त काम्टे ने समाज विज्ञान के अध्ययन में प्रत्यक्षवाद को अपनाया। ईमाइल दुर्खीम ने समाज विज्ञान में विषयपरक अध्ययन पद्धति को प्रधानता प्रदान की। मनोविज्ञान के क्षेत्र में व्यवहारवादी विचारधारा का प्रवेश हुआ। मनोविश्लेषण में नियतत्ववाद के नियम को प्रतिपादित किया। ये सब नवीन तथा प्रबल पद्धतियाँ मानव के चिन्तन, अध्ययन व अनुसंधान के जगत में वैज्ञानिक विचारधारा की प्रतीक थीं और यह विचारधारा इस शताब्दी के आरम्भ में अत्यधिक जोर पकड़ चुकी है।

1.2.1 शोध तथा वैज्ञानिक पद्धति

वैज्ञानिक पद्धति एक सामूहिक शब्द है जो उन अनेक प्रक्रियाओं को स्पष्ट करता है जिनकी सहायता से विज्ञान का निर्माण होता है। व्यापक अर्थों में वैज्ञानिक पद्धति का तात्पर्य अनुसन्धान की किसी ऐसी पद्धति से है जिसके द्वारा निष्पक्ष एवं व्यवस्थित ज्ञात प्राप्त किया जाता है। विस्तृत अर्थों में कोई भी अनुसंधान विधि जिसके द्वारा विज्ञान का विस्तार एवं प्रसार होता है, वैज्ञानिक पद्धति कही जाती है। वैज्ञानिक पद्धति एक ऐसा क्रमबद्ध प्रक्रम है जिसमें एक समस्या पर आधारित परिकल्पना से सम्बन्धित आँकड़ों का संकलन, व्यवस्थापन व विश्लेषण उपयुक्त सांख्यिकीय पद्धति द्वारा इस आशय से किया

जाता है जिससे, परिकल्पना की सत्यता की जाँच कठोरतम तथा वस्तुनिष्ठ मापदण्ड पर की जा सके। वैज्ञानिक पद्धति का स्वरूप स्थायी नहीं होता, बल्कि गतिशील रहता है। इसके स्वरूप में जैसे-जैसे परिशुद्धता व कठोरता की मात्रा में वृद्धि होती जाती है, वैज्ञानिक पद्धति का स्वरूप और अधिक विशुद्ध होता चला जाता है।

1.2.2 वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह स्पष्ट होता है कि वैज्ञानिक पद्धति किसी विषय को धरातल पर प्रस्तुत करने का एक सुदृढ़ आधार है । महान सांख्यिकीविद् कार्ल पीयर्सन ने वैज्ञानिक पद्धति की विवेचना तीन प्रमुख विशेषताओं के आधार पर की है -

1. सर्वप्रथम वैज्ञानिक पद्धति तथ्यों का वर्गीकरण करती है तथा विभिन्न तथ्यों के पारस्परिक संबंध और क्रम का निरीक्षण करती है।
2. वैज्ञानिक पद्धति रचनात्मक कल्पना के द्वारा वैज्ञानिक नियमों की खोज करती है।
3. वैज्ञानिक पद्धति किसी विषय की समालोचना करती है तथा सामान्य बुद्धि के सभी व्यक्तियों के लिए समान रूप से उपयोगी होती है।

मूलतः वैज्ञानिक पद्धति की विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

1. **वस्तुनिष्ठता** - इससे अभिप्राय यह है कि अध्ययन पक्षपातरहित व पूर्वाग्रहरहित होना चाहिए।
2. **निश्चयात्मक** - वैज्ञानिक विधि के अन्तर्गत सम्बन्धित चरों की व्याख्या व उनके प्रकार्यात्मक अध्ययन का प्रक्रम कठोरतम मापदण्ड पर नियन्त्रित, सुव्यवस्थित व सुनिश्चित होता है, तथा प्राप्त परिपणामों का वास्तुनिष्ठ आधार पर विश्वसनीयता व वैधता का स्तर भी निर्धारित रहता है।
3. **सत्यापनीयता** - प्राप्त परिणामों की पुनरावृत्ति तथा पुष्टि वैज्ञानिक पद्धति की तीसरी विशेषता है। पुष्टी के लिए एक अनुसंधानकर्ता स्वयं अपने अध्ययन की नवीन स्थिति में पुनरावृत्ति करता है और यह प्रक्रम तब तक चलता रहता है, जब तक कि सुनिश्चित परिणाम उपलब्ध नहीं हो जाते।
4. **सामान्यता** - वैज्ञानिक विधि के द्वारा जो निष्कर्ष उपलब्ध होते हैं, उनके आधार पर उसी प्रकार की अन्य घटनाओं की व्याख्या सरलतापूर्वक की जा सकती है, क्योंकि वैज्ञानिक पद्धति द्वारा प्राप्त सिद्धान्तों, तथ्यों व नियमों की रचना की जाती है तथा उनकी अनुप्रयुक्ति का स्वरूप सार्वभौमिक होता है।
5. **भविष्य कथन की क्षमता** - वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों व सिद्धान्तों की रचना का आधार वैज्ञानिक पद्धति ही होता है, अतः ज्ञान की ऐसी रचना के आधार पर वैज्ञानिक एक घटना से सम्बन्धित चरों व स्थितियों के उपस्थित होने पर घटित होने वाले परिणामों के सम्बन्ध में सफलतापूर्वक भविष्यवाणी कर सकता है।

1.3 वैज्ञानिक अनुसंधान की प्रकृति

अनुसंधान की प्रकृति को समझने के लिए हमें सर्वप्रथम शोध को परिभाषित करना होगा। विभिन्न विशेषज्ञों ने शोध को भिन्न-भिन्न प्रकार से परिभाषित किया है, पर सभी परिभाषाएँ अनुसंधान को एक ऐसा निरपेक्ष, व्यापक तथा बौद्धिक अन्वेषण मानती है जिसमें एक दी गई समस्या से सम्बन्धित तथ्यों तथा उनमें अर्थों अथवा सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। अनुसंधान चिन्तन की एक ऐसी क्रमबद्ध तथा विशुद्ध प्रविधि है, जिसमें विशिष्ट यन्त्रों, उपकरणों तथा प्रक्रियाओं का उपयोग इस उद्देश्य से किया जाता है कि एक समस्या का अधिक समुचित समाधान उपलब्ध हो सके।

परिभाषाओं के आधार पर शोध की प्रकृति के बारे में हम कह सकते हैं कि -

1. अनुसंधान एक वैज्ञानिक अन्वेषण पद्धति है। इस आधार पर अनुसंधान एक व्यवस्थित, नियन्त्रित, निरपेक्ष, वस्तुनिष्ठ गहन तथा आनुभविक अध्ययन होता है।
2. इसका उद्देश्य एक दी गई स्पष्ट तथा सीमित समस्या से सम्बन्धित नवीन तथ्यों तथा सामान्य नियमों की खोज करना है, तथा साथ ही साथ उस से सम्बन्धित पूर्व स्थापित नियमों का नवीनतम यन्त्रों, उपकरणों तथा प्रविधियों द्वारा सत्यापन करना भी होता है।
3. अनुसंधान से सम्बन्धित समस्या के अध्ययन का आधार ऐसी परिकल्पना अथवा परिकल्पनात्मक तर्क वाक्य होते हैं जिनसे कि आनुभविक तथा मात्रात्मक अध्ययन में सुविधा हो।
4. इसमें सम्बन्धित आँकड़ों का विश्लेषण कठोर वैज्ञानिक तथा सांख्यिकीय पद्यतियों के आधार पर किया जाता है। इस प्रकार अनुसंधान का स्वरूप कुशल, विशिष्ट तथा वस्तुनिष्ठ होता है।

5. इसमें प्राप्त परिणामों तथा सम्बन्धों की पुनरावृत्ति इस उद्देश्य से बार बार की जाती है ताकि सुनिश्चित तथा सुसंगत निष्कर्ष प्राप्त हो सके।

6. अनुसंधान पर आधारित ज्ञान में एक प्रकार की क्रमबद्धता, निरन्तरता तथा एकता अन्तर्निहित रहती है, तथा इस प्रकार का ज्ञान वैज्ञानिक मापदण्ड पर परिशुद्ध वैध तथा विश्वसनीय रहता है।

7. अनुसंधान के प्रक्रम तथा प्राप्त निष्कर्षों को नियमबद्ध रूप से एक प्रतिवेदन के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, ताकि उस क्षेत्र के आगामी अनुसंधानों में उनका सन्दर्भ सहज रूप से उपलब्ध हो सके। इस आधार पर अनुसंधान के प्रतिवेदन का प्रकाशन भी अनुसन्धान प्रक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग माना जाता है।

1.3.1 अनुसंधान के विभिन्न चरण

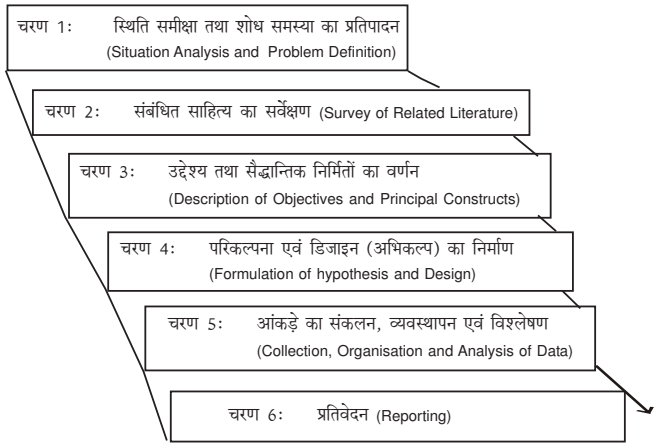

चित्र 1 : अनुसंधान प्रक्रिया (The Research Process)

स्थिति समीक्षा तथा शोध समस्या का प्रतिपादन - इस चरण में सर्वप्रथम शोधकर्ता उस क्षेत्र तथा विषय का चयन करता है, जिसमें वह शोध करना चाहता है। प्रायः यह चरण किसी समस्या का हल ढूँढने से प्रेरित होता है। अतः इस चरण में शोध समस्या का प्रतिपादन होता है।

संबंधित साहित्य का सर्वेक्षण - दूसरे चरण में, अनुसन्धानकर्ता को समस्या सम्बन्धित पूर्व अनुसंधानों का सावधानीपूर्वक सर्वेक्षण करना होता है, ताकि वह यह समझ सके कि पूर्व अनुसंधानों में क्या कमियाँ रही हैं। इसके अलावा साहित्य सर्वेक्षण

से कई महत्वपूर्ण तथ्यों का भी पता चलता है जैसे कि सम्बन्धित शोधों के क्या परिणाम रहे, कहीं ऐसा तो नहीं कि जिस शोध प्रश्न का हल ढूँढने जा रहे हैं, उसका हल पहले से ही मौजूद हो?

उद्देश्य तथा सैद्धान्तिक निर्मितों की व्याख्या - इस चरण में प्रतिपादित शोध समस्या के युक्ति संगत आधार को प्रस्तुत करता है, और इसके साथ ही साथ, उन सैद्धान्तिक निर्मितों तथा संप्रत्ययों की भी स्पष्ट व्याख्या करता है जिनका उपयोग अपने अनुसंधान में किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त इस चरण में समस्या के उद्देश्यों को तथा उसके क्षेत्रों को भी स्पष्ट तथा सीमित करना होता है।

परिकल्पन एवं अभिकल्प का निर्माण - इस चरण में अनुसंधानकर्ता को उठायी गयी समस्या के आधार पर एक ऐसी उपयुक्त परिकल्पना की रचना करनी होती है जिसका कि आनुभाविक (ऐम्पिरिकल) तथा मात्रात्मक (Quantitative) अध्ययन सम्भव हो और जो उठायी गयी समस्या का एक समुचित उत्तर हो। इसी चरण में अनुसंधान से सम्बन्धित एक ऐसे अभिकल्प (Design) का चयन करना होता है जिससे संबंधित समस्या का कठोर वैज्ञानिक नियंत्रण (Control) के आधार पर गहन अध्ययन हो सकें।

आंकड़ों का संकलन, व्यवस्थापन एवं विश्लेषण - एक बार परिकल्पना तथा उसके सत्यापन के लिए अभिकल्प का चयन होने के पश्चात, आंकड़ों का व्यवस्थापन एवं विश्लेषण किया जाता है। इन आँकड़ों का उपयुक्त सांख्यिकीय विधियों से सत्यापन किया जाता है।

प्रतिवेदन - अन्तिम चरण में, सम्पूर्ण अनुसंधान प्रक्रम के आधार पर एक नियमबद्ध, संक्षिप्त तथा स्पष्ट प्रतिवेदन प्रस्तुत किया जाता है, जिससे इस अनुसंधान का सन्दर्भ आगामी अनुसंधानों के लिए सरलतापूर्वक उपलब्ध हो सके।

1.3.2 अनुसंधान का महत्व

मानव जीवन का कोई भी पक्ष शोध के दायरे से अछूता नहीं है। सारे अद्भुत आविष्कार, खोजों और सिद्धान्तों के पीछे अनुसंधान का बहुत बड़ा योगदान है। अनुसंधान का महत्व केवल विज्ञान की खोजों तक ही सीमित नहीं है। अनुसंधान सामाजिक विकास तथा आम आदमी के लिए बेहतर जीवन प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। शोध, ज्ञान के विस्तार करने में, तथ्यों की जाँच करने में तथा सिद्धान्तों की खोज करने में महत्वपूर्ण योगदान करता है। अधिकांश स्थितियों में शोध

निर्णय लेने में अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अनुसंधान के महत्व हम निम्नलिखित बिन्दुओं से वर्णित कर सकते हैं।

1. अनुसंधान मानव ज्ञान भण्डार को विस्तृत करता है।
2. अनुसंधान हमें भविष्य की अनिश्चितता को कम करने में मदद करता है।
3. अनुसंधान विभिन्न विज्ञानों की प्रगति की शक्तिशाली कुन्जी है।
4. अनुसंधान व्यावहारिक समस्याओं के समस्याओं के समाधान का एक प्रबल यन्त्र है।
5. अनुसंधान प्रशासक का मार्ग दर्शक है क्योंकि यह निर्णय लेने में प्रशासक की मदद करता है।
6. अनुसंधान ने अनेक पूर्वाग्रहों के निदान तथा निवारण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।
7. अनुसंधान से मानव व्यक्तित्व का अपार बौद्धिक विकास हुआ है।

1.3.3 अनुसंधान के प्रकार

शोध को विभिन्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है, जैसे कि शोध पद्धति के आधार पर, उपयोगकर्ता समूह के आधार पर, इससे उत्पन्न ज्ञान के आधार पर शोध समस्या के आधार पर इत्यादि।

1. **ऐतिहासिक अनुसंधान (Historical Research)** - इसमें अतीत की घटनाओं,संसाधनों, समूहों, संगठनों, परम्पराओं का विवेचन, अन्वेषण तथा विश्लेषण किया जाता है।

   उदाहरणार्थ - व्यक्ति-वृत्त अध्ययन (Biographical) तथा नैदानिक अनुसंधान (Diagnostic Research),

2. **विवरणात्मक अनुसंधान (Descriptive Research)** - इसकी वर्तमान की घटनाओं, तथ्यों तथा सम्बन्धों के महत्व तथा वर्तमान स्वरूप का पता लगाना ही उद्देश्य होता है। उदाहरणार्थ - क्षेत्र-अध्ययन तथा साक्षात्कार।

3. **प्रायोगिक अनुसंधान (Experimental Research)** - इसमें चरों के प्रकर्यात्मक सम्बन्धों का अध्ययन कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर किया जाता है तथा चरों में सम्बन्धों का पता लगाना इसका उद्देश्य है। उदाहरणार्थ - कार्य-कारण सम्बन्ध शोध।

4. **मूलभूत अनुसंधान (Fundamental of Basic Research)** - वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों तथा सिद्धान्तों की खोज, भौतिक विज्ञान में शोध।

5. **अनुप्रयुक्त अनुसन्धान (Applied Research)** - इसका उद्देश्य व्यवहारिक समस्याओं का समाधान वर्तमान समय में ढूँढना होता है। उदाहरणार्थ - क्रियात्मक अनुसंधान, अभिप्रेणात्मक अनुसंधान।

6. **मात्रात्मक शोध (Quantitative Research)** - इसमें संरचित प्रश्नों के प्रयोग, जहाँ प्रतिक्रिया विकल्प और उत्तरदाताओं की संख्या पूर्वनिर्धारित होती है, और एक बड़ी संख्या में उत्तरदाता अपनी प्रतिक्रिया देते हैं जिसका पूर्वनिर्धारित मापों के आधार पर परिमाणन किया जाता है। उदाहरणार्थ - सर्वेक्षण एवं अवलोकनात्मक शोध।

7. **गुणात्मक अनुसंधान Qualitative Research)** - इसमें व्यक्ति, वस्तु, परिस्थिति इत्यादि की गुणात्मक व्याख्या एवं विश्लेषण किया जाता है। उदाहरणार्थ - साहित्यिक शोध, ऐतिहासिक शोध।

8. **अनुभवजन्य अनुसंधान (Impirical Research)** - प्रयोग अथवा अवलोकन पर आधारित एवं इसका उद्देश्य एक विशिष्ट प्रश्न का हल ढूँढने के लिए अथवा एक परिकल्पना का परीक्षण करने के लिए आयोजित किया जाता है।

9. **कारणात्मक अनुसंधान (Causal Research)** - किसी घटना अथवा क्रिया में सम्मिलित चरों में कारण- प्रभाव सम्बन्ध (Cause-effect relation) के अध्ययन से संबन्धित शोध इस श्रेणी में आता है।

बोधात्मक प्रश्न (क)

रिक्त स्थान भरो -

1. अनुसंधान चिन्तन की एक ऐसी क्रमबद्ध तथा विशुद्ध प्रविधि है, जिसमें ---------- तथा ---------- का उपयोग इस उद्देश्य से किया जाता है, ताकि एक समस्या का अधिक समुचित समाधान उपलब्ध हो सके।
2. ---------- अनुसंधान वैज्ञानिक तथ्यों, नियमों तथा सिद्धान्तों की खोज से संबंधित है।
3. अनुसंधानकर्ता को उठायी गयी समस्या के आधार पर एक ऐसी उपयुक्त

परिकल्पना की रचना करनी होती है जिसका कि --------- तथा ---------- अध्ययन सम्भव हो और जो उठायी गयी समस्या का एक समुचित संबन्धित है, उत्तर दो।

4. ---------- से अभिप्राय यह है कि अध्ययन पक्षपात रहित व पूर्वाग्रह रहित होना चाहिए।

5. अन्तिम चरण में, सम्पूर्ण अनुसंधान प्रक्रम के आधार पर एक नियमबद्ध, संक्षिप्त तथा स्पष्ट --------- प्रस्तुत किया जाता है।

1.4 अनुसंधान समस्या का चयन एवं उसकी परिभाषा

सामाजिक अनुसंधान में समस्या का चयन एवं उसका प्रतिपादन अथवा पहचान सामाजिक अनुसंधान के सफल संचालन के लि अत्यन्त आवश्यक है। ए. आइन्सटीन तथा एन.इन्फील्ड ने कहा है कि ''समस्या का प्रतिपादन प्रायः इसके समाधान से अधिक आवश्यक है।'' सामाजिक अनुसंधान की प्रक्रिया में अनुसंधान समस्या का चयन एवं उसका प्रतिपादन अनुसंधान प्रक्रिया का प्रथम महत्वपूर्ण चरण है। समस्या वस्तुतः एक प्रश्नवाची वाक्य अथवा कथन है जो यह पूछता है कि दो अथवा दो से अधिक चरों के बीच क्या सम्बन्ध है।

एक अनुसन्धानकर्ता को अनुसंधान समस्या के चयन से पूर्व स्वयं तो निम्नलिखित प्रश्न पूछने चाहिए :

1. क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिस पर कोई कार्य पहले किया जा चुका है? यदि हाँ, तो क्या इस कार्य का कोई लिखित स्वरूप उपलब्ध है? यदि हाँ, तो क्या यह अनुसंधानकर्ता की पहुँच के अन्तर्गत हैं?

2. क्या अनुसंधान शीर्षक समाज के लिए उपयोगी है? क्या इसके परिणाम अनुसंधानकर्ता की व्यक्तिगत अभिरूचियों इच्छाओं, मूल्यों एवं मान्यताओं के अनुकूल है?

3. क्या इसके परिणामों से अनुसंधानकर्ता को स्वयं भी आय, यश इत्यादि के रूप में कुछ लाभ प्राप्त हो सकते हैं?

4. क्या अनुसंधान शीर्षक ऐसा है जिसके प्रति समाज द्वारा विरोध व्यक्त किया जा सकता है?

5. क्या अनुसंधान शीर्षक प्रायोगिक है अर्थात इस शीर्षक पर अनुसंधान कार्य करने के लिए जिस प्रकार के तथ्यों की आवश्यकता है क्या वे उपलब्ध हो सकेंगे?

सामाजिक विज्ञानों में समस्या के चुनाव में सामाजिक अनुसंधानकर्ता के अपने व्यक्तिगत इरादे पर्याप्त प्रभाव डालते है। स्वतंत्र विचारधारा, वाले सामाजिक अनुसंधानकर्ता उन समस्याओं पर कार्य करने के विरोध में अपने विचारों को व्यक्त करते हैं जो उनके स्वभाव तथा अभिरूचियों के अनुकूल नहीं होता। यह सत्य है कि अनुसंधान व्यक्तित्व संबंधी पृष्ठभूमि द्वारा प्रभावित होता है फिर भी अनुसंधान समस्या को सामान्य अभिरूचि का विषय बनाने को दिशा में चेतन एवं संगठित रूप से प्रयास करना पड़ता है तथा एक सामान्य पृष्ठभूमि की खोज का कार्य करना पड़ता है क्योंकि इस सामान्यता की पूर्ण अनुपस्थिति में किया गया अनुसंधान इतना अधिक व्यक्तिवादी हो सकता है कि इससे समाज के किसी भी प्रकार से लाभान्वित होने की कोई सम्भावना नहीं रह जाती है। समाज के लिए पूर्णरूपेण अनुपयोगी अनुसंधान कार्य निरर्थक है। यहाँ तक कि विशुद्ध अनुसंधानकर्ता समाज कल्याण के उद्देश्य को अपने ध्यान में रखते हैं तथा समाज के लिए विनाशकारी प्रभाव रखने वाले अनुसंधान कार्य को प्रतिबन्धित करने का प्रयास करते हैं।

विभिन्न मूल्यों से युक्त सामाजिक अनुसंधानकर्ता निश्चय ही विभिन्न प्रकार के अनुसंधान शीर्षकों का चुनाव करते है। किन्तु यह कहना भ्रमपूर्ण है कि अनुसंधान शीर्षकों के चुनाव में वैयक्तिक मूल्य एकमात्र निर्धारक है।

वस्तुस्थिति यह है कि अनुसंधान के शीर्षक का चुनाव पर्यावरण संबंधी कारकों द्वारा प्रभावित होता है और यह कहना अतिशयोक्तिपूर्ण न होगा कि इन कारकों का योगदान व्यक्तित्व संबंधी कारकों की तुलना में कहीं अधिक है क्योंकि यह सत्य है कि सामाजिक अनुसंधानकर्ता के व्यक्तित्व की संरचना का निर्माण वंशानुक्रम एवं जैविक वातावरण से प्राप्त सामाजिक एवं सांस्कृतिक विरासत का योग है और उसे अनुसंधान करने योग्य परिस्थिति वातावरण द्वारा ही प्रदान की जाती है। इसके अतिरिक्त अनुसंधान की उपादेयता प्रमुख रूप से इस पर निर्भर करती है कि यह अनुसंधान कार्य किस सीमा तक वातावरण को मानव -कल्याण हेतु परिवर्तन करने में सहायक सिद्ध होगा। सामाजिक अनुसंधानकर्ता को समाज के लिए उपयोगी समस्या पर कार्य करने के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के लाभ, धन, यश आदि कहीं अधिक मात्रा में प्राप्त हो सकते हैं।

1.4.1 अनुसंधान-समस्याओं के स्त्रोत

इन समस्याओं के प्रमुख स्त्रोत निम्नांकित हैं :

1. **संबंधित साहित्य का अध्ययन** - हम जिस क्षेत्र के विशेषज्ञ हैं या जिस क्षेत्र में अनुसंधान कर रहे हैं उस क्षेत्र के साहित्य का गठन अध्ययन करना समस्याओं के चयन हेतु उपयुक्त होगा। संबंधित साहित्य के अध्ययन के दौरान हमें उस क्षेत्र की प्रमुख समस्याओं एवं आवश्यकताओं का आभास हो सकता है। हमें यह पता लग सकता है कि किन समस्याओं पर पहले कार्य हो चुका है, और जिन समस्याओं पर कार्य हो चुका है, उनके कौन से आयामों पर अभी कार्य किया जा सकता है। संबंधित साहित्य के अध्ययन से हमें यह पता लग सकता है कि शोधकर्ता ने किस विधि को अपनाया है। हम चाहें तो अन्य विधि को अपना कर देख सकते हैं कि क्या परिणाम भिन्न आते हैं।

2. **अनुसंधानों से उदभूत नवीन समस्याएँ** - अनुसंधान कार्य एक निरन्तर चलने वाला प्रक्रम है। एक समस्या सामने आती है उसे हल करने के लिए अनुसंधान किया जाता है और इस अनुसंधान के दौरान नए प्रश्न एवं समस्यायें उपस्थित हो जाती है। इन नए प्रश्नों पर पुनः अनुसंधान किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने अन्तरिक्ष यानों का आविष्कार किया और मानव ने आन्तरिक्ष यात्रा प्रारम्भ की। प्रत्येक अन्तरिक्ष यात्रा ने कई प्रश्न एवं समस्यायें वैज्ञानिकों के सामने उपस्थित की, जिन पर वैज्ञानिक अनुसंधान कर रहे हैं। इस प्रकार समस्यायें, अनुसंधान, नई समस्यायें और फिर अनुसंधान, यह एक निरन्तर चलने वाला प्रक्रम है। अतः शोधकर्ता यदि पूर्ण किये गये अनुसंधान को पढ़े तो उसे अनेक नई समस्यायें दिखाई दे सकती हैं।

3. **वैज्ञानिक एवं तकनीकी प्रगति के फलस्वरूप उत्पन्न समस्यायें** - विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति का प्रभाव शिक्षा जगत पर हुए बिना नहीं रह सकता। शिक्षा जगत में नवीन साधन सुविधाओं का उपयोग किस प्रकार किया जा सकता है यह एक महत्वपूर्ण शोध का क्षेत्र हो सकता है। अध्यापन मशीनों का आविष्कार, टेलीविजन, चलचित्र, टेपरिकार्डर आदि का विभिन्न शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए उपयोग इस बात का प्रमाण है कि विज्ञान एवं तकनीकी प्रगति शिक्षा जगत को प्रभावित किए बिना नहीं रहती।

4. सिद्धान्त से नई समस्याओं का स्त्रोत - जैसा पहले कहा जा चुका है कि प्रत्येक सिद्धान्त नये प्रश्न उत्पन्न करता है। इनको परखने के लिए हम नये अनुसंधान संचालित कर सकते हैं।अतः सिद्धान्त भी अनुसंधान समस्याओं का महत्वपूर्ण स्त्रोत है। कई बार

एक सिद्धान्त किसी नई घटना को समझाने में असफल हो जाता है। ऐसी परिस्थिति में अनुसंधान के आधार पर नये सिद्धान्त का प्रतिपादन किया जाता है या उसी में परिवर्तन, परिवर्द्धन किया जाता है।

1.4.2 अनुसंधान की समस्याओं के लक्षण

अनुसंधान कर्ता की समस्या का चयन करने से पूर्व उसके औचित्य एवं उपयोगिता के संबंध में विचार कर लेना चाहिए। केवल अनुसंधान करना न तो अनुसंधानकर्ता के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकता है न ही विषय की समृद्धि के लिए जिसमें कि अनुसंधान किया जा रहा है। समस्या को चुनने के पूर्व यदि कुछ कसौटियों पर उसे परख लें तो उचित होगा। इस प्रयोजन हेतु समस्या की उपयुक्तता को जाँचने की कतिपय निम्नांकित कसौटियों की चर्चा की गई है :

1. **नवीनता** - समस्या का चयन करने के पूर्व हमें संबंधित साहित्य के अध्ययन से यह पता लगा लेना चाहिए कि कहीं इस समस्या का हल पहले से ही निकाला तो नहीं गया। एक समस्या पर पुनः कार्य करने से क्षति होती है। ऐसे कई उदाहरण मिलते हैं जिनमें अनुसंधानकर्ताओं को कार्य समाप्त करने के उपरान्त यह पता लगा कि इस समस्या पर पहले ही पर्याप्त कार्य हो चुका है। संबंधित साहित्य का पूर्ण अध्ययन न करने के कारण उच्चकोटि के वैज्ञानिक ने भी ऐसी भूल कर दी थी। उन्होंने सूक्ष्म जीवाणुओं के संबंध में अनुसंधान कर यह पता लगाया कि ये जीवाणु बिना श्वास क्रिया के जीवित रहते हैं जबकि यह तथ्य दो शताब्दियों पहले ही अन्य वैज्ञानिकों ने पता लगा लिया था। अतएव एक उपयुक्त समस्या का सर्वप्रथम लक्ष्य होना चाहिए नवीनता। यहाँ यह कह देना उपयुक्त होगा कि एक बार किसी समस्या पर शोध किया गया हो और फिर उस पर नए संदर्भ में शोध किया जाये तो समस्या की नवीनता समाप्त नहीं होती।

2. **समस्या की उपयोगिता** - समस्या को चुनते समय यह बात ध्यान रखना चाहिए कि यह समस्या कितनी महत्वपूर्ण है। क्या इस अनुसंधान से प्राप्त तथ्य शिक्षा के स्तर को ऊँचा उठाने में या शिक्षा की समस्या को सुलझाने में मदद कर सकते है। कोई अनुसंधान तभी सार्थक माना जा सकता है जब उसके फलस्वरूप वर्तमान परिस्थितियों में सुधार लाने में मदद मिले।

3. **अनुसंधान की रूचि एवं योग्यता** - समस्या अच्छी हो, किन्तु अनुसंधानकर्ता की उसमें रूचि न हो तो ऐसी समस्या लेना व्यर्थ होगा। अनुसंधान तो स्वप्रेरित प्रक्रम है। जब तक इस प्रक्रिया में आन्तरिक प्रेरणा नहीं होगी कार्य उच्च कोटि का नहीं होगा।

पदोन्नति हेतु यदि हम कोई शोध कार्य हाथ में ले लें तो वह इतना प्रभावोत्पादक नहीं होगा। समस्या में रूचि पूर्णतया बौद्धिक प्रेरणा के फलस्वरूप होनी चाहिए। किसी पूर्वाग्रह को सिद्ध करने के लिए बहुत से शोध कार्य हाथ में लिए जाते है। उनकी उत्पादकता सीमित ही होती है।

समस्या में रूचि के साथ-साथ समस्या पर कार्य करने के लिए अनुसंधानकर्ता में आवश्यक विशेष योग्यता का होना अनिवार्य है। बालकों में गणित की धारणाओं के विकास के संबंध में शोध कार्य करने वाले अनुसंधानकर्ता में यदि गणित विषय की योग्यता नहीं हो तो उसका शोधकार्य बहुत छिछला होगा।

4. आवश्यक सामग्री एवं अन्य साधनों की उपलब्धि - कई बार समस्यायें अच्छी होते हुए भी आवश्यक सामग्री एवं साधनों के अभाव में हम अनुसंधान कार्य नहीं कर सकते। उदाहरणार्थ यदि हम यह पता लगाना चाहें कि शिक्षकों के स्थानान्तरण में कौन कौन से कारक प्रभावी हैं तो इस समस्या के लिए आवश्यक सामग्री मिलना बहुत कठिन है। कुछ कारक ऐसे हो सकते हैं जिनके संबंध में कोई भी व्यक्ति चर्चा करने में हिचकिचाहट अनुभव कर सकता है। कभी कभी ऊपर देखने में तो एक कारक हो और वास्तव में स्थानान्तरण किसी अन्य कारण से किया गया हो। अतः यह देख लेना चाहिए कि जो तथ्य हमें शोध कार्य के लिए चाहिए क्या वे उपलब्ध हो सकते हैं? जैसे यदि हमें शिक्षकों के गोपनीय अभिलेख देखने की आवश्यकता हो तो क्या हमें यह प्रतिवेदन उपलब्ध हो सकते है।? फिर यह भी पता लगा लेना चाहिए कि क्या पाठशाला के प्रधानाचार्य हमें आवश्यक परीक्षण की अनुमति दे देंगे। जिन व्यक्तियों से हमें साक्षात्कार करना है क्या वे उसके लिए तैयार हो जायेंगे।

सामग्री एकत्रित करने की समस्या के कारण हमें कुछ समस्यायें छोड़नी पड़ सकती हैं । उसी प्रकार कुछ साधन अथव कुशलताओं के अभाव में समस्याओं पर शोध कार्य करना सम्भव नहीं होता। कभी कभी साधनों के अभाव में कुछ शोध कार्य नहीं किए जा सकते जैसे किसी शोध कार्य में आवश्यक मनोवैज्ञानिक टेस्ट के अभावों में यह शोध कार्य असम्भव हो जाता है। कई बार सांख्यिकी के कुछ विशिष्ट तरीकों को, जैसे कारक विश्लेष्ज्ञण को काम में लेना, न जानने के कारण हमें कुछ समस्याओं को छोड़ना पड़ता है।

5. समय एवं आर्थिक पक्ष - समस्या चुनते समय हमें यह ध्यान में रखना चाहिए कि हमारे पास उपलब्ध समय कितना है एवं इसमें व्यय कितना होगा? विशेषकर स्नातकोत्तर विद्यार्थियों को तो इसका बहुत ध्यान रखना चाहिए क्योंकि उन्हें एक सीमित

काल में शाोध कार्य समाप्त करना होता है और उनके आर्थिक साधन सीमित होते हैं।

1.4.3 समस्या की पहचान अथवा निर्वचन

अनुसंधान समस्या के चयन के बाद उसके निर्वचन या पहचान की समस्या आती है। समस्या की पहचान से हमारा आशय अनुसंधान की समस्या के समस्त पक्षों के स्पष्टीकरण से है। जब तक अनुसंधानकर्ता समस्या का प्रतिपादन नहीं कर लेता तब तक इस बात से अनभिज्ञ होता है कि वस्तुतः उसे क्या करना है एवं किन प्रश्नों को खोजना है। एक अनुसंधानकर्ता को समस्या के प्रतिपादन में निम्नांकित प्रश्न स्वयं से पूछने चाहिए -

1. अनुसंधान समस्या के विषय में उसकी जानकारी कितनी है?
2. इस जानकारी के विभिन्न स्रोत क्या हैं तथा उनकी विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता की सीमा क्या है?
3. हम इस उपलब्ध जानकारी की पृष्ठभूमि में, यदि कोई हो, क्या जानकारी और प्राप्त करना चाहते है। तथा क्यों यह जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं?
4. जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इसकी प्राप्ति किन किन स्रोतों, साधनों एवं ढंगों का प्रयोग करते हुए हो सकती है?
5. जिस प्रकार की जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं इसपर कितने समय, धन, एवं प्रयासों के व्यय की आवश्यकता होगी तथा क्या इस व्यय के अनुरूप हमें परिणाम प्राप्त हो सकेंगे?
6. जो जानकारी हम प्राप्त करना चाहते हैं उसकी प्राप्ति के लिए किये जाने वाले प्रयासों का मार्गदर्शन किस प्रकार की मान्यताओं एवं परिकल्पनाओं द्वारा किया जायेगा?
7. क्या इन परिकल्पनाओं के अन्तर्गत प्रयुक्त किए जाने वाले चरों, अवधारणाओं, वाक्य विन्यासों इत्यादि की स्पष्ट परिभाषायें एवं परिकल्पनाओं द्वारा किया जायेगा?
8. इस जानकारी से, जिसे हम प्राप्त करना चाहते हैं, कौन लोग लाभान्वित हो सकते हैं? क्या यह जानकारी प्राप्त करना इस पर होने वाले व्यय की दृष्टि से उचित है?

1.5 परिस्थिति विश्लेषण अथवा क्षेत्र निर्धारण

विषय के चुनाव के बाद हमें अध्ययन के क्षेत्र का निर्णय करना होता है बहुधा अनुसंधान प्रारम्भ करने वाले विद्यार्थी बहुत बड़ा क्षेत्र ले लेना चाहते हैं। वे भूल जाते हैं कि अनुसंधान का अर्थ है अल्प के विषय में अधिक ज्ञान प्राप्त करना अर्थात गहन अध्ययन करना। यदि बहुत बड़ा क्षेत्र लिया जाये तो हमारा अध्ययन मात्र सतही रह जाने की आशंका है। अध्ययन क्षेत्र में विद्यार्थी को तीन प्रकार की सीमाओं पर सोचना चाहिए - 1, ज्ञान की शाखा विशेष की सीमाएँ, 2. भौगोलिक सीमाएँ, और 3. काल की सीमाएँ ।

1. **ज्ञान की शाखा विशेष की सीमाएँ** - ज्ञान की प्रत्येक शाखा का विभाजन एक विशेष ढंग से होता है, जैसे - लोक प्रशासन का विद्यार्थी किसी विभाग को चुन सकता है, राजनीति शास्त्र का विद्यार्थी अध्ययन के लिए किसी दल या प्रभावी गुट को चुन सकता है और समाज विज्ञान का विद्यार्थी किसी समुदाय, जाति या जन-जाति को चुन सकता है। इस प्रकार विषय की अपनी स्वाभावित सीमाओं के अनुसार क्ष्ज्ञेत्र का निर्णय करना चाहिए।

2. **भौगोलिक सीमाएँ** - हमें देश की भौगोलिक स्थिति पर भी विचार करना चाहिए। जैसे किसी विभाग के प्रशासन के दो अंग होते हैं - मुख्यालय और क्षेत्र। यदि विद्यार्थी मात्र मुख्यालय का अध्ययन करता है तो उसका कार्यक्षेत्र मुख्यतया राजधानी में होने की सम्भावना है, किन्तु यदि वह क्षेत्र के कार्यालयों का अध्ययन करता है तब उसे जिलों, खण्डों, ग्रामों आदि में जाने की आवश्यकता होगी। उसे चाहिए कि वह प्रारम्भ में ही निश्चित करे के किस अंग का कितना अध्ययन उसे करना है। उदाहरणार्थ, यदि उसे जिले के कार्यालयों का अध्ययन करना हो तो कुछ जिलों का अध्ययन कर सकता है। इन जिलों का चयन किस प्रकार करना चाहिए, यह एक अलग प्रश्न है। यहाँ यह समझ लेना अपने आप में परिपूर्ण है कि कुछ जिलों का गहन अध्ययन सब जिलों के छिछले अध्ययन से अधिक मूल्यवान हो सकता है। इसलिए अपने प्रयत्न और परिश्रम का व्यर्थ प्रसार नहीं करना चाहिए।

3. **काल की सीमाएँ** - सीमा का तीसरा निर्णय काल या समय के संदर्भ में करना चाहिए। समाज परिवर्तनशील है। विभागीय संगठन, लोगों की अभिवृत्तियाँ, परिजनों की अवस्था आदि सभी कुछ बदलते रहते हैं। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि प्रत्येक अध्ययन काल का स्पष्ट संकेत कर दिया जाए। यदि विद्यार्थी परिवर्तन की प्रक्रिया का

ही अध्ययन करना चाहे तब आवश्यक है कि यह स्पष्ट कर दिया जाए कि किस काल में होने वाले परिवर्तन का अध्ययन किया जा रहा है। जैसे यदि हम यह जानना चाहते हैं कि किसी बैंक के प्रशासन पर राष्ट्रीयकरण का क्या प्रभाव पड़ा तो हमें राष्ट्रीय करण के पहले और बाद के उसके प्रशासन का अध्ययन करना होगा। यदि हमारा अनुमान है कि राष्ट्रीयकरण के पहले और बाद के तीन तीन वर्षों का अध्ययन हमारे उद्देश्य के लिए पर्याप्त होगा तो हमें इसका स्पष्ट संकेत कर देना चाहिए।

विषय के क्ष्त्र का स्पष्टीकरण तीन स्थानों में किया जा सकता है - 1. शीर्षक, 2. भूमिका और 3. प्रथम अध्याय। इनमें से जहाँ जिस प्रकार का संकेत देना उपयुक्त हो, दे देना चाहिए। जैसे शीर्षक में काल का संकेंत आसानी से दिया जा सकता है किन्तु सम्भव है दूसरे प्रकार की सीमाओं का संकेत यहाँ देना उपयुक्त न हो। तब वह स्पष्टीकरण भूमिका या प्रथम अध्याय में देना चाहिए।

1.6 उद्देश्यों का निर्धारण

विषय और उसके क्षेत्र का निर्णय करने के साथ-साथ शोध के उद्देश्यों पर गहराई से सोचना चाहिए। ज्ञान अथाह है और कोई व्यक्ति सब कुछ नहीं जान सकता, इसलिए प्रारम्भ में यह निर्णय आवश्यक है कि क्या क्या पता लगाना है?

मान लें कि राजनीति शास्त्र का एक विद्यार्थी चुनाव का अध्ययन करना चाहता है। विषय के निर्णय के साथ साथ उसने यह निर्णय कर लिया है कि उसे अगले आम चुनाव के समय किसी चुनाव क्षेत्र में अध्ययन करना है। इस प्रकार विषय और उसके क्षेत्र का निर्णय वह कर चुका है। और अब उसे उद्देश्यों का निर्णय करना है। इस प्रकार प्रश्न यह है कि वह जानना क्या चाहता है? यदि वह यह जानना चाहता है कि उस चुनाव क्षेत्र में किस उम्मीदवार को कितने वोट मिले तो यह जानकारी उसे चुनाव के प्रकाशित परिणाम से मिल सकती है। सम्भव है कि वह यह जानना चाहता है कि विभिन्न राजनीतिक दलों की क्या स्थिति रहीं । तब वह ये देखेगा कि कौन सा उम्मीदवार किस दल से खड़ा हुआ था। यदि वह यह जानना चाहे कि चुनाव की तैयारी और परिणाम में क्या संभव था तो वह विभिन्न दलों और उम्मीदवारों द्वारा किए गये चुनाव प्रचार का अध्ययन करेगा। यदि वह यह सोचता है कि वोट प्राप्त करने में राजनीतिक दल की नीति महत्वपूर्ण थी या दल का संगठन और उसके द्वारा नागरिकों की सेवा कैसी थी, तब वह इनका अध्ययन करना चाहेगा। सम्भव है वह यह जानना चाहे कि लोग अपना वोट देने का निश्चय किस प्रकार करते है।। इस प्रकार उसका उद्देश्य वोट देने का निश्चय पर

राजनीतिक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक प्रभावों का अध्ययन हो सकता है। तब वह यह सब जानना चाहेगा कि उस क्षेत्र में कौन लोग शक्तिशाली थे और उन्होंने किसे और कैसे प्रभावित किया, विभिन्न वर्गों और समूहों ने किसे वोट दिए, मतदाताओं की अभिवृत्तियाँ किस प्रकार की थीं, विभिन्न अभिवृत्तियों और वोट के निर्णय में क्या संबंध था, आदि। विद्यार्थी को चाहिए कि वह प्रारम्भ में निश्चय कर लें कि उसके अध्ययन के उद्देश्य इनमें से कौन से हैं? अपने उद्देश्यों का ब्यौरेवार वर्णन कर देना चाहिए अर्थात उनकी एक सूची बना देनी चाहिए।

यहाँ यह स्पष्ट रहना चाहिए कि बड़े उद्देश्यों में से छोटे उद्देश्य निकलते हैं। उदाहरणार्थ यदि वह यह जानना चाहता है कि मतदान पर कौन कौन से प्रभाव पड़ते हैं तो उसे स्पष्ट करना चाहिए कि वह राजनीतिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, प्रभावों का अध्ययन करना चाहता है। यहाँ सम्भव है कि वह मतदाताओं के व्यक्तित्व का प्रभाव देखना चाहे या इसके स्थान पर वह मतदाताओं की जानकारी का प्रभाव देखना चाहे। शोधकर्ता के लिए आवश्यक है कि वह प्रारम्भ में ही सोंच ले कि इनमें से किसका अध्ययन उसे करना है और वह इसको स्पष्ट कर दें। मान लें कि उसे अभिवृत्तियों का प्रभाव देखना है तो प्रश्न उठता है, कौन कौन सी अभिवृत्तियों का। अभिवृत्तियों की संख्या तो बहुत बड़ी हो सकती है, प्रश्न यह है कि शोधकर्ता इनमें से किनको चुनता है। यह बहुत महत्वपूर्ण है कि वह अध्ययन के लिए चुनी हुई अभिवृत्तियों को प्रारम्भ में ही स्पष्ट कर दें। उक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र का उद्देश्य निर्धारित करना अनिवार्य है।

1.7 सारांश

अनुसंधान अथवा शोध, मानव जाति के लिए आग और पानी जितना ही पुराना है। अनुसंधान सामाजिक विकास तथा आम आदमी के लिए बेहतर जीवन प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। विभिन्न विशेषज्ञों ने शोध को भिन्न भिन्न प्रकार से परिभाषित किया है, पर सभी परीक्षाएं अनुसंधान को ऐसा निरपेक्ष, व्यापक तथा बौद्धिक अन्वेषण माननी है जिसमें एक दी गई समस्या से सम्बन्धित तथ्यों तथा उनमें अर्थों अथवा सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। अनुसंधान चिन्तन की एक ऐसी क्रमबद्ध तथा विशुद्ध प्रविधि है, जिसमें विशिष्ट यन्त्रों, उपकरणों तथा प्रक्रियाओं का उपयोग इस उद्देश्य से किया जाता है ताकि एक समस्या का अधिक समुचित समाधान उपलब्ध हो सके।

सामाजिक अनुसंधान में समस्या का चयन एवं उसका प्रतिपादन अथवा पहचान सामाजिक अनुसंधान के सफल संचालन के लिए अत्यन्त आवश्यक है। अनुसंधानकर्ता को समस्या का चयन करने से पूर्व उसके औचित्य एवं उपयोगिता के सम्बन्ध में विचार कर लेना चाहिए। विषय और उसे क्षेत्र का निर्णय करने के साथ-साथ शोध के उद्देश्यों पर गहराई से सोचना चाहिए।

1.8 बोध प्रश्न

1. अनुसंधान किसे कहते हैं? यह कितने प्रकार का होता है?

2. अनुसंधान समस्या की पहचान तथा अनुसंधान उद्देश्यों के निर्धारण पर एक सुबोध लेख लिखिये।

1.9 संदर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

इकाई - 2 : अनुसंधान प्रक्रिया एवं अवधारणाओं का निर्माण
(Research Process and Formulation of Concepts)

इकाई की रूपरेखा-

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 अनुसंधान के विभिन्न चरण

2.3 अवधारणा का अर्थ एवं परिभाषायें

2.3.1 अवधारणा की विशेषतायें

2.3.2 सामाजिक अनुसंधान में अवधारणा का महत्व

2.4 सारांश

2.5 बोध प्रश्न

2.6 सन्दर्भ पुस्तकें

2.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे -

- अनुसंधान प्रक्रिया,
- अनुसंधान प्रक्रिया में अवधारणा का महत्व,
- अवधारणा का अर्थ एवं परिभाषाएँ,
- अवधारणा की विशेषताएँ, तथा
- सामाजिक अनुसंधान में अवधारणाओं का महत्व एवं सम्प्रेषण की समस्याएँ ।

2.1 प्रस्तावना

अनुसंधान प्रक्रम का स्वरूप सभी विज्ञानों में एक समान नहीं होता। अनुसंधान प्रक्रिया एक चरणबद्ध एवं आपस में संबंधित क्रियाओं का संयोजन है जो कि शोध प्रश्न का सही उत्तर ढूँढने में सहायक होती है। भौतिक विज्ञान के अनुसंधानों के प्रक्रम सामाजिक विज्ञान में होने वाले अनुसंधानों के प्रक्रम से कुछ भिन्न रहते हैं। अनुसंधान

के प्रक्रम को नियमबद्ध रूप से क्रियान्वित करने के पश्चात प्राप्त निष्कर्षों का प्रतिवेदन ही अन्ततः अनुसंधान रिपोर्ट के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान में अवधारणाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। तथ्यों के एक वर्ग या समूह की संक्षिप्त परिभाषा को अवधारणा कहा जाता है। प्रत्येक विज्ञान को अपने ज्ञान का विकास करने के लिए कुछ निश्चित प्रघटनाओं का अध्ययन एवं अवलोकन करना होता है। यह अध्ययन करते हुए जब वह यथार्थ के कुछ निश्चित पक्षों के बारे में सूचनायें प्राप्त करता है तो वे सूचनायें तथ्य कहलाती है। लेकिन कोई भी वैज्ञानिक केवल तथ्यों का संकल्न मात्र ही नहीं करता बल्कि उन तथ्यों की समानताओं, असमानताओं, विशिष्टताओं, अविशिष्टताओं एवं लक्षणों आदि के आधार पर कुछ प्रस्थापनाओं का निर्माण करता है। ये प्रस्थापनायें तथ्यात्मक अध्ययनों, सामान्यीकरणों आदि की कसौटी पर रखी जाती है एवं तथ्यों द्वारा सत्य सिद्ध होने पर ही इन्हें सिद्धान्त का दर्जा दिया जाता है।

2.2 अवधारणा का अर्थ एवं परिभाषायें

अवधारणा को परिभाषित करना अत्यन्त कठिन कार्य है क्योंकि अवधारणा का संबंध एक अमूर्त सामान्य विचार से होता है जो कि किसी घटना, प्रक्रिया, एक प्रकार के अनुरूप तथ्यों के विषय में सोच विचार कर व उसके विभिन्न तत्वों के परस्पर संबंधों को ध्यान में रखकर बनाया जाता है।

साधारण शब्दों में विचरण, जिसका अवलोकन किया जाना है, उसको परिभाषित करते हैं। ये वे चर होते हैं जिनके मध्य आनुसंगिक संबंधों की स्थापना की जाती है। जब इन प्रस्थापनाओं में तार्किक संबंध स्थापित किया जाता है तो सिद्धान्त का जन्म होता है। अवधारणायें घटनाओं को समझने के तरीके है। वैज्ञानिक अवधारणायें अमूर्तिकृत होते हैं जो कि चुने हुए व अधिसीमित क्षेत्र रखने वाले होते हैं। अवधारणायें न केवल वैज्ञानिक ढंग के प्रयोग के लिए आवश्यक है, बल्कि वे प्रत्येक मानवीय क्रिया के क्षेत्र में संचार तथा विचारों के लिए आवश्यक है। वैज्ञानिक अवधारणा अमूर्त होती है जो कि चुने हुए व अतिसीमित क्षेत्र से सम्बन्धित होती है। अवधारणाओं को हम वस्तुओं व घटनाओं को समझने के लिए प्रयुक्त किए जाने वाले पद के नाम से भी संबोधित कर सकते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि अवधारणा एक अमूर्त सामान्य विचार होता है जो कि किसी घटना प्रक्रिया एवं एक प्रकार के अनुरूप तथ्यों के विषय में विचार कर उसके विभिन्न तत्वों के परस्पर संबंधों को ध्यान में रखकर बनाया जाता है।

2.2.1 अवधारणा की विशेषतायें (Characteristics of a Concept)

अवधारणा वैज्ञानिक विश्लेषण की एक इकाई है। इस भूमिका को यह ठीक से पूरा कर सके, इसके लिए इसमें कुछ गुणों या विशेषताओं का होना आवश्यक है।

कार्लो लेरट्रसी ने अवधारणा के निम्नलिखित पांच गुणों का उल्लेख किया है -

1. **उपयुक्तता** - अवधारणा का चयन इस प्रकार होना चाहिए कि वह अपना ध्यान अध्ययन के केन्द्रीय विषय पर केन्द्रित करें। इसमें अनुसंधानकर्ता को देखना होगा कि उसके सिद्धान्त के दृष्टिकोण से निम्न वर्ग या मध्यम वर्ग में किन किन लोगों को रखा जाना उपयुक्त होगा।

2. **स्पष्टता** - अवधारणा की परिभाषा परिशुद्ध एवं स्पष्ट होनी चाहिए जैसे नैतिकता अनैतिकता, अपराध के अलग अलग व अनेक अर्थ लगाए जा सकते हैं। इसलिए अनुसंधानकर्ता को यह स्पष्ट करना चाहिए कि वह क्या अर्थ लगा रहा है?

3. **मापनशीलता** - जिस सीमा तक अवधारणा को मात्रात्मक रूप दिया जा सकेगा उसी सीमा तक वह मापा जा सकेगा और परिशुद्धता की प्राप्ति में सहायक होगा। इसलिए यथासम्भव अवधारणा ऐसी होनी चाहिए कि उसे मापा जा सके।

4. **तुलनात्मकता** - एक ही प्रकार की समस्त घटनायें एक जैसी ही नहीं होती हैं, जैसे अपराध में उठाईगीरी व मारपीट से लेकर हत्या तक सम्मिलित है। अनुसंधानकर्ता को यह प्रयत्न करना चाहिए कि उसकी अवधारणा द्वारा संवर्ग के साथ साथ घटना का स्तर भी निश्चित हो जाए, तभी वह तुलना कर सकेगा।

5. **पुनर्परीक्षण** - वैज्ञानिक सिद्धान्तों के लिए यह आवश्यक है कि उनका परीक्षण व पुनर्परीक्षण हो सकें । अनुसंधानकर्ता को अपनी अवधारणाओं का चुनाव इस प्रकार करना चाहिए कि अन्य अनुसंधानकर्ता भी उनका परीक्षण व पुनर्परीक्षण कर सकें।

लेकिन इनके अतिरिक्त भी अवधारणाओं की निम्न सामान्य विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है -

1. अवधारणायें या सम्प्रत्य सामान्यतः तथ्यों पर आधारित एक प्रकार के विचार होते है। जो तथ्यों के समूह या वर्ग के संबंध में जानकारी प्रदान करते हैं।

2. गुडे एवं हैट्ट लिखते हैं कि अवधारणायें किसी घटना का उल्लेख मात्र नहीं होती बल्कि उससे उत्पन्न होने वाले इन्द्रीय अनुभवों तथा प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा उत्पन्न ही गई एक तार्किक रचना होती है।

3. अवधारणायें सम्पूर्ण घटना का नहीं अपितु उसे एक स्वरूप मात्र का प्रतिनिधित्व करती है।

4. यह एक या दो अत्यन्त अर्थपूर्ण शब्दों में ही व्यक्ति किये जाने वाला विचार होता है। एक प्रकार से यह परिभाषा के रूप में व्यक्त किया जा सकने वाला अमूर्तिकरण होता है।

5. प्रत्येक अवधारणा का अपना एक विशिष्ट अर्थ होता है और वह सिद्धान्त के स्तर से निम्न स्तर का अमूर्तिकरण या सामान्यीकरण होता है।

6. वैज्ञानिकों द्वारा प्रयुक्त अवधारणाएं सामान्यतः जटिल अथवा कठिन होने के कारण उनका उपयोग भी विशेष अर्थ व परिस्थिति में किया जाता है।

7. अवधारणाओं में विकास के साथ परिवर्तन भी होता रहता है। वे अपनी प्रकृति, विशेषताएँ अथवा अध्ययन केन्द्र बिन्दु समय समय पर बदल भी सकते हैं।

8. अवधारणा का उद्देश्य यथार्थ को समझने एवं उसे स्पष्ट करने में सामाजिक वैज्ञानिक की सहायता करना होता है।

9. जब अवधारणाओं को निरीक्षण की इकाइयाँ तथा उनकी विशेषताओं के आधार पर वर्गीकृत करने हेतु प्रयोग में लाते हैं तो उसे हम चर कहते हैं। चर अवधारणा की माध्यम विमति है। उदाहरणार्थ, दुर्खीम के सामाजिक विघटन के सिद्धान्त में मानव जनसंख्या को समानता, एकता व विचलन के विरोध के आधारों पर वर्गीकृत किया गया है।

10. अवधारणाएँ उपकल्पना निर्माण में सहयोगी होती है। टी वी बोटोगार के अनुसार नई अवधारणा दो उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होती है। प्रथम, अब तक पृथक पृथक रूप में प्रकट न होने वाली घटनाओं के वर्गों को ये वर्गीकृत अथवा विभाजित करते हैं तथा द्वितीय वे घटनाओं के संक्षिप्त वर्णन व आगे के विश्लेषण में सहायक होती है।

11. अवधारणाएँ ''सिद्धान्त'' का अनिवार्य अंग होती है क्योंकि अवधारणाओं के आधार पर ही ''सिद्धान्त निर्माण'' की नींव रखी जाती है।

12. एक अवधारणा न तो सत्य होती है न असत्य क्योंकि वह तो केवल इन्द्रीय तथ्यों का नामोल्लेख या संकेतीकरण ही होता है। यह मानव इद्रियों को प्रभावित करने

वाले अथवा उनमें अपना प्रतिबिम्ब या संवेदन उत्पन्न करने वाले तथ्यों का एक अमूर्त रूप ही होता है।

13. अवधारणाएँ ''मापनात्मक'' होनी चाहिए। अवधारणाओं को मापना उसकी अमूर्तता पर निर्भर करता है। वह जितनी कम अमूर्त होगी उतनी ही सरलता से उसे मापा जा सकेगा।

14. अवधारणाओं की अस्पष्टताओं को दूर करने के लिए उन्हें ठीक से परिभाषित कर उनका ''मानकीकरण'' किया जाना चाहिए।

15. मिचैल ने अवधारणाओं के लिए निम्न तीन कसौटियों का उल्लेख किया है -

(अ) सूक्ष्मता एवं परिशुद्धता

(ब) प्रानुभवाश्रित आधार

(स) प्रस्तुत सिद्धान्त को समझ सकने योग्य सिद्धान्तों के निर्माण में उपयोगी सिद्ध होने की क्षमता ।

2.2.2 सामाजिक अनुसंधान में अवधारणा का महत्व (Importance of Concept in Social Research)

इस तथ्य से इन्कार नहीं किया जा सकता कि प्रत्येक प्रकार के अनुसन्धान में तथ्यों कें संकलन व उनके विश्लेषण के लिए अवधारणाओं का चयन अत्यधिक महत्वपूर्ण एवं निर्णायक भूमिका वाला होता है। यदि मात्र यथार्थ को ध्यान में राकर ऐसे तथ्यों का संकलन किया जाए जिनमें परस्पर कोई संबंध स्थापित न किया जा सके तो चाहे वह कितने ही गम्भीर उवलोकन का परिणाम क्यों न हो, वह अनुसंधान निष्फल होगा।

सामाजिक अनुसंधान में निम्नांकित अवधारणाओं का उल्लेख किया जाता है, जिनके अभाव में अनुसंधान कार्य ही सम्भव नहीं है -

1. **पद्धति एवं प्रविधि -** पद्ध किसी विषय के अध्ययन की सामान्य प्रणाली होती है। जिसके अनुसार अध्ययन कार्य का संगठन किया जाता है, तथ्यों की विवेचना व निष्कर्षों का निर्धारण किया जाता है। प्रविधि वह तरीका है जिससे वह अध्ययन किया जाता है। इसे निम्नांकित तालिका से अधिक स्पष्ट समझा जा सकता है।

2. **सम सम्भावना** - सम-सम्भावना इस बात की होती है कि यह अवधारणा उस

ज्ञान के सन्दर्भ में है जो उस कथन के बारे में प्राप्त है, जिससे सम्भावित तथ्य का मूल्यांकन किया जाना है। सम-सम्भावना का इस अवधारणा का निदर्शन प्राप्त करने की प्रविधि से निकट का सम्पर्क है।

3. **वैधता** - सामाजिक विज्ञानों में वैधता की अवधारणा की परिभाषा शोधकर्ता द्वारा परिमापन की वह मात्रा प्राप्त करना है जिसे वह प्राप्त करना चाहता था।

4. **विश्वसनीयता** - सामाजिक विज्ञानों में विश्वसनीयता का अत्यन्त महत्व है। विश्वसनीयता यह होती है । जिन पद्धतियों का प्रयोग अनुसंधानकर्ता द्वारा किया गया है। यदि विभिन्न समयों पर उन्हीं का फिर प्रयोग किया जाय तो वे समान परिणाम प्रस्तुत करेंगी।

यदि आप निम्नांकित रणनीतिक सुझावों का अमल करें तो श्रवण क्षमता एवं कुशलता में वृद्धि की अपेक्षा की जा सकती है।

अतः सामाजिक अनुसंधान में अनेक स्वीकृत अवधारणायें है।, जिनके प्रयोग के बिना अनुसंधान की कल्पना ही नहीं की जा सकती है।इन अवधारणाओं की स्पष्टता तथा व्यावहारिक उपयोगिता के ज्ञान के अभाव में किसी भी वैज्ञानिक के लिए शोध कार्य सम्भव नहीं हो सकता। प्रत्येक वैज्ञानिक को अपना अनुसंधान कार्य करने से पूर्व अवधारणाओं की स्पष्टता एवं उनके व्यावहारिक उपयोग व प्रयोग का पर्याप्त ज्ञान अपेक्षित होता है।

2.3 सारांश

अनुसंधान प्रक्रिया एक चरणबद्ध एवं आपस में संबंधित क्रियाओं का संयोजन है जो कि शोध प्रश्न का सही उत्तर ढूँढने में सहायक सिद्ध होता है।

किसी भी वैज्ञानिक अनुसंधान में अवधारणाओं का अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान होता है। तथ्यों के एक वर्ग या समूह की संक्षिप्त परिभाषा की अवधारणा कहा जाता है। अवधारणा, जिन चरों का अवलोकन किया जाना है, उसको परिभाषित करते हैं । ये वे चर होते हैं जिनके मध्य आनुशंगिक संबंधों की स्थापना की जाती है।

2.4 बोध प्रश्न

1. अवधारणा को परिभाषित कीजिए तथा एक आदर्श अवधारणा के लक्षणों का सोदाहरण वर्णन कीजिए।

2. सामाजिक शोध में अवधारणा के महत्व पर प्रकाश डालिये।

2.5 संदर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

इकाई - 3 : अनुसंधान प्ररचना (Exploratory, Descriptive and Experimental Research Design)

इकाई की रूपरेखा-

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 अनुसंधान प्ररचना का अर्थ एवं परिभाषा

3.2.1 अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य

3.2.2 अनुसंधान प्ररचना (अभिकल्प) की विशेषताएँ

3.2.3 अनुसंधान प्ररचना की विषय वस्तु

3.3 अनुसंधान प्ररचना के चरण

3.3.1 अनुसंधान प्ररचना का वर्गीकरण

3.4 प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक अनुसंधान

3.4.1 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य

3.5 विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना

3.5.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य

3.6 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना

3.6.1 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना के प्रकार

3.6.2 केवल ''पश्चात माप'' वाले प्रयोग

3.6.3 ''पूर्व और पश्चात माप'' वाले प्रयोग

3.6.4 प्रयोगात्मक अभिकल्प की आलोचना

3.7 अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध प्ररचना

3.8 सारांश

3.9 बोध प्रश्न

3.10 संदर्भ पुस्तकें

3.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे कि -

- अनुसंधान प्ररचना का अर्थ एवं परिभाषायें,

- अनुसंधान प्ररचना का उद्देश्य, विशेषताएं एवं विषयवस्तु,
- अनुसंधान प्ररचना के चरण एवं वर्गीकरण , तथा
- अनुसंधान प्ररचना के प्रकार : अन्वेषणात्मक अनुसंधान रचना, विवरणात्मक अनुसंधान रचनाएं एवं प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना ।

3.1 प्रस्तावना

कोई अनुसंधान या अन्वेषण मनगढंत नहीं हो सकता। अनुसंधान या अन्वेषण को क्रमबद्ध एवं प्रभापूर्ण ढंग से समय, श्रम एवं लागत के न्यूनतम प्रयासों से संचालित करने से एक अभिकल्प या प्ररचना का निर्माण होता है। जहोदा एवं कुक के अनुसार ''किसी ढंग के प्रयोग द्वारा अनिश्चितता को पूर्ण रूप से समाप्त नहीं किया जा सकता, किन्तु क्रमबद्ध रूप से वैज्ञानिक ढंग का प्रयोग करते हुए अनिश्चितता के इन तत्वों को कम किया जा सकता है। जो सूचना की कमी से उत्पन्न होती हैं अनुसंधान के लिए प्रस्तावित प्रश्नों के विकल्पीय उत्तरों की उपयुक्तता के विषय में निर्णय लेने के लिए आवश्यक परिणामों का संयोग पर आधारित ढंग का प्रयोग करते हुए क्रमबद्ध रूप से यथासम्भव अधिक से अधिक नियंत्रित ढंग का प्रयोग करते हुए प्राप्त किया जाता है। समस्या प्रतिपादन के अन्तर्गत हम सूचना के इन प्रकारों का विशिष्ट विवरण प्रस्तुत करते हैं जो हमें यह आश्वासन देते हैं कि प्रस्तावित प्रश्नों के उत्तर प्रदान करने के लिए इच्छित एवं आवश्यक प्रमाण उपलब्ध हो जायेंगे जबकि अनुसंधान प्ररचना का निर्माण करते हुए हम आवश्यक एवं इच्छित प्रमाणों के त्रुटियों से यथासम्भव बचना तथा प्रयासों, समय एवं लागत को कम करना चाहते हैं।''

इस प्रकार अनुसंधान कार्य करने की योजना या अनुसंधान प्रक्रिया की रूपरेखा को ही अनुसंधान अभिकल्प कहा जाता है। इसका स्वरूप, समस्या एवं प्राक्कल्पना के निर्धारण के अनुसार ही होता है। शोध अधिकल्प तथ्यों के संकलन एवं विश्लेषण सं संबंधित दशाओं को इस तरह आयोजित करता है कि वे कार्य विधि में चित करती हुई शोध के प्रयोजन के साथ संगतिपूर्ण हो सकें।

3.2 अनुसंधान प्ररचना का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning of Research Design)

अन्वेषण प्रारम्भ करने से पूर्व हम प्रत्येक अनुसंधान समस्या के विषय में सोच विचार करने के पश्चात यह निर्णय लें कि हमें किन ढंगों एवं कार्य विधियों का प्रयोग

करना है तो नियंत्रण को लागू करने की आशा बढ़ जाती है। अनुसंधान व प्ररचना निर्णय की वह प्रक्रिया है जो उन परिस्थितियों के पूर्व किये जाते हैं जिनमें ये निर्णय का रूप लेते हैं। एक अनुसंधान प्ररचना आंकड़ों के एकत्रीकरण एव विश्लेषण के लिए दशाओं का प्रबन्ध करती है। जो अनुसंधान के उद्देश्यों की संगतता को कार्यरीतियों में आर्थिक नियन्त्रण के साथ सम्मिलित करने का उद्देश्य रखती है।

एफ.एन. कर्लिजर लिखते हैं कि ''अनुसंधान प्ररचना अन्वेषण की योजना, संरचना एवं एक रणनीति है जिसकी रचना इस प्रकार की जाती है। कि अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त हो सकें तथा विविधताओं को नियंत्रित किया जा सके। यह प्ररचना या योजना अनुसंधान की सम्पूर्ण रूपरेखा अथवा कार्यक्रम है, जिसके अन्तर्गत प्रत्येक वस्तु की रूपरेखा सम्मिलित होती है जो अनुसंधानकर्ता उपकल्पनाओं के निर्माण एवं उनके परिचालनात्मक अभिप्रायों से लेकर आँकड़ों के अन्तिम विश्लेषण तक करता है।''

निष्कर्षतः अनुसंधान प्ररचना एक ऐसी योजना या रूपरेखा है जो समस्या के प्रतिपादन से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन के अन्तिम चरण तक के विषय में विकल्पों पर ध्यान देकर इस प्रकार से निर्णय लेती है कि न्यूनतम प्रयासों, समय एवं लागत के व्यय से अधिक अनुसंधान उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सके।

3.2.1 अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य (Objectives of Research Design)

सामान्यतः किसी भी अनुसंधान में व्यावहारिक अनुसंधान समस्या, वैज्ञानिक अथवा बौद्धिक अनुसंधान समस्या एवं सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं को विकसित करने की समस्याएँ हो सकती है। व्यावहारिक अनुसंधान समस्याएं, समस्याओं के समाधान एवं सामाजिक नीतियों के निर्धारण में सहायता प्रदान करती है, जबकि वैज्ञानिक एवं बौद्धिक अनुसंधान का सम्बन्ध मौलिक वस्तुओं से होता है। इसके अलावा कुछ अनुसंधान ऐसे होते हैं जिनका उद्देश्य केवल सैद्धान्तिक व्यवस्थाओं का विकास करना होता है, जिनके आधार पर विचारों का परीक्षण किया जाता है। सामान्यतः प्ररचना के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं - 1. अनुसंधान समस्या के उत्तर प्रदान करना, एवं 2. विविधताओं का नियन्त्रित करना।

अनुसंधान प्ररचना स्वयं इन उद्देश्यों की पूर्ति नहीं करती वरन् ये उद्देश्य अनुसंधानकर्ता द्वारा ही प्राप्त किए जाते हैं। अनुसंधान प्ररचना अनुसंधानकर्ता की इस बात में अवश्य सहायता करती है कि वह अनुसंधान प्रश्नों के उत्तर प्राप्त कर ले तथा विविध त्रुटियों का पता लगा सके।

1. **अनुसंधान समस्या के उत्तर प्रदान करना** - यह अनुसंधान प्ररचना यथा सम्भव प्रामाणिकता, विषयात्मकता, यथार्थता, निश्चयात्मकता एवं बचत के साथ साथ प्राप्त करने में सहायता पहुँचाती है। ऐसा करने के लिए अनुसंधान प्ररचना यथासम्भव उन समस्त प्रमाणों को एकत्रित करने का प्रयास करते है जो समस्या से सम्बन्धित हों। अनुसंधान उपकल्पनाओं के रूप में समस्या को इस तरह प्रस्तुत किया जाता है कि इनका आनुभाविक परीक्षण या जाँच सम्भव हो सके। जितनी सम्भावनाएं परीक्षण की होती है उतने प्रकार की अनुसंधान प्ररचनाएं तैयार की जा सकती है। इन उपकल्पनाओं के परीक्षण परिणाम इस बात पर निर्भर करते हैं कि पर्यवेक्षण करने और परिणाम निकालने के लिए किन किन ढंगों या प्रविधियों का प्रयोग किया जा रहा है। विश्वस्तरीय परिणाम प्राप्त करने के लिए चरों के मध्य पाए जाने वाले सम्बन्धों के उपयुक्त सन्दर्भ ढाँचे की स्थापना की जाती है।

2. **विविधताओं को नियन्त्रित करना-** अनुसंधान प्ररचना विविधिताओं को नियन्त्रित करने में भी अनुसंधानकर्ता की सहायता करती है। अनुसंधान के समय विविध त्रुटियों की सम्भावना बनी रहती है। जिन्हें कम करने के दो प्रमुख ढंग हैं -

(क) अनुसंधान परिस्थितियों को अधिक से अधिक नियन्त्रित करते हुए परिमापन के कारण उत्पन्न हुई त्रुटियों को यथा सम्भव कम कीजिए।

(ख) मापों की विश्वसनीयता को बढ़ाइये।

वस्तुतः अनुसंधान प्ररचना के नियन्त्रण का कार्य तकनीकी है। इस अर्थ में अनुसंधान प्ररचना एक नियन्त्रणकारी व्यवस्था है। इसके पीछे पाया जाने वाला प्रमुख ''सांख्यिकी सिद्धान्त'' यह है कि 'क्रमबद्ध विविधताओं को अधिक से अधिक नियन्त्रित कीजिए तथा विविध त्रुटियों को कम से कम कीजिए।' अनुसंधान प्ररचना के प्रथम उद्देश्य में अनुसंधानकर्ता अपने अनुसंधान के लिए चयनित समस्या से सम्बन्धित प्रश्नों के उत्तर प्राप्त करता है और अनुसंधान प्ररचना उसे ये उत्तर प्रामाणिक, वैशवयिक एवं यथार्थ रूप में प्रस्तुत करती है। इसी प्रकार दूसरे उद्देश्य के द्वारा अनुसंधानकर्ता अनुसंधान के दौरान उपस्थित विविधताओं को नियन्त्रित करता है। यह नियन्त्रण भी उसे अनुसंधान प्ररचना से प्राप्त होता है।

3.2.2 अनुसंधान प्ररचना (अभिकल्प) की विशेषताएँ (Characteristics of Research)

अनुसंधान प्ररचना की अनिवार्य एवं आधारभूत विशेषताओं का निम्नाकित प्रकार

से उल्लेख किया जा सकता है -

1. अनुसंधान प्ररचना का सम्बन्ध सामाजिक अनुसंधान से होता है।

2. अनुसंधान प्ररचना अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान की एक निश्चित दिशा का बोध कराती है। इस अर्थ में अनुसंधान प्ररचनाएं एक प्रकार की दिग्दर्शक हैं।

3. अनुसंधान प्ररचना की मुख्य विशेषता सामाजिक घटनाओं की जटिल प्रकृति को सरल रूप में प्रस्तुत करना है।

4. अनुसंधान प्ररचना अनुसंधान की वह रूपरेखा है जिसकी रचना अनुसंधान कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व की जाती है।

5. अनुसंधान प्ररचना की एक और विशेषता अनुसंधान प्रक्रिया के दौरान आगे आने वाली परिस्थितियों को नियंत्रित करना एवं अनुसंधान कार्य को सरल बनाना है।

6. अनुसंधान प्ररचना न केवल मानवीय श्रम को कम करती है बल्कि वह समय एवं लागत को भी कम कर के अनुसंधान के अधिकतम उद्देश्यों की प्राप्ति में सहायता करती है।

7. अनुसंधान प्ररचना अनुसंधान के दौरान आने वाली कठिनाइयों को भी कम करने में अनुसंधानकर्ता की सहायता करती है।

8. अनुसंधान प्ररचना का चयन सामाजिक अनुसंधान की समस्या एवं उपकल्पना की प्रकृति के आधार पर किया जाता है।

9. अनुसंधान प्ररचना समस्या की प्रतिस्थापना से लेकर अनुसंधान प्रतिवेदन के अन्तिम चरण तक के विषय में सभी उपलब्ध विकल्पों के बारे में व्यवस्थित रूप में श्रेष्ठ निर्णय लेने में सहायता करती हैं ।

3.2.3 अनुसंधान प्ररचना की विषयवस्तु (Components of Research Design)

एक सामान्य अनुसंधान अभिकल्प में निम्नलिखित विषयों का उल्लेख किया जाता है।

1. **शोध का विषय -** ऐसा करने से अध्ययन के विषय का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है। तथा उसके क्षेत्र एवं सीमाओं का पता चल पाता है। इसके स्वरूप निर्धारण के लिए सरकारी, गैर-सरकारी, व्यक्तिगत पुस्तकालयों या परिवेश सम्बन्धी उपलब्ध अध्ययन के

स्रोतों का अध्ययन करते हैं।

2. **अध्ययन की प्रकृति** - इसमें शोध का प्रकार एवं स्वरूप निर्धारित करना पड़ता है। यह सांख्यिकीय, व्यक्तिगत, तुलनात्मक, प्रयोगात्मक, विश्लेषणात्मक, अन्वेषणात्मक या मिश्रित प्रकार का हो सकता है।

3. **प्रस्तावना एवं पृष्ठभूमि** - इसमें उस विषय को चुनने की पृष्ठभूमि बतानी पड़ती है तथा उसकी शुरूआत करनी पड़ती है। इससे पता चल जाताहै कि शोधकर्ता की उक्त विषय में रूचि, समस्या एवं स्थिति क्या है? अब तक प्राप्त परिणामों में व्याप्त कमियों एवं त्रुटियों को दूर किया जाना किस प्रकार सम्भव एवं वांछनीय है ? आदि बातों का भी इसमें समावेश होता है।

4. **उद्देश्य** - इसमें अनुसंधानकर्ता अपने उद्देश्य बताता है, उप-उद्देश्य या लक्ष्य भी प्रकट करता है अर्थात प्रमुख एवं सहायक उद्देश्यों का उल्लेख करता है। ये प्रायः चार या पाँच वाक्यों में स्पष्ट किए जाते हैं।

5. **अध्ययन का सामाजिक, सांस्कृतिक, राजनीतिक एवं भौगोलिक सन्दर्भ** - इसमे शोधकर्ता स्पष्ट करता है कि वह किस प्रकार के समाज एवं संस्कृति के पर्यावरण में रह रहा है तथा उसके प्रमुख मूल्य, परम्पराएँ, मान्यताएँ आदि क्या हैं? इसके सन्दर्भ में राजनीतिक व्यवस्था, व्यवहार एवं मूल्य, भौगोलिक सन्दर्भ में मानव व्यवहार को प्रभावित करने वाले तथ्य, स्थिति, जलवायु, प्राकृतिक बनावट, प्रकृति, उत्पादन आदि आते है। यदि सम्भव हो तो आर्थिक परिवेश का भी परिचय दे दिया जाना चाहिए। राजनीतिक शोध को सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक एवं औद्योगिक आयामें में समायोजित करना चाहिए।

6. **अवधारणा, चर एवं प्राक्कल्पना**- इस क्षेत्र में सबसे पहले यदि कोई सिद्धान्त या अवधारणात्मक रूपरेखा के आधार बनाया गया है तो उसका उल्लेख कर प्रमुख अवधारणाओं को स्पष्ट किया जाना चाहिए। जैसे यदि 'भ्रष्टाचार' की अवधारणा को प्रयुक्त किया गया है तो यह बताया जाना चाहिए कि उसे किन अर्थों के प्रयोग किया गया है। इसी तरह यह बताया जा सकता है कि किन किन चरों को केन्द्रीय विषय बनाया जा रहा है तथा उनसे संबंधित कौन कौन सी प्राक्कल्पनाओं का निर्माण किया गया है।

7. **काल निर्देश** - इसमें यह बताया जाता है कि शोध किस समय, काल या परिवेश से संबंधित है। समय राजनीतिक अनुसंधान में एक अतिशय महत्वपूर्ण कारक होता है।

8. **तथ्य-सामग्री के चयन के आधार एवं संकलन प्रविधियाँ** - इसमें तथ्य सामग्री के चयन के आधार बताए एवं निश्चित किए जाते हैं। यहाँ उनका औचित्य भी स्पष्ट कियाय जाना चाहिए। ये आधार प्रलेखीय, भौतिक अथवा वैचारिक प्रेक्षणीय आदि हो सकते हैं। तथ्य संकलन की प्रविधियाँ मानवीय या मशीनी हो सकती है। अवलोकन, प्रश्नावली, साक्षात्कार, प्रक्षेपण आदि युक्तियों के द्वारा तथ्य एकत्र किये जा सकते हैं।

9. **विश्लेषण एवं निर्वचन -** सामग्री के एकत्रित होने के बाद उसके सारणीयन, वर्गीकरण एवं विश्लेषण प्रणालियों का संकेत दिया जा सकता है। उसके निर्वचन में कौन सी पद्धतियों का सहारा लिया जाएगा अथवा उसकी सामान्यतया या प्रामाणिकता की मात्रा क्या होगी, आदि बातों का उल्लेख न्यूनाधिक मात्रा में किया जा सकता है।

10. **सर्वेक्षण काल एवं धन** - इसमें यह भी संकेत दिया जाना चाहिए कि सर्वेक्षण कितने समय के भीतर सम्पन्न हो जायेगा? इसी प्रकार शोध में लगने वाले समय एवं धन का अनुमान भी बताया जाना चाहिए।

एक अच्छे अन्वेषण-रूपॉकन या प्ररचना में अनेक विशेषतायें पाई जाती हैं। यह शोध प्रक्रिया के दौरान आवश्यकतानुसार संशोधित एवं परिवर्तित किए जा सकने के कारण लचीला होता है। शोध प्ररचना सभी उपलब्ध सामग्री साधनों एवं स्रोतों का अध्ययन करने के पश्चात ही बनाई जाती है। किन्तु ऐसा करते समय अन्य विषयों या अनुशासनों की सामग्री यथावत ग्रहण नहीं की जाती। उसमें अवधारणाओं को प्रयोग करतें समय राजनीतिक सन्दर्भ का ध्यान रखा जाता है। चरों का स्वरूप स्पष्ट कर देने से शोधकता अपने मूल्यों को पृथक रखने में सफल हो जाता है। और अनुसंधान मूल्य-मुक्त बन जाता है। अनुसंधान प्रकल्प की उपयुक्त सभी विशेषतायें एवं अंश किन्हीं कठोर एवं निर्धारित मार्गों पर चलने को बाध्य नहीं है। नई स्थितियों, दशाओं एवं विशेषताओं के दृष्टिगोचर हो जाने पर उनमें स्पष्टीकरण देते हुए परिवर्तन कर लिया जाता है। वस्तुतः राजनीतिक विषयक अनुसंधान प्रकल्प में ऐसा करना आवश्यक भी हो जाता है।

3.3 अनुसंधान प्ररचना के चरण (Steps in Research Design)

अनुसंधान प्ररचना के प्रमुख चरण निम्नाकित हैं -

1. अनुसंधान समस्या का स्पष्ट एवं विस्तृत ज्ञान अनुसंधानकर्ता को होना चाहिए।
2. अनुसंधान कर्ता को अध्ययन से विशिष्ट उद्देश्यों की भी जानकारी होनी चाहिए।
3. अनुसंधानकर्ता को उन ढंगों एवं कार्यविधियों की भी स्पष्ट एवं विस्तृत जानकारी

होनी चाहिए जिनका प्रयोग करते हुए अनुसंधान के लिए आवश्यक आँकड़ों के संग्रह के मार्ग में आने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान प्रस्तुत किया जाएगा।

4. आँकड़ों के संग्रह के लिए विस्तृत एवं सुनियोजित योजना का उपलब्ध होना भी आवश्यक है।

5. आँकड़ों के विश्लेषण के लिए भी उपयुक्त योजना का प्राप्त होना आवश्यक है।

इस प्रकार अनुसंधान प्ररचना की रचना के निम्नांकित चरण होते हैं जो अनुसंधान के अनिवार्य अंग हैं -

1. अनुसंधान प्ररचना में सर्वप्रथम अध्ययन समस्या का प्रतिपादन किया जाना चाहिए।

2. वर्तमान में जो अनुसंधान कार्य किया जा रहा है उसको अनुसंधान समस्या से स्पष्ट रूप से सम्बन्धित करना अनुसंधान प्ररचना का दूसरा मुख्य कारण है।

3. वर्तमान में हमें जो अनुसंधान कार्य करना है उसकी सीमाओं को स्पष्ट रूप से निर्धारित करना।

4. अनुसंधान प्ररचना का चौथा चरण अनुसंधान के विभिन्न क्षेत्रों को विस्तृत करना है।

5. अनुसंधान प्ररचना के इस चरण में हम अनुसंधान परिणामों के प्रयोग के विषय में निर्णय लेते हैं।

6. इसके पश्चात हमें अवलोकन, विवरण तथा परिमापन के लिए उपयुक्त चरों का चयन करना चाहिए तथा इन्हें स्पष्ट रूप से परिभाषित करना चाहिए।

7. तदुपरान्त अध्ययन क्षेत्र एवं समग्र का उचित चयन एवं इनकी परिभाषा प्रस्तुत करना चाहिए।

8. इसके बाद अध्ययन के प्रकार एवं विषय क्षेत्र के विषय में विस्तृत निर्णय लेने चाहिए।

9. अनुसंधान प्ररचना के आगामी चरण में हमें अपने अनुसंधान के लिए उपयुक्त विधियों एवं प्राविधियों का चयन करना चाहिए।

10. इसके बाद अध्ययन में निहित मान्यताओं एवं उपकल्पनाओं का स्पष्ट उल्लेख करना चाहिए।

11. बाद में उपकल्पनाओं की परिचालनात्मक परिभाषा करते हुए उसे इस रूप में प्रस्तुत करना चाहिए कि वह परीक्षण के योग्य हो।

12. अनुसंधान प्ररचना के आगामी चरण के रूप में हमें अनुसंधान के दौरान प्रयुक्त किए जाने वाले प्रलेखों, प्रतिवेदन एवं अन्य प्रपत्रों का सिंहावलोकन करना चाहिए।

13. तदुपरान्त अध्ययन के प्रभावपूर्ण उपकरणों का चयन एवं इनका निर्माण करना तथा इनका व्यवस्थित पूर्व परीक्षण करना।

14. आँकड़ों के एकत्रीकरण का सम्पादन किस प्रकार किया जाएगा इसकी विस्तृत व्यवस्था का उल्लेख करना।

15. आँकड़ों के सम्पादन की व्यवस्था के उल्लेख के बाद उनके वर्गीकरण हेतु उचित श्रेणियों का चयन किया जाना एवं उनको परिभाषित करना।

16. आँकड़ों के संकेतीकरण के लिए समुचित व्यवस्था का विवरण तैयार करना।

17. आँकड़ों को प्रयोग योग्य बनाने हेतु सम्पूर्ण प्रक्रिया की समुचित व्यवस्था का विकास करना।

18. आँकड़ों के गुणात्मक एवं संख्यात्मक विश्लेषण के लिए विस्तृत रूपरेखा तैयार करना।

19. इसके पश्चात अन्य उपलब्ध परिणामों की पृष्ठभूमि में समुचित विवेचन की कार्यविधियों का उल्लेख करना।

20. अनुसंधान प्ररचना के इस चरण में हम अनुसंधान प्रतिवेदन के प्रस्तुतीकरण के बारे में निर्णय लेते हैं।

21. अनुसंधान प्ररचना का यह चरण सम्पूर्ण अनुसंधान प्रक्रिया में लगने वाला समय, धन एवं मानवीय श्रम का अनुमान लगाने का है। इसी दौरान हम प्रशासकीय व्यवस्था की स्थापना एवं विकास का अनुमान भी लगाते हैं।

22. यदि आवश्यक हो तो पूर्व परीक्षणों एवं पूर्वगामी अध्ययनों का प्रावधान करना।

23. अनुसंधान प्ररचना के इस चरण में हम कार्यविधियों से सम्बन्धित सम्पूर्ण प्रक्रिया, नियमों, उपनियमों, को विस्तारपूर्वक तैयार करते हैं।

24. अनुसंधान के इस चरण में हम कर्मचारियों, अध्ययनकर्ताओं के प्रशिक्षण के ढंग एवं कार्यविधियों का उल्लेख करते हैं।

25. अनुसंधान प्ररचना के इस अन्तिम चरण में हम यह प्रावधान करते हैं कि समस्त कर्मचारी एवं अध्ययन अनुसंधानकर्ता एक सामंजस्य की स्थिति को बनाए रखते हुए कार्य के नियमों, कार्यविधियों का पालन करते हुए किस प्रकार सन्तोषप्रद ढंग से कार्य को पूर्ण करेंगे।

3.3.1 अनुसंधान प्ररचना का वर्गीकरण (Classification of Research Design)

सामान्यतः अनुसंधान प्ररचनाओं को दो आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है।- 1. अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर, एवं 2. अध्ययन के उपागम के आधार पर।

1. **अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर** - अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर अनुसंधान प्ररचनाओं को पुनः अग्रलिखित चार उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है -

(अ) अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना

(ब) विवरणात्मक या निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना

(स) प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना

(द) मूल्यांकनात्मक अनुसंधान प्ररचना ।

2. **अध्ययन के उपागम के आधार पर** - अध्ययन के उपागम के आधार पर भी अनुसंधान प्ररचनाओं को पाँच उपवर्गों में रखा जा सकता है -

(अ) सर्वेक्षणात्मक अनुसंधान प्ररचना,

(ब) क्षेत्र अध्ययन सम्बन्धी अनुसंधान प्ररचना,

(स) प्रयोग सम्बन्धी अनुसंधान प्ररचना,

(य) वैयक्तिक अध्ययन सम्बन्धी अनुसंधान प्ररचना ।

अनेक सामाजिक वैज्ञानिकों ने भी अनुसंधान प्ररचना को अनेक आधारों पर अनेक प्रकारों में वर्गीकृत किया है।

1. **प्रतिपादनात्मक या अन्वेषणात्मक अध्ययन** - इसका मूल उद्देश्य अधिक

सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने या उपकल्पनाओं को विकास करने अथवा अग्रिम अनुसंधान के लिए प्राथमिकताओं की स्थापना करना होता है।

2. **विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अध्ययन** - इस प्रकार की प्ररचनाओं का उद्देश्य एक दी हुई परिस्थिति की विशेषताओं का वर्णन करना होता है।

3. **प्रयोगात्मक अध्ययन -** इस प्रकार की प्ररचनाओं का परीक्षण करना होता है। प्रयोगात्मक प्ररचनाओं को तीन उपवर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक ।

2. विवरणात्मक अथवा निदानात्मक।

3. प्रयोगात्मक ।

ये खोज की तीन सीढ़ियाँ हैं। अन्वेषणात्मक अध्ययन किसी विषय में खोज की प्रारम्भिक अवस्था होती है। इस प्रकार के अध्ययन के द्वारा विषय से परिचयन प्राप्त किया जाता है। इस खोज की अगली सीढ़ी है। वर्णनात्मक अध्ययन। इन अध्ययनों के द्वारा किसी घटना, परिस्थिति, संगठन आदि के लक्षणों का विशुद्ध अध्ययन किया जाता है। यह भी कहा जा सकता है कि इस लक्ष्य की पूर्ति के लिए वर्णनात्मक अध्ययनों का परीक्षण किया जाता है। खोज की अन्तिम सीढ़ी प्रयोगात्मक अध्ययनों की है। इसे ''कार्य कारण सम्बन्धी अध्ययन'' भी कहा जाता है। इसके द्वारा किसी कार्य जैसे मनोबल की कमी के कारणों का पता लगाने का प्रयास किया जाता है। इस हेतु इस लक्ष्य से बनाई गई उपकल्पनाओं का परीक्षण किया जाता है।

सामान्यतया कोई एक अध्ययन इनमें से किसी एक प्रकार का होता है अर्थात उसका लक्ष्य मुख्यतया अन्वेषणात्मक, विवरणात्मक या प्रयोगात्मक सम्बन्ध का पता लगाना होता है। किन्तु किसी अध्ययन में इनका मिश्रण भी हो सकता है।। प्रत्येक अध्ययन आगे आने वाले अध्ययनों का मार्ग प्रशस्त करता है जैसे यदि हम किसी राजनीतिक दल का अध्ययन कर रहे हैं तो यह पता लगाऐंगे कि उसके सदस्यों की संख्या कितनी है उसकी नीतियाँ क्या हैं, उसका आंतरिक संगठन किस प्रकार का है, पिछले चुनाव में उसकी क्या स्थिति थी, आदि। इस अन्वेषणात्मक अध्ययन के दौरान हमें अनेक बातों के बारे में सामान्य जानकारी प्राप्त हो जाती है। इस सामान्य जानकारी के आधार पर हम उपकल्पनाओं का निर्माण करेंगे। जैसे एक उपकल्पना यह हो सकती है कि 'इस दल को अनुसूचित जाति का समर्थन प्राप्त है।'' उपरोक्त उपकल्पना की परीक्षा हम

विवरणात्मक अध्ययन में करेंगे। हम ''समर्थन'' की संक्रियात्मक या परिचालनात्मक परिभाषा करेंगे। समर्थन की परिचालनात्मक परिभाषा यहाँ ''वोट देना'' हो सकती है अर्थात हम यह मान लेंगे कि जिसने दल को वोट दिया था वह उस दल का समर्थन करता है।'' अतः जब हम यह जानना चाहें कि आपने किस दल का समर्थन किया था या आपने किसको वोट दिया था तो हमें उनसे पूछना पड़ेगा। इस प्रकार यह अध्ययन हमारी विवरणात्मक उपकल्पना का परीक्षण कर सकेगा। साथ ही यह कुछ नई, अधिक महत्वपूर्ण उपकल्पनाओं को जन्म दे सकता है। सम्भव है हम यह जानना चाहें कि इस दल के इतने चुनाव क्षेत्रों में जीतने का क्या कारण है। स्पष्ट है अनेक कारण हो सकते हैं।

इन महत्वपूर्ण कारणों का पता लगाने के लिए प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना का निर्माण कर अध्ययन करना होगा। हम अपने समान्य ज्ञान के आधार पर यह अनुमान लगा सकते हैं कि कौन कौन से महत्वपूर्ण कारक हैं। जैसे - सुदृढ़ आर्थिक स्थिति महत्वपूर्ण कारण था। यह कार्य कारण सम्बन्धी उपकल्पना हुई। इसके परीक्षण के लिए हम एक ढंग प्रयुक्त कर सकते हैं कि दो प्रकार के चुनाव क्षेत्रों में उस दल का परिणाम देखें - एक ऐसा जहाँ काफी पैसा खर्च किया गया है। परन्तु दूसरे दृष्टिकोण से ये क्षेत्र एक जैसे होने चाहिए। यदि हमें अधिक पैसा खर्च करने वाले क्षेत्र में दल को अधिक सफलता मिले तो हम कह सकते हैं कि सुदृढ़ आर्थिक स्थिति सफलता का एक कारण है। इस प्रकार विभिन्न प्रकार के अध्ययन विभिन्न लक्ष्यों की पूर्ति करते हैं। जैसे जैसे हमारा ज्ञान बढ़ता है, हम अधिक महत्वपूर्ण प्रश्नों का उत्तर देने वाली किन्तु अधिक जटिल अनुसंधान प्ररचना बनाने योग्य हो जाते हैं।

3.4 प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक अनुसंधान रचना (Exploratory Research Design)

प्रतिपादनात्मक अथवा अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना का सम्बन्ध नवीन तथ्यों की खोज से है । इस प्ररचना के द्वारा अज्ञात तथ्यों की खोज अथवा सीमित ज्ञान की खोज कर मानवीय ज्ञान में वृद्धि की जाती है। अनेक अन्वेषणात्मक अध्ययनों का उद्देश्य उपकल्पनाओं को विकसित करने और समस्याओं के निर्माण में संक्षिप्त अनुसंधानों पर जोर देना है। इनके अतिरिक्त इन अध्ययनों के और भी प्रकार हो सकते हैं। उदाहरण के लिए अनुसंधानकर्ता में घटना के अध्ययन की जागरूकता पैदा होती है जो अवधारणाओं की व्याख्या करते हैं और उसके साथ साथ अनुसंधानों को प्रधानता प्रदान करते हैं। इनका

उद्देश्य किसी सामाजिक घटना के अन्तर्निहित कारणों को ढूँढ निकालना होता है। इन कारणों के ढूँढ निकालने की सम्बद्ध रूपरेखा को 'अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना' कहा जाता है।

इस अनुसंधान प्ररचना में अनुसंधान कार्य की रूपरेखा इस प्रकार प्रस्तुत की जाती है। कि घटना की प्रकृति एवं प्रक्रियाओं की खोज की जा सकें। सामाजिक विज्ञान के लिए किसी क्षेत्र में जहाँ अनुसंधान कार्य द्वारा अर्जित ज्ञान सीमित है साथ ही सिद्धान्त का विकास भी परीक्षात्मक अनुसंधान के निर्देशन की दृष्टि से संक्षिप्त है वहाँ उपकल्पना का निर्माण अन्वेषणात्मक अध्ययन के आधार पर किया जाता है।

3.4.1 अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य (Objectives of Exploratory Research Design)

प्रमुख रूप से एक अन्वेषणात्मक प्ररचना के निम्नलिखित चार उद्देश्य हो सकते हैं -

(1) **अनुसंधान विषय की जानकारी करना -** यदि हम किसी एक ऐसे विषय के बारे में अनुसंधान करना चाहते हैं जिस पर पहले अनुसंधान नहीं हुआ है तो उस विषय या समस्या का परिचय या जानकारी प्राप्त करनी होगी। उदाहरण के लिए जैसे हम किसी संस्था का अध्ययन करना चाहें तो पहले हमें यह पता लगाना पड़ेगा कि वह संस्था कब, किसने व क्यों स्थापित की ? इसकी स्थापना के पीछे कौन से कारण थे? इसका आय व्यय क्या है? आदि। इस प्रकार हमें सबसे पहले अनुसंधान विषय की जानकारी करनी होती हैं।

(2) **अनुसंधान की सम्भावनाओं एवं क्षेत्र का निर्णय** - इस प्रकार का अध्ययन वर्णनात्मक अनुसंधान प्ररचना का मार्ग प्रशस्त करता है। बड़े एवं अधिक धन वाले अध्ययनों से पहले हमें इस बात की जानकारी प्राप्त हो जानी चाहिए कि हमारा मार्ग सही है। अन्यथा हो सकता है, हम व्यर्थ ही समय एवं धन का व्यय कर बैठें। इसी प्रकार सामाजिक अनुसंधान में हम अन्वेषणात्मक प्ररचना से यह पता लगाते हैं कि किसी विषय विशेष में अनुसंधान की क्या वास्तविक सम्भावनाएं है। जैसे - यदि हम किसी सरकारी संगठन का अध्ययन करना चाहते हैं तो सम्भव है कि वहाँ यह कठिनाई हो कि उसके तथ्य एवं आँकड़े सरकार गोपनीय मानती हो। यदि हम अन्वेषणात्मक अध्ययन करें तो यह बात हमें पहले ही ज्ञात हो जाएगी कि सरकार से उसकी अनुमति प्राप्त नहीं होगी तो हम विषय

को छोड़ देंगे। इसी प्रकार अन्वेषणात्मक प्ररचना से हम विषय का क्षेत्र निर्धारण भी ठीक प्रकार से कर सकेंगे।

(3) अवधारणाओं का स्पष्टीकरण एवं नवीन अवधारणाओं की खोज - वस्तुतः किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन में यदि हमारी अवधारणाएं स्पष्ट न हों तो हमारे अनुसंधान का मूल्य बहुत कम हो जाने की सम्भावना है।

इसके अतिरिक्त अवधारणाएं सैद्धान्तिक संरचना का आधार होती हैं। इसलिए नई सैद्धान्तिक संरचना के लिए कभी कभी नवीन अवधारणाओं की रचना की जाती है। मार्क्स का ''वर्ग संघर्ष'', वेबर का ''आदर्श प्रारूप'' आदि इसी प्रकार की नवीन अवधारणाएं हैं। यहाँ अनुसंधानकर्ता किसी पुरानी अवधारणा की नवीन परिभाषा भी कर सकता है जैसे कार्ल मार्क्स में ''वर्ग'' के सन्दर्भ में की। दोनों ही आधारों में अवधारणाओं का उपयोग अन्वेषणात्मक प्ररचना से बढ़ जाता है।

(4) उपकल्पनाओं का निर्माण - किसी भी वैज्ञानिक अध्ययन का उद्देश्य होता है सिद्धान्तों का परीक्षण । सिद्धान्त उपकल्पनाओं के तन्त्र होते हैं इसलिए क्रियात्मक दृष्टिकोण से हमारा उद्देश्य का परीक्षण हो जाता है। इस प्रकार उपकल्पनायें वैज्ञानिक अध्ययन को दिशा देती हैं तथा बताती हैं कि किन लक्षणों एवं संबंधों का अध्ययन करना है। इस प्रकार विषय या समस्या से परिचय प्राप्त करके उसके निरूपण करके तथा अवधारणाओं के स्पष्टीकरण एवं खोज द्वारा अन्वेषणात्मक अध्ययन नवीन उपकल्पनाएं बनाने में सहायक होता है।

इसी प्रकार इन मुख्य उद्देश्यों या प्रकार्यों के अतिरिक्त अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के निम्नलिखित और उद्देश्य बताए जा सकते हैं।

1. अनुसंधानकर्ता को प्रघटना के बारे में जागरूकता एवं समझ प्रदान करना।
2. भविष्य में आने वाले अनुसंधान के विषय में प्रधानता या प्रमुखता की स्थापना करना।
3. सामाजिक महत्व की समस्याओं की ओर अनुसंधानकर्ता को प्रेरित करना।
4. समस्या के किस क्षेत्र में अध्ययन को केन्द्रित किया जाए इसका निर्धारण करना।
5. विज्ञान को परम्परागत सीमाओं से मुक्त करके उसके अध्ययन क्षेत्र का विकास करना।

अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना के लिए कुछ आवश्यकताओं या अनिवार्यताओं का होना भी आवश्यक होता है। वस्तुतः अन्वेषणात्मक प्ररचना में सबसे बड़ी कठिनाई समस्या का उपयुक्त चुनाव करने की है। सामान्यतः समस्या का चयन करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए-

1. समस्या का सामाजिक महत्व
2. समस्या का व्यावहारिक परिप्रेक्ष्य एवं
3. विश्वसनीय तथ्यों की प्राप्ति की सम्भावनाएं ।

3.5 विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना (Descriptive Research Design)

सामाजिक अनुसंधान में हमें सामान्य नियमों का अन्वेषण करना होता है एवं उनका विवेचन व विशिष्ट परिस्थितियों का निदान खोजना भी हमारा प्रमुख उद्देश्य होता है। विवरणात्मक एवं निदानात्मक अध्ययन प्ररचनाओं में एक प्रमुख अन्तर यह है कि निदानात्मक प्ररचना कारणात्मक संबंधों को व्यक्त करने तथा सामाजिक क्रिया के लिए इन विभिन्न कारणों के आशयों का पता लगाने से संबंधित है।

विवरणात्मक तथा विवेचनात्मक अनुसंधान प्ररचना का मुख्य उद्देश्य समस्या से संबंधित वास्तविकता के आधार पर वर्णनात्मक विवरण प्रस्तुत करना है। इनकी विशेषता पूर्ण और यथार्थ सूचनायें प्राप्त करना है। अतः ये अध्ययन किसी समुदाय या समूह के सम्पूर्ण जीवन से संबंधित प्रक्रियाओं के होते है। सामाजिक अनुसंधान में प्रथम समस्या सामान्य नियमों की खोज व द्वितीय समस्या विशिष्ट परिस्थितियों के निदान से सम्बन्धित होती हैं।

इस प्रकार वर्णनात्मक या विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के लिए आवश्यक होता है कि वैज्ञानिक वर्णन के आधार पर विषय के संबंध में यथार्थ एवं पूर्ण सूचनायें प्राप्त की जायें।

3.5.1 विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्य (Objectives of Descriptive Research Design)

विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के उद्देश्यों को तीन वर्गों में प्रस्तुत किया जा सकता है-

1. किसी समूह अथवा परिस्थिति के लक्षणों का परिशुद्ध वर्णन करना।

2. किसी चर की आवृत्ति निश्चित करना,

3. चरों के साहचर्य के विषय में पता लगाना।

1. किसी समूह अथवा परिस्थिति के लक्षणों का परिशुद्ध वर्णन करना - विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना में हम किसी समूह जैसे कोई राजनीतिक दल अथवा किसी परिस्थिति जैसे हड़ताल या चुनाव आदि का परिशुद्ध वर्णन करते हैं एवं क्रमवार विस्तृत ज्ञान प्राप्त करते हैं। यह ज्ञान गुणात्मक एवं संख्यात्मक दोनों ही प्रकार का हो सकता है। जैसे गुणात्मक ज्ञान से हम यह पता लगाते हैं कि किस चुनाव के उम्मीदवार किस किस राजनीतिक दल के थे अथवा वे किस किस जाति के थे। संख्यात्मक ज्ञान संख्या पर आधारित होता है। यह सामान्यतः किसी चर की आवृत्ति होती है जैसे किसी चुनाव में कितने लोगों ने भाग लिया?

2. किसी चर की आवृत्ति निश्चित करना - विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना से अध्ययन करते समय हमें विषय या समस्या का कुछ ज्ञान रहता है। यह ज्ञान पहले किये हुए अन्वेषणात्मक या दूसरे लोगों के अध्ययनों द्वारा प्राप्त होता है । इसलिए वर्णनात्मक अध्ययन के उद्देश्य सुस्पष्ट होते हैं जैसे यह निश्चित रहता है कि इसे किन लक्षणों का वर्णन करना है?

3. चरों के साहचर्य के विषय में पता लगाना - विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना का एक और उद्देश्य यह है कि इसके द्वारा चरों के साहचर्य के विषय में पता लगाया जाये। विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना में हम इसी प्रकार विभिन्न चरों के साहचर्य का पता लगाते हैं अर्थात यह देखते हैं कि साहचर्य है या नहीं और यदि है तो किस प्रकार का ? हम केवल उन चरों का साहचर्य देखते हैं जहाँ हमें इनकी आशा रहती है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि विवरणात्मक प्ररचना विवरणात्मक उपकल्पनाओं की परीक्षा करता है।

इसके अतिरिक्त विवरणात्मक अध्ययन कार्य कारण संबंधी उपलकल्पनाओं के निर्माण में भी सहायक होता है। इस प्रकार की उपकल्पनाओं का परीक्षण एक अधिक विकसित प्ररचना द्वारा होता है।वर्णनात्म्क अध्ययन द्वारा केवल इन उनकल्पनाओं का निर्माण होता है। जैसे यदि हम किन्हीं चरों में बहुत अधिक साहचर्य पायें तो हम यह उपकल्पना बना सकते हैं कि उनमें से एक कारण है और दूसरा प्रभाव । यहाँ यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि ऐसा संयोग से भी हो सकता है।

उपरोक्त विवेचना में हमें ध्यान रखना चाहिए कि विवरणात्मक एवं निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना एक ही नहीं है। इन प्ररचनाओं में मुख्यतः अन्तर निम्नलिखित हैं -

1. विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना समस्या से संबंधित तथ्यों का वर्णन प्रस्तुत करती है, जबकि निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना समस्या का वास्तविक स्वरूप बताकर समस्या के निदान का उपाय या हल भी बताती है।

2. विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना के अध्ययन उपकल्पनाओं द्वारा पूर्ण रूप से निर्देशित नहीं होते जबकि निदानात्मक प्ररचना के अध्ययनों को उपकल्पनायें पूर्ण रूप से निर्देशित करती हैं।

3. विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना का मुख्य उद्देश्य ज्ञान प्राप्ति ही होता है, जबकि निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना का प्रमुख उद्देश्य समाज में उपस्थित समस्याओं के कारणों का पता लगाकर समाधान प्रस्तुत करना होता है।

4. विवरणात्मक अध्ययन उस क्षेत्र में विकास का पता लगाना है, जहाँ समस्याओं के बारे में विशेष जानकारी उपलब्ध नहीं होती है, जबकि निदानात्मक अध्ययन उसी क्षेत्र में किये जाते हैं जहाँ पर समस्याओं का स्वरूप स्पष्ट रूप से उभर कर सामने आ जाता है।

5. विवरणात्मक अध्ययन प्रायः प्रारम्भिक स्तर के अध्ययन होते हैं, जबकि निदानात्मक अध्ययन उच्चस्तरीय होते हैं।

इस प्रकार वर्णनात्मक या विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना एवं निदानात्मक अनुसंधान प्ररचना में अन्तर किया जा सकता है। लेकिन इन प्ररचनाओं के क्रियान्वयन के लिए अनुसंधानकर्ता को अनुसंधान प्रशिक्षण, समय, धन व कार्य क्षमता पर ध्यान देना चाहिए। इस प्रकार जब अन्वेषणात्मक ज्ञान की प्राप्ति हमारे अध्ययन का उद्देश्य होता है तो हम अन्वेषणात्मक अनुसंधान प्ररचना का प्रयोग करते हैं, लेकिन जब किसी समूह समुदाय या परिस्थितियों का वर्णन एवं विश्लेषण करना होता है तो हम ''विवरणात्मक अनुसंधान प्ररचना'' का प्रयोग करते हैं।

3.6 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना (Experimental Research Design)

प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है ''प्रयोग'' की अवधारणा पर आधारित है। प्रयोग मूलतः एक प्रकार का नियंत्रित अन्वेषण है। प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना को विस्तार से समझने के लिए यह आवश्यक होगा कि

हम प्रयोग को समझ लें। आर.एल.एकॉफ ने लिखा हे कि, ''प्रयोग एक ऐसी क्रिया है जिसे हम अन्वेषण कहते हैं।'' सेलिज, जहोदा एवं अन्य के अनुसार, ''अपने सबसे सामान्य अर्थ में एक प्रयोग को प्रमाण के संग्रह के संगठन के ऐसे ढंग के रूप में समझा जा सकता है जिससे उपकल्पना की सत्यता के विषय में परिणाम निकालने की अनुमति मिल सके।''

इस प्रकार प्रयोग की मूलभूत रूपरेखा अत्यन्त सरल है। मान लें कि हम यह जाना चाहते हैं कि पढ़ाने में संगणकों का उपयोग परम्परागत पढ़ाने के ढंग से अधिक लाभदायक है या नहीं। इसके लिए हम दो समान समूह लेंगे - एक प्रयोगात्मक समूह कहलाएगा एवं दूसरा 'यथास्थ समूह''। प्रयोगात्मक चर संगणक है। अब हम किसी स्कूल की कक्षा के दो समूह बनाते हैं और एक समूह को संगणकों के माध्यम से पढ़ाते है। व दूसरे को परम्परागत ढंग से। शिक्षा सत्र के अन्त में दोनों समूहों को एक ही परीक्षा में बिठाकर उनके परीक्षाफल की तुलना करते हैं। यदि हम पाते हैं कि संगणक द्वारा शिक्षण समूह का परीक्षाफल श्रेष्ठ है तो हम कह सकते हैं कि संगणकों द्वारा पढ़ाना अधिक लाभकारी है।

इस प्रकार प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना ''प्रयोग'' पर आधारित है। यह भी भौतिक विज्ञानों में प्रयोगों की भाँति होती है। इस प्रकार की प्ररचनाओं का निर्माण अत्यन्त सोच समझ कर किा जाता है। इस प्ररचना के आधार पर तार्किक निर्ष्कषों को निकाला जाता है। जान स्टुअर्ट मिल पहले व्यक्ति थे जिन्होंने प्रयोगात्मक विधि के आधार पर अनुसंधान प्ररचनाओं के संबंध में सुधार किए।

प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना के कारणात्मक संबंधों को व्यक्त करने वाली उपकल्पनाओं का परीक्षण करने के लिए प्रचलित किसी भी नियंत्रित प्रयोग के अन्तर्गत निम्नलिखित तत्व पाए जाते हैं-

1. इसमें ऐसी दो परिस्थितियों या समूहों का परीक्षण किया जाता है, जो अन्य सभी महत्वपूर्ण पक्षों के समान होते हैं।

2. कारणात्मक समझे जाने वाले कारक को प्रयोगात्मक समूह में ढूँढा जाता है अथवा उसमें इसका समावेश कराया जाता है।

3. भविष्यवाणी की जाने वाली घटना की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति पर्यवेक्षण प्रयोगात्मक एवं नियंत्रित दोनों ही समूहों पर किया जाता है।

3.6.1 प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना के प्रकार (Types of Experimental Research Design)

सामाजिक विज्ञानों में सदा प्रयोग की समस्त शर्तों को पूरा करना सम्भव नहीं होता है इसलिए आवश्यकहा एवं सुविधा के अनुसार प्रयोग के ढंग में कुछ फेर बदल कर लिया जाता है। इसलिए प्रयोगात्मक अनुसंधान प्ररचना को मुख्यतः दो वर्गों में रखा जाता है।

1. केवल पश्चात परीक्षण
2. पूर्व पश्चात परीक्षण

3.6.2 केवल ''पश्चात माप'' वाले प्रयोग

इस प्रकार के प्रयोग में प्रयोगात्मक और यथास्थ समूह ऊपर बताई गयी प्रविधियों के अनुसार बनाए जाते हैं। प्रारम्भ में कोई भी चर नहीं मापे जाते। फिर प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर ''क'' का प्रभाव डाला जाता है। यथास्थ समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नही डाला जाता । प्रयोग के दौरान या अन्त में परतंत्र चर ''ख'' दोनों समूहों में मापते हैं। दोनों समूहों में ''ख'' का अन्तर ''क'' का प्रभाव माना जाता है।

इस अभिकल्प मे सह-परिवर्तन का प्रमाण हमें इस प्रकार मिलता है कि प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर (कारण) का प्रभाव पड़ता है। और यथास्थ समूह पर नहीं। इसलिये दोनों समूहों में परतंत्र चर (कार्य) में पाया जाने वाला भेद प्रयोगात्मक चर के प्रभाव के कारण ही हो सकता है। घटनाक्रम का प्रमाण इस प्रकार मिलता है कि दोनों समूह प्रारम्भ में समान थे और यथास्थ समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नहीं पड़ा। इसलिए यथास्थ समूह में ''ख'' का ''पश्चात'' माप प्रयोगात्मक समूह में ''ख'' के ''पूर्व'' माप के बराबर माना जा सकता है। इस प्रकार अन्त में दोनों समूहों में पाया हुआ भेद प्रयोगात्मक चर का प्रभाव पड़ने के बाद ही हो सकता है। अन्य सम्भव चरों के विलोपन का प्रमाण यथस्थ समूह के होने से मिलता है। अन्य चरों ने इसे भी प्रभावित किया जायेगा। इसलिये दोनों समूहों का भेद अन्य कारकों के प्रभाव को घटा कर आता है।

इस प्रयोग के एक अच्छे उदाहरण में अमेरिका में द्वितीय महायुद्ध के समय एक फिल्म का प्रभाव देखा गया था। इसमें सेना की टुकड़ियों के दो समूह बनाये गये थे। यह समूह शिक्षा, आयु, जन्म, क्षेत्र, परीक्षाफल, प्रशिक्षण स्तर आदि के आधार पर

समान थे। फिर सिक्का उछालकर तय किया गया कि कौन सा प्रयोगात्मक समूह माना जाये। इस समूह को साधारण प्रशिक्षण के कार्यक्रम के अन्तर्गत यह फिल्म दिखाई गई। दूसरे समूह को यथास्थ समूह माना गया, फिल्म नहीं दिखाई गयी। लगभग एक सप्ताह के बाद दोनों समूहों से एक प्रश्नावली भरवाई गई। सैनिकों को यह पता नहीं था कि उन पर कोई प्रयोग हो रहा है या फिल्म के प्रभाव का अध्ययन हो रहा है। दोनों समूहों के उत्तरों के भेद के आधार पर फिल्म के प्रभाव का पता लगाया गया।

3.6.3 ''पूर्व और पश्चात माप'' वाले प्रयोग

इस अभिकल्प में प्रयोगात्मक समूह तो सदा होता है किन्तु यथास्थ समूह कभी होता है और कभी नहीं। कभी कभी दो या अधिक यथास्थ समूह भी होते हैं इसके मुख्य प्रकार छः हैं -

अ) एक समूह द्वारा ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन

ब) एक यथास्थ समूह वाला ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन

स) समूहों को अदल बदल कर ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन

द) दो यथास्थ समूहों वाला ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन

य) तीन यथास्थ समूहों वाला ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन

र) दो या अधिक प्रयोगात्मक चरों के संयुक्त प्रभाव का अध्ययन

अ) एक समूह द्वारा ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन - इस प्रकार के अध्ययन की विशेष बात यह है कि इसमें यथास्थ समूह नहीं होता। एक ही समूह में प्रयोग के पहले और बाद के भेद को प्रयोगात्म्क चर का प्रभाव मान लिया जाता है। वैज्ञानिक शोध में इस प्रकार के प्रयोग पर आधारित अनुमानों को पूर्ण रूप से प्रमाणिक नहीं माना जा सकता। किसी विशेष स्थिति में ही इसका उपयोग किया जाता है। जैसे - यदि किसी भीषण रोग की चिकित्सा से सम्बन्धित शोध करनी हो और इस चिकित्सा से शोध लाभ की आशा हो तो सम्भव है अपने प्रयोग में सभी रोगियों की हम यही चिकित्सा करें, यथास्थ समूह न बनायें। यहाँ यथास्थ समूह बनाने का अर्थ होगा कुछ रोगियों को इस चिकित्सा से वंचित रखना। इसलिए ऐसे प्रयोग में यह समूह नहीं बनाया जाता । निष्कर्ष भी पूर्णतया प्रमाणिक नहीं होंता।

ब) एक यथास्थ समूह वाला ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन - प्रयोगात्मक अभिकल्प का सबसे सरल और अधिक प्रयुक्त होने वाला रूप यही है। इसमें प्रयोगात्मक

और यथास्थ दोनों प्रकार के समूह बनाये जाते हैं और दोनों में पूर्व और पश्चात परतन्त्र चर का माप किया जाता है। प्रयोग के पश्चात दोनों समूहों के माप का अन्तर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव माना जाता है।

पढ़ाने में टेलीवितन पुराने तरीके से अधिक लाभकर है या नहीं, यह पता लगाने के लिए किये जाने वाले प्रयोग में हम इस-पकार के अध्ययन का विवेचन कर आये हैं। इसमें दो एक जैसे समूह बनाकर दोनो को एक ही परीक्षा में बिठाते हैं। अब एक समूह के सब विद्यार्थियों के अंकों का औसत निकालते हैं । यह उस समूह का ''पूर्व'' माप हुआ। इसी तरह दूसरे समूह का पूर्व माप निकालते हैं। फिर सिक्का उछाल कर एक समूह को प्रयोगात्मक बना देते हैं अर्थात इसे टेलीविजन की सहायता से पढ़ाते हैं । दूसरे समूह को यथास्थ कहते हैं, अर्थात इसे पुराने तरीके से पढ़ाते हैं शिक्षा सत्र के अन्त में दोनों समूहों को फिर एक ही परीक्षा में बिठाते हैं। फिर दोनों समूहों का अलग अलग ''पश्चात'' माप में से उसका ''पूर्व'' माप घटाते हैं। इसे हम प्रयोगात्मक समूह में हुआ अन्तर कहेंगे। इसी तरह यथास्थ समूह में हुआ अन्तर भी निकालते है। अब यह देखते हैं कि कौन सा अन्तर अधिक है- प्रयोगात्मक समूह वाला या यथास्थ समूह वाला । यदि प्रयोगात्मक समूह में यथास्थ समूह से अधिक अन्तर हुआ है तो कहेंगे कि टेलीविजन से पढ़ाना अधिक लाभकर है अन्यथ नहीं।

स) समूहों को अदल-बदल कर ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन - इस प्रकार के अध्ययन में प्रयोगात्मक और यथास्थ दोनों समूह होते है। ''पूर्व माप केवल यथास्थ समूह में किया जाता है। प्रयोगात्मक समूह में नहीं किया जाता। प्रयोगात्मक चर का प्रभाव केवल प्रयोगात्मक समूह पर डाला जाता है। पश्चात माप केवल प्रयोगात्मक समूह में लिया जाता है। दोनों मापों का अन्तर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव माना जाता है।

द) दो यथास्थ समूहों वाला ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन - यह अभिकल्प एक दूसरी कठिन समस्या को हल करता है। कभी कभी ''पूर्व'' माप प्रयोगात्मक चर को भी प्रभावित कर देता हैं इस प्रकार प्रयोगात्मक चर का विशुद्ध प्रभाव हम नहीं जान पाते। प्रयोगात्मक चर के ''पूर्व' माप द्वारा इस प्रकार प्रभावित हो जाने को दोनों की अन्योन्य क्रिया कहते हैं। इस अभिकल्प द्वारा हम प्रयोगात्मक चर का प्रभाव और अन्योन्य क्रिया दोनों का पता लगा लेते हैं। इसमें प्रयोगात्मक और दोनों यथास्थ समूह लगभग एक जैसे होते हैं। प्रयोगात्मक समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' दोनों माप लिए जाते हैं। प्रथम यथास्थ में भी ''पूर्व'' और ''पश्चात'' माप लिये जाते हैं। प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव डाला जाता है किन्तु पहले यथास्थ समूह पर नहीं।

द्वितीय यथास्थ समूह में ''पूर्व'' माप नहीं लिया जाता, इस प्रयोगात्मक चर का प्रभाव डाला जाता और ''पश्चात'' मरन लिया जाता है। प्रथम यथास्थ समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नहीं पड़ा इसलिए वहाँ भी अन्योन्य क्रिया नहीं हो सकती। इसलिए यदि यह मानना तर्कसंगत हो कि अन्य सम्भव चरों का प्रभाव नगण्य है। प्रथम यथास्थ समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों में यदि कोई अन्तर है तो वह ''पूर्व'' माप के प्रभाव से हो सकता है।

प्रयोगात्मक समूह पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव पड़ा है। ''पूर्व'' माप हुआ है और अन्योन्य क्रिया की सम्भावना भी है इसलिए इस समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर इन तीनों प्रभावों का योग है।

अपने अनुमानों को संक्षेप में हम इस प्रकार कह सकते हैं कि यदि यह मानना तर्कसंगत हो कि अन्य सम्भव (जैसे समसामयिक घटनाओं और विकास की प्रक्रियाओं का महत्वपूर्ण प्रभाव नहीं पड़ा है तो -

1. प्रयोगात्मक समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर

(ख) प्रयोगात्मक चर का प्रभाव + ''पूर्व'' माप का ''पश्चात'' माप का प्रभाव + अन्योन्य क्रिया

2. प्रथम यथास्थ समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर

(ख) च ''पूर्व'' माप का ''पश्चात'' माप पर प्रभाव, और

2. द्वितीय यथास्थ समूह में (अनुमानित) ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर हमें प्रयोगात्मक चर का विशुद्ध प्रभाव बता देता है।

साथ ही हमें अन्योन्य क्रिया का भी अनुमान हो जाता है ऊपर के समीकरणों से स्पष्ट है कि-

(ख) अन्योन्या क्रिया त्र ख, + ख$_2$

अन्योन्य क्रिया त्र ख - (ख, + ख$_2$)

य) तीन यथास्था समूहों वाला ''पूर्व और पश्चात'' अध्ययन - ऊपर के अन्तिम अभिकल्प में हमने यह मान लिया था कि समसामयिक घटनाओं और विकास की प्रक्रियाओं का प्रभाव नगण्य है। किन्तु जहाँ यह मानना तर्कसंगत न हो और यह सम्भावना भी हो कि अन्योन्य क्रिया हो रही है तो हम तीन यथास्थ समूहों वाले अभिकल्प का उपयोग करते हैं। इसमें जो नया, तृतीय यथास्थ समूह होता है उसका ''पूर्व'' माप नहीं लिया जाता, उस पर प्रयोगात्मक चर का प्रभाव भी नहीं डाला जाता,

केवल ''पश्चात'' माप लिया जाता है। इस प्रकार इस समूह चरों का प्रभाव तो होता है, ''पूर्व'' माप और प्रयोगात्मक चर का प्रभाव नहीं होता। बाकी अभिकल्प ठीक वैसा ही रहता है जैसे दो यथास्थ समूहों वाला था।

इसके अनुमानों को हम इस प्रकार कह सकते हैं -

प्रयोगात्मक समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर

(ख) प्रयोगात्मक चर का प्रभाव + अन्य सम्भव चरों का प्रभाव

+ पूर्व माप का ''पश्चात'' अन्योन्य क्रिया।

प्रथम यथास्थ समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर

(ख) त्र अन्य सम्भव चरों का प्रभाव + ''पूर्व'' माप का ''पश्चात'' माप पर प्रभाव

द्वितीय यथास्थ समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर।

(ख) प्रयोगात्मक चर का प्रभाव + अन्य सम्भव चरों का प्रभाव

तृतीय यथास्थ समूह में ''पूर्व'' और ''पश्चात'' मापों का अन्तर।

(ख) त्र अन्य सम्भव चरों का प्रभाव

ऊपर के समीकरणों से स्पष्ट है कि -

1. प्रयोगात्मक चर का प्रभाव त्र ख$_2$ - ख$_3$

2. अन्योन्य क्रिया त्र ख - (ख$_1$+ ख$_2$+ख$_3$)

इस प्रकार हम प्रयोगात्मक चर का विशुद्ध प्रभाव और अन्योन्य क्रिया दोनों को मापने में समर्थ हो जाते हैं।

र) दो या अधिक प्रयोगात्मक चरों के संयुक्त प्रभाव का अध्ययन - कभी कभी दो या अधिक प्रयोगात्मक चर एक साथ सक्रिय होते हैं। इनके संयुक्त प्रभाव के अध्ययन के लिए हमें अधिक जटिल अभिकल्प बनाने होते है जिनमें बहुत से समूह होते हैं। फिर अनुमान के लिए सांख्यिकी की विशेष प्रविधियों जैसे अन्तरवर्ग विश्लेषण का उपयोग किया जाता है।

3.6.4 प्रयोगात्मक अभिकल्प की आलोचना (Criticism of Experimental Research Design)

प्रयोगात्मक अभिकल्प का लाभ यह है कि इसके द्वारा हम विभिन्न कारकों के प्रभाव का वैज्ञानिक पद्यति से पता लगा सकते हैं अर्थात चरों के संबंधों के विषय में अमूर्त

परिकल्पनाओं का परीक्षण कर सकते हैं। यदि ये परिकल्पनायें सत्य सिद्ध हों तो हमारे सिद्धान्त को बल मिलेगा और अन्य परीक्षणों द्वारा हम नियमों की खोज की दिशा में प्रगति कर सकेंगें।

प्रयोग की एक आलोचना यह है कि केवल दो चरों के संबंध का अध्ययन करते समय यह अन्य चरों के प्रभाव को आंखों से ओझल कर देती है। इस प्रकार प्रयोग की पद्धति चरों को एक दूसरे से कृत्रिम ढंग से अलग कर देती है। वास्तव में चर अलग अलग संदर्भों में अलग अलग प्रभाव डालते हैं। इस आलोचना के अनुसार सामाजिक विज्ञान में शोध को प्रयोग के स्थान पर क्षेत्रीय अध्ययन का अध्ययन किया जाये। इसमें चरों के नियंत्रण की प्रचलित पद्धति को छोड़ना होगा। जिन परिस्थितियों का अध्ययन किया जा रहा है उनमें जो अन्योन्य क्रिया मिलती है वह हम स्वीकार कर लेंगे। इस प्रकार के अध्ययनों के मुख्य उपकरण होते है सांख्यिकी की आंशिक सह संबंध और बहु संबंध की प्रविधियाँ। मनोविज्ञान के क्षेत्र में इस पद्धति का विशेष उपयोग हुआ है।

3.7 अन्वेषणात्मक अथवा निरूपणात्मक शोध प्ररचना (Causal Resarch Design)

किसी भी सामाजिक घटना के घटित होने के पीछे कोई न कोई कारण अवश्य छुपा हुआ होता है। जब कोई शोध कार्य इस कारण को ढूँढने के लिए किया जाता है तो उसे अन्वेषणात्मक शोध प्ररचना कहते हैं। इस प्रकार शोध प्ररचना में शोध कार्य की सम्पूर्ण रूपरेखा को इस प्रकार बनाया जाता है जिससे कि अध्ययन की जाने वाली घटना की प्रकृति, घटना के कारणों व उनके बीच के कार्य कारण संबंधों की उचित जानकारी प्राप्त की जा सके। प्रत्येक शोध की सफलता के लिए उचित प्राक्कल्पना का निर्माण किया जाना आवश्यक है और किसी प्राक्कल्पना के निर्माण के लिए सफल शोध प्ररचना का निर्माण किया जाना आवश्यक हैं ।

3.8 सारांश

अन्वेषण प्रारम्भ करने से पूर्व हम प्रत्येक अनुसंधान समस्या के विषय में सोच विचार करने के पश्चात यह निर्णय लें कि हमें किन ढंगों एवं कार्य विधियों का प्रयोग करते हुए शोध कार्य करना है तो नियंत्रण को लागू करने की आशा बढ़ जाती है। अनुसंधान कार्य करने की योजना या अनुसंधान प्रक्रिया की रूपरेखा को ही अनुसंधान अभिकल्प कहा जाता है। सामान्यतः अनुसंधान प्ररचना के दो प्रमुख उद्देश्य होते हैं- 1. अनुसंधान समस्या के उत्तर प्रदान करना , एवं 2. विविधताओं को नियंत्रित करना।

एक अच्छे अन्वेषण रूपाँकन या प्ररचना में शोध-प्रक्रिया के दौरान आवश्यकतानुसार संशोधित एवं परिवर्तित किए जा सकने के कारण लचीलापन होता है। सामान्यतः अनुसंधान प्ररचनाओं को दो आधारों पर वर्गीकृत किया जाता है। 1. अध्ययन के उद्देश्य के आधार पर, एवं 2. अध्ययन के उपागम के आधार पर।

1. **प्रतिपादनात्मक या अन्वेषणात्मक अध्ययन** - इसका मूल उद्देश्य अधिक सूक्ष्मता के साथ अध्ययन करने याय उपकल्पनाओं का विकास करना अथवा अग्रिम अनुसंधान के लिए प्राथमिकताओं की स्थापना करना होता है।

2. **विवरणात्मक अथवा निदानात्मक अध्ययन** - इस प्रकार की प्ररचनाओं का उद्देश्य एक दी हुई परिस्थिति की विशेषताओं का वर्णन करना होता है।

3. **प्रयोगात्मक अध्ययन** - इस प्रकार की प्ररचनाओं का उद्देश्य उपकल्पनाओं का परीक्षण करना होता है।

3.9 बोध प्रश्न

1. शोध परिकल्प पर एक सुबोध टिप्पणी लिखिये।
2. शोध के विभिन्न प्रकारों का आलोचनात्मक मूल्यांकन कीजिए।
3. निम्नलिखित पर टिप्पणियाँ लिखिये -
   - (अ) अन्वेषणात्मक अध्ययन
   - (ब) विवरणात्मक तथा निदानात्मक अध्ययन में अन्तर्भेद
   - (स) प्रयोगात्मक अध्ययन के प्रकार

3.10 सन्दर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा
सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,
सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता
अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा
अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय
Fundamental of Statistics - S.P. Singh
Principles of Statistics.

इकाई - 4 : निदर्शन अभिकल्प (Sampling Design)

इकाई की रूपरेखा-

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा

- 4.2.1 संगणना एवं निदर्शन में अन्तर
- 4.2.2 निदर्शन के आधार एवं विशेषतायें
- 4.2.3 निदर्शन की सीमाएँ

4.3 निदर्शन के अवयव

- 4.3.1 इकाई
- 4.3.2 समग्र या समष्टि
- 4.3.3 विशिष्ट समग्र का चयन
- 4.3.4 निदर्शन इकाई
- 4.3.5 निदर्शन ढाँचा
- 4.3.6 स्तर
- 4.3.7 साधन सूची

4.4 निदर्शन में चरण

- 4.4.1 एक श्रेष्ठ अथवा प्रतिनिधिपूर्ण निदर्शन की विशेषताएँ

4.5 निदर्शन के प्रकार

- 4.5.1 प्रायिकता या सम्भावना निदर्शन
- 4.5.2 अर्द्ध प्रसम्भावना प्रतिचयन
- 4.5.3 दैव एवं यादृच्छित निदर्शन
- 4.5.4 दैव निदर्शन के लाभ
- 4.5.5 दैव निदर्शन से हानियाँ
- 4.5.6 स्तरीकृत निदर्शन
- 4.5.7 बहुस्तरीय निदर्शन
- 4.5.8 व्यवस्थित निदर्शन
- 4.5.9 गुच्छ निदर्शन
- 4.5.10 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन
- 4.5.11 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन विधि के दोष

4.6 सारांश

4.7 बोध प्रश्न

4.8 संदर्भ पुस्तकें

4.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे -

- निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा,
- संगणना एवं निदर्शन में अन्तर,
- निदर्शन के आधार एवं विशेषतायें तथा निदर्शन की सीमाएँ,
- निदर्शन में चरण, तथा
- निदर्शन के प्रकार।

4.1 प्रस्तावना

सामाजिक विज्ञानों में सामान्यतः मनुष्य एवं उनके समूहों का अध्ययन एवं अनुसंधान किया जाता है। ये समूह अनेक बार छोटे होते हैं, लेकिन अनेक बार बहुत बड़े भी होते हैं। परिणामस्वरूप इन बड़े समूहों का अध्ययन एवं अनुसंधान एक नितान्त जटिल प्रक्रिया होती है। अतः उस समूह के अध्ययन के लिए उसमें से कुछ लोगों को चुनकर उनका अध्ययन कर लिया जाता है। चुनाव की वही प्रक्रिया निदर्शन, प्रतिचयन, प्रतिदर्शन आदि नामों से जानी जाती है। निदर्शन को तभी उपयुक्त माना जा सकता है जब सम्पूर्ण समष्टि का सही प्रतिनिधित्व करें। निदर्शन सम्पूर्ण समष्टि का वास्तविक प्रतिनिधि है या नहीं इसकी एक कसौटी यह है कि निदर्शन के स्थान पर यदि सम्पूर्ण समष्टि का अध्ययन किया जाए तो परिणामों में सार्थक अन्तर नहीं पड़ना चाहिए। निदर्शन चुनने की यह प्रमुख समस्या है कि निदर्शन किस प्रकार चुना जाए ताकि वह समष्टि का ठीक प्रतिनिधित्व कर सके और उसमें कोई पूर्वाग्रह न हो। सांख्यिकी द्वारा हमें

ऐसी विधियाँ उपलब्ध हुई हैं जिनके द्वारा निदर्शन का ठीक चयन किया जा सकता हैं।

अनुसंधान कार्य में कुछ परिस्थितियाँ अवश्य ऐसी हो सकती हैं जिनमें हमें सम्पूर्ण समग्र का अध्ययन करना पड़ता है। केवल निदर्शन से काम नहीं चलता। उदाहरणार्थ, हमें यदि यह पता लगाना हो कि भारत में इस समय साक्षरता की क्या स्थिति है तो हमें सम्पूर्ण गणना करनी होगी, केवल निदर्शन लेकर काम नहीं चलेगा। किन्तु अधिकतर परिस्थितियों में हम निदर्शन के द्वारा निष्कर्ष निकाल सकते हैं। निदर्शन की प्रक्रिया अथवा समग्र या समष्टि से उसके एक ऐसे अंश का चुनाव, जिसके आधार पर सम्पूर्ण, समग्र या समष्टि के विषय में परिणाम निकाले जाते हैं अत्यधिक प्राचीन काल से अनुसंधान कार्यरीति के एक वैध एवं शीघ्रता के साथ कार्य करने के ढंग के रूप में प्रयोग में रहा है।

4.2 निदर्शन का अर्थ एवं परिभाषा

निदर्शन सामान्यतः समग्र में चुने गये अंश के चुनाव को कहा जाता है जो समग्र अथवा सम्पूर्ण का उचित प्रतिनिधित्व करते हैं । एक गृहिणी दूकान पर पनीर क्रय करने से पूर्व, उसका एक टुकड़ा नमूने के रूप में लेगी तथा एक रूई धुनिया केवल थोड़ा नमूना देखकर ही रूई की गाँठ खरीदेगा'। यदि हम किसी जनसंख्या के बारे में कुछ जानने के उद्देश्य से कुछ तत्वों का चुनाव करते हैं तो हम उन तत्वों के समूह को निदर्शन कहते हैं । एक सांख्यिकीय निदर्शन उस सम्पूर्ण समूह अथवा संलग्न का सूक्ष्म चित्र है जिससे निदर्शन लिया गया। उस सम्पूर्ण समूह को जिससे निदर्शन के चुनाव किया जाता है जनसंख्या, समग्र अथवा प्रदाय कहा जाता है।

''किसी भी निदर्शन प्रणाली को अपनाते हुए चुनें गये निदर्शन को दो आवश्यक शर्तों की पूर्ति करनी चाहिए -

(1) तात्विक परिकल्पनाओं का परीक्षण सम्भव होना चाहिए। तात्विक परिकल्पनाएं निदर्शन के विषय में पूर्वकल्पनायं हैं।

(2) सामान्यीकरण परिकल्पनाओं का परीक्षण सम्भव होना चाहिए अर्थात निदर्शन के लिए स्थापित की गई परिकल्पनाओं के समग्र पर लागू होने की जाँच सम्भव होनी चाहिए।

यदि इन परिभाषाओं का विश्लेषण किया जाये तो यह स्पष्ट होता है कि समग्र में से जिन इकाइयों का चयन निदर्शन के रूप में किया जाता है उनके सामान्य लक्षण वे ही होते

है। जो उस समग्र क`होते हैं और इसी दृष्टिकोण से उसे समग्र का प्रतिनिधि माना जाता है। इसका अभिप्राय यह भी हुआ कि यदि चुने गये निदर्शन की समग्र से तुलना की जाये तो उन दोनों में कोई सार्थक अन्तर नहीं मिलेगा। इन चुनी हुई इकाइयों के आधार पर अनुसंधानकर्ता अध्ययन संचालित करता है और उससे जो परिणाम प्राप्त किये जाते हैं उन्हें केवल उस चुने गये समूह पर ही लागू नहीं करता, बल्कि पूरे समग्र के लिए सही मानता है और उसके लिए सामान्यीकरण करता है। इस सुविधा के कारण निःसन्देह रूप से निदर्शन सामाजिक अनुसंधानों का एक आवश्यक व महत्वपूर्ण अंग बन गया है।

4.2.1 संगणना एवं निदर्शन में अन्तर (Difference between Census and Sample)

अब अनुसंधानकर्ता क्षेत्रीय स्रोत से तथ्य प्राप्त करना चाहता है तब उसे यह तय करना होता है कि वह अध्ययन विषय से सम्बन्धित समस्त व्यक्तियों का अध्ययन करें। इनमें पहली विधि समग्र या संगणना विधि तथा दूसरी निदर्शन विधि के नाम से जानी जाती है।

जनगणना या जनसंख्या सर्वेक्षण में विषय से संबंधित समस्त जनसंख्या या इकाइयों का अध्ययन किया जाता है। निदर्शन पद्धति में सम्पूर्ण जनसंख्या या समस्त इकाइयों का अध्ययन न करके उनमें से कुछ ऐसी इकाइयों का अध्ययन किया जाता है जिनमें उस समस्त जनसंख्या या समग्र की विशेषताएँ आ जायें। इस पद्धति में शोधकर्ता अपना ध्यान सीमित संख्या में ''कुछ'' इकाइयों पर केन्द्रित कर लेता है। इससे उसका अध्ययन कम समय, कम खर्च तथा कम श्रम का उपयोग करके ही पूरा हो जाता है।

जनगणना विधि वहाँ आवश्यक होती है जहाँ किसी विषय का गहन अध्ययन करना हो, उच्च स्तर की शुद्धता एवं विश्वसनीयता अपेक्षित हो, तथा सीमित क्षेत्र हो या इकाइयों के नमूने लेना कठिन हो क्योंकि उनमें भिन्नता बहुत अधिक है। उत्पादन गणना, आयात निर्यात गणना, में सामान्यतः यही विधि काम में लायी जाती है। अगर हम किसी नगर के मध्य श्रेणी के सारे परिवारों के आय व्यय की भी जाँच करें तो यह संगणना प्रणाली कहलायेगी। लेकिन व्यवहार में प्रत्येक इकाई को सम्मिलित करना कठिन एवं असुविधाजनक होता है। सम्भव है कि इकाइयाँ बड़े क्षेत्र में बिखरी हुई हों जिसके फलस्वरूप उनमें सम्पर्क स्थापित करना कठिन होता है। इसके अतिरिक्त इसमें अधिक समय, परिश्रम व धन की आवश्यकता होती है। सामाजिक अनुसंधान में समय और धन महत्वपूर्ण कारक है। समग्र का अध्ययन करने में बहुत अधिक व्यय होता है

और सम्भव है कि सूचना एकत्रित करने की योजना ही स्थगित कर दी जाए। समय, श्रम और धन के दृष्टिकोण के कुछ इकाइयों से सूचना प्राप्त करना अधिक उचित है। व्यावहारिक दृष्टिकोण से निदर्शन के परिणामों से उतनी ही परिशुद्धता प्राप्त की जा सकती है जितनी कि जनगणना विधि से सम्भव है।

4.2.2 निदर्शन के आधार एवं विशेषतायें

निदर्शन को समग्र का ''प्रतिनिधि'' मानने के लिए उसकी इकाइयों या घटकों की दो विशेषतायें होनी चाहिए। प्रथम, वे सब एकरूप या समरस हों, तथा द्वितीय उनमें सबको चयन किए जा सकने का समान अवसर हो। जनसंख्या या समग्र की समरसता का अर्थ यह है कि उनकी इकाइयों का प्रकृति लगभग समान होनीचाहिए। भिन्नतायें होने पर निदर्शन समग्र का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकेगा। प्रत्येक इकाई या घटक को निदर्शन में आने का अवसर दिया जाना चाहिए। निदर्शन में शामिल होने का समान अवसर न दिये जाने पर कुछ इकाइयाँ निदर्शन में शामिल नहीं हों पायेंगी और निदर्शन सम्पूर्ण या समग्र का प्रतिनिधित्व नहीं कर सकेगा। यदि विद्यार्थियों के समग्र में से विज्ञान के विद्यार्थियों को अयोग्य मानकर निदर्शन तैयार किया जाएगा तो वह निदर्शन कभी भी प्रतिनिधि नहीं बन सकेगा।

एक अच्छा निदर्शन प्राप्त करने के लिए समग्र की विशेषताओं, उसके उपसमूहों तथा उपवर्गों के गुणों आदि को ध्यान में रखा जाता है। द्वितीय, उस निदर्शन का आकार पर्याप्त होना चाहिए जो उद्देश्य की पूर्ति करें। निदर्शन समग्र अनुपात निश्चित नहीं होता, न ही इसे बनाने का सूत्र है। यंग ने लिखा है कि ''निदर्शन का आकार उसकी प्रतिनिधिपूर्णता की कोई आवश्यक गारन्टी नहीं है। अपेक्षाकृत रूप से, अच्छी तरह चयन किए गये छोटे निदर्शन घटिया तरीके से चयन किए गये बड़े निदर्शन से अधिक विश्वसनीय हो सकते है। निदर्शन की तीसरी विशेषता यह है कि उसके निर्माण करने में पक्षपात तथा मिथ्या-झुकावों को सर्वथा दूर रखा गया है। निदर्शन की इकाइयों का चयन न तो इस आधार पर किया जाना चाहिए कि वे आकर्षक, मनोरंजक, स्वार्थपरक अथवा सुगम हैं और न इस आधार पर उन्हें छोड़ देना चाहिए कि वे कठिन, दुर्गम तथा कष्टकारक है। उनका चयन अपने मन, आदर्श या धारणा के आधार पर नहीं करना चाहिए। जैसे जैसे साम्यवादी विचारधारा के शोधकर्ता को केवल वामपंथी व्यक्तियों को या समाजवादी विचारधारा के शोधकर्ता को केवल समाजवादी व्यक्तियों को अपने निदर्शन में स्थान देना उचित नहीं होगा। चतुर्थ, वह निदर्शन समया या विषय के अनुकूल बनाया जाये। उसका समग्र समस्या के क्षेत्र द्वारा निर्धारित किया जाये। पंचम,

निदर्शन सामान्य ज्ञान, तर्क एवं अनुभव पर आधारित होना चाहिए। उसमें विवेक तथा विचारों को जोड़ा जाये। यदि समग्र राजनीतिक समाज में रहने वाले आर्थिक भौतिक दृष्टिकोण वाले सचेत व्यक्ति से संबंधित होते हैं तो निदर्शन भी राजनीतिक व्यक्ति की प्रकृति के अनुसार बनाया जाना चाहिए।

4.2.3 निदर्शन की सीमाएँ

जैसा कि कई शोधकर्ताओं द्वारा बताया गया है, कि निदर्शन मे कठोर नियन्त्रण की आवश्यकता होती है, निदर्शन का सम्बन्ध छोटे समूहों के अध्ययन में रहना है, इसलिए इस पर आधारित शोध परिणामों को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है । परिणामों की परिशुद्धता भी कई बार आकड़ों की भारीयता से प्रभावित होती है। निदर्शन सन्निकट आकलनों के लिए सर्वश्रेष्ठ है। मूलतः निदर्शन की सीमाओं को हम निम्नलिखित बिन्दुओं में वर्णित कर सकते हैं -

1. निदर्शन उन स्थितियों में उपयोगी नहीं है, जहाँ समष्टि के प्रत्येक इकाई के बारे में जानकारी जरूरी है। उदाहरणार्थ अगर किसी विश्वविद्यालय में कार्यरत कर्मचारियों में 'बोनस' बाँटना हो तो निदर्शन उपयोगी नहीं होगा और प्रत्येक कर्मचारी का 'बोनस व्यक्तिगत रूप से निकालना पड़ेगा।
2. निदर्शन में हम यह पूर्वधारणा रखते हैं कि समष्टि के सभी अवयव एक समान होंगे, परन्तु कई ऐसी स्थितियाँ आती है जिसमें समष्टि विजातीय होता है उदाहरणार्थ किसी विद्यालय में पढ़नें वाले छात्रों की संगीत में रूचि ।
3. सामाजिक वैज्ञानिकों को निदर्शन सम्बन्धित अतिरिक्त समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे कि उत्तरदाताओं की अप्राप्यता, बिखरी हुई इकाइयाँ इत्यादि।
4. निदर्शन में एक छोटी त्रुटि भी परिणामों को पूर्णतया असत्य सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है।
5. निदर्शन से प्राप्त परिणाम केवल वस्तुस्थिति काएक अनुमान ही देते हैं न कि वास्तविकता का ज्ञान।

4.3 निदर्शन के अवयव

निदर्शन की कुछ प्रमुख अवयव निम्नांकित हैं -

1. इकाई
2. समग्र या समष्टि

3. निदर्शन इकाई
4. निदर्शन संरचना
5. स्तर
6. साधन सूची

4.3.1 इकाई

एक प्रारम्भिक इकाई अथवा केवल एक इकाई तत्व अथवा तत्वों का एक ऐसा समूह है जिस पर पर्यवेक्षण किए जा सकते है अथवा जिससे एक सुपरिभाषित सांख्यकीय कार्यरीति के अनुसार अपेक्षित सांख्यिकीय सूचना प्राप्त की जा सकती है। उदाहरणार्थ व्यक्ति, परिवार, फर्म, कारखाने इत्यादि। एक सूचना प्रदान करने वाली इकाई वह इकाई है जो वास्तव में आवश्यक सांख्यिकीय सूचना प्रदान करती है। अथवा जिससे सूचना सरलतापूर्वक प्राप्त की जा सकती है।। सूचना प्रदान करने वाली यह इकाई एक अकेली प्रारम्भिक इकाई अथवा अनेक प्रारम्भिक इकाइयों का समूह हो सकती है। उदाहरण के लिए परिवार का मुखिया । एक विश्लेषण की इकाई वह इकाई है जिसका प्रयोग सारिणीकरण के स्तर पर किया जाता है । यह ध्यान रहे कि सूचना प्रदान करने वाली इकाई तथा विश्लेषण की इकाई भिन्न भिन्न हो सकती है। उदाहरण के लिए सूचना प्रदान करने वाली इकाई के रूप में परिवार का मुखिया हो सकता है तथा विश्लेषण की इकाई के रूप में परिवार अथवा परिवार का काई व्यक्ति हो सकता है।

राजनीतिक समग्र इकाइयाँ अवधारणाओं के द्वारा निर्मित तथा अमूर्त होती हैं। उनको केवल कतिपय चिन्हों, प्रतीकों या संकेतकों द्वारा ही पहचाना जाता है। पार्टन ने लिखा है कि ''सर्वेक्षक यह विचार संबंधी भूल कर बैठता है कि मनुष्यों के समग्र का अध्ययन करते समय केवल व्यक्ति ही उनके समग्र की इकाई बन सकते हैं वास्तव में बहुत कम शोध अध्ययनों में व्यक्ति को अध्ययन की इकाई बनाया जाता है। राजनीतिक शोध में व्यक्ति के मतदाता,दलीय सदस्यता, राजनेता, अनुयायी आदि पक्ष शोध समग्र की इकाई बनते हैं। समग्र की अनेक इकाइयाँ हो सकती है। जैसे -

1. भौगोलिक इकाइयाँ - राज्य, जिला तहसील, ग्राम, नगर वार्ड, गली आदि।
2. राजनीतिक इकाइयाँ - राजनीतिक दल, राज्य, जिला परिषद, पंचायत समिति, पंचायत, दबाव समूह, विधानसभा, संसदीय समितियाँ, राष्ट्र, राष्ट्रीय समूह, राजनीतिक अभिजन, विरोध पक्ष, मतदाता वर्ग आदि।
3. प्रशासनिक इकाइयों- विभाग - कर्मचारी संघ, निगम, अधीनस्थ कार्यालय, नौकर शाह, प्रशासनिक निर्णय, प्रशासनिक कार्यविधि, स्वविवेकय क्षेत्र भर्ती आयोग प्रशासनिक अधिकरण, सचिवालय आदि।
4. सामाजिक इकाइयों - परिवार, जाति क्लब, चर्च संस्कृति धर्म समाजीकरण आदि।
5. आर्थिक इकाइयों - बजट, कर, आय, राष्ट्रीय अथवा, व्यक्तिगत आय, उत्पादन, विनियोग, बैंक, मन्दी उद्योग आदि।
6. व्यक्ति संबंधी इकाइयों - सम्पूर्ण व्यक्ति, पुरूष, स्त्री, बालक, युवा, हिन्दू, मुस्लिम, ग्रामीण शहरी, नागरिक, तस्कर, व्यापारी, मजदूर आदि।

निदर्शन इकाई कोई भी क्यों न हो वह स्पष्ट सुनिश्चित एवं भ्रम रहित होनी चाहिए। वह प्रमाणिक तथा विषय के अनुकूल होनी चाहिए। सबसे बढ़कर वह अवलोकनीय, सम्पर्क योग्य अथवा उपयोगी होनी चाहिए।

4.3.2 समग्र या समष्टि

समग्र या समष्टि उस पूरे समूह को जिसके विषय में हम ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं कहा जाता है। एफ.एन. कर्लिजर ने लिखा है, ''समग्र'' शब्द का अर्थ व्यक्तियों घटनाओं अथवा वस्तुओं के सुपरिभाषित वर्ग के सदस्यों से है। जहोदा ने लिखा है कि, ''समग्र उन सभी व्यक्तियों का योग है जो विशिष्टता के एक समान स्तर को बताते हैं।

''समग्र'' शब्द का प्रयोग, समय के विभिन्न बिन्दुओं का एक विशिष्ट क्षेत्र में एक इकाई अथवा इकाइयों के समूह संबंधित पर्यवेक्षणों के संग्रह के लिए भी किया जाता है।

इस समग्र तथा उसकी इकाइयों को चुनना वैज्ञानिक शोध की दृष्टि से बहुत महत्व रखता है। शोधकर्ता जितनी अधिक स्पष्टता से अपने समग्र को समझेगा तथा उसकी इकाइयों को सावधानीपूर्वक चुनेगा, उतनी ही अधिक मात्रा में उसका शोध सफल तथा दूसरों द्वारा सत्यापन योग्य माना जाएगा। वस्तुतः शोधकर्ता ''सम्पूर्ण'' समूह का अध्ययन न करके उसके किसी ''पक्ष'' या सारभाग का अध्ययन करता है। समग्र या जनसंख्या दो प्रकार के होते हैं - 1. विशिष्ट विशेष या कार्यभार समग्र तथा 2 सामान्य समग्र।

विशेष या कार्यभार समग्र वह विशिष्ट मूर्त तथा स्पष्ट व्यवस्था होती है जिसमें से शोधकर्ता अपने सूचना दाताओं का चयन करता है। इस व्यवस्था को सांख्यिकी में जनसंख्या या समग्र कहा जाता है। शोधकर्ता प्रायः इस समग्र की सीमाओं तक ही सीमित रह कर कायर्क करते हैं, किन्तु सिद्धान्त निर्माण में रूचि रखने वाला राजवैज्ञानिक या राज शोधकर्ता सामान्य कार्य करता है। किन्तु उसकी इच्छा यह होती है कि उसके निष्कर्ष उस विशेष व्यवस्था या समूह पर ही लागू न रहकर अन्य सभी समान व्यवस्थाओं एवं समूहों पर लागू हो। उसके सामान्यीकरण उस समूह से संबंद्ध होते हुए भी स्थान और समय से आबद्ध न रहे। इन समस्त समूहों या व्यवस्थाओं के अमूर्त समग्र को, जिस पर शोधकर्ता

अपने निष्कर्ष लागू करना चाहता है। सामान्य समग्र कहा जाता है जैसे यदि किसी ने राजस्व मण्डल, राजस्थान का अध्ययन किया है तो वह यह चाहता है कि उसके निष्कर्षों को भी राजस्व मण्डलों पर लागू कर दिया जाए। सेल्जनिक तथा गोल्डनर ने भी ऐसा ही किया है।

4.3.3 विशिष्ट समग्र का चयन

निदर्शन शोधकर्ता के विशिष्ट समग्र के भीतर होता है इसलिए विशिष्ट समग्र के विषय में पहले विचार किया जाना चाहिए। व्यवहार में, विशिष्ट समग्र के चयन का आधार बताना अत्यन्त कठिन कार्य माना जाता है। ऐसा करते समय दो बाधाएँ सामने आती है - प्रथम, विशिष्ट समग्र शोधकर्ता की सैद्धान्तिक मान्यताओं को बताता है तथा द्वितीय, समग्र के स्थायित्व या बने रहने के काल का पता लग जाता है जो हो सकता है कि सही न हो। विभिन्न शोधकर्ता एक ही अध्ययन विषय से सम्बन्धित समग्र जैसे - समुदाय के प्रमुख निर्णायकों के विषय में अपने भिन्न भिन्न परिपेक्ष्यों के कारण अलग अलग निष्कर्ष निकालते हैं। बुद्धिजीवियों, ''बेरोजगारों'' आदि विषयक सामग्री के बारे में एकमत होना सम्भव नहीं है। विभिन्न संस्कृतियों वाले देशों में ये एक से नहीं होते। सभी देशों के 'शहरी औद्योगिक क्षेत्र'' भी समान नहीं है।। जिन कारणों से विशिष्ट समयों में विभिन्नता आ जाती है उनमें से तार्किक एवं सैद्धान्तिक कारण प्रमुख होते हैं। उनके समग्र उन शोधकर्ता से भिन्न हो जाते हैं जो विद्यमान प्राक्कल्पनाओं तथा सिद्धान्तों का परीक्षण या प्रमाणीकरण करना चाहते हैं।

समग्रों के चयन के निम्न आधार होते हैं :-

1. **नये सिद्धान्त या सामान्यीकरण की खोज** - ऐसा करने के लिए शोधकर्ता ऐसा समग्र चुनता है जिससे नये तथ्य, सामान्यीकरण आदि ज्ञात हो सकें। वह किसी संघ, दल या समूह का लगातार अध्ययन कर सकता है।

2. **विद्यमान प्राक्कल्पनाओं या सिद्धान्तों का परीक्षण** - इसके अन्तर्गत शोधकर्ता वर्तमान सामान्यीकरण या सिद्धान्त को प्रमाणित करना चाहता है जैसे शोधकर्ता भारत में गिरते हुए अनुशासन के लिए बढ़ते हुए विद्यार्थी राजनेता सम्बन्धों को प्रमाणित करने के लिए राजनीति प्रेरित विद्यार्थियों एवं उनसे सम्बन्धित नेताओं के समग्र को ले सकता है।

3. **प्राक्कल्पना या सिद्धान्त का अप्रमाणीकरण** - इसमें विद्यमान प्राक्कल्पना के सिद्धान्त को असिद्ध करने के लिए समग्र चुना जाता है। लिप्सेट ने मिचैल ने ''अल्पतन्त्र की लोह विधि को असिद्ध करने के लिए एक संघ का अध्ययन किया है।

4. **प्राक्कल्पना या सिद्धान्त का पुनः परीक्षण -** कुछ शोधकर्ता अपने पहले के निष्कर्षों या निर्वचनों का पुनः परीक्षण करते के लिए पुष्टिकारक सामग्री लेते है।। ये स्वयं या दूसरे के अनुसंधान कार्यों का प्रतिवलन करते हैं, अर्थात दुबारा शोध करके सत्य की परख करते है। लेविस ने रेडफील्ड द्वारा किए गये एक गाँव के अध्ययन का प्रवर्तन किया था। हॉथोर्न प्रयोग का भी इसी प्रकार पुनः परीक्षण किया जा चुका है। ऐसा करके पूर्ववर्ती शोधकर्ताओं ने पूर्वाग्रहों का पता लगाया जा सकता है लेकिन समाज, समुदाय आदि स्थैगिक नहीं होते, अतएव प्रतिवलन अनेक समस्याओं को उत्पन्न कर देता है। राजनीति में तो परिवर्तन बहुत ही तीव्र गति से हो सकते हैं। अतः प्रतिवलन और भी अधिक सीमित हो जाता है।

5. **सामान्य प्रकार की खोज** - ऐसे समग्र को शोधकर्ता इसलिए चुनता है कि वह असामान्य या विपथगामी नहीं है। ऐसे समग्र का यन करने से पूर्व शोधकर्ता को विस्तृत अध्ययन करना पड़ता है। इस विषय में कार्टज एवं लेजार्सफील्ड का अध्ययन काफी प्रसिद्ध है।

6. **प्रयोगात्मक अभिकल्प में प्रयोग** - ऐसा प्रयोग कृत्रिम या प्राकृतिक हो सकता है। इसमें शोधकर्ता यह आशा करता है कि उस समग्र में प्रयोग करना सम्भव हो सकेगा। उदाहरण के लिए वोस्ट तथा एल्बर्ट ने मिलकर पाँच संस्कृतियों का प्रयोगात्मक अध्ययन किया है।

7. **सामाजिक कारक** - इस शीर्षक के अन्तर्गत समग्र को चयन करने में सामाजिक कारकों को शामिल किया गया है जैसे - आधार सामग्री की सुविधाजनक प्राप्ति, समय, धन तथा मानव शक्ति की सीमा, सुगमता तथा व्यावहारिक लाभ। व्यावहारिक लाभ में शोध कराने वालों का आदेश, प्रसन्नता, उपाधि की प्राप्ति आदि बातें विचाराधीन रहती है। कभी कभी आकस्मिक घटना या दैवयोग भी कारण बन जाता है। जेम्स वेस्ट की प्लेनविल गाँव के पास मोटरकार खराब हो गई और उसे वहीं कुछ दिन ठहराना पड़ा। उसने शोध के लिये उसी गाँव को समग्र बना लिया।

8. **अन्य कारण-** सामाजिक, आर्थिक, नैतिक एवं राजनीतिक दबाव भी विशेष समग्र को चुनने के लिए विवश करते हैं। समाज की विभिन्नताएं और परिवर्तनशीलता के साथ साथ शोध दल का संगठन भी विशेष निदर्शन के चयन का आधार बन जाता है। अतः इन आधारों का समग्रों निदर्शनों, प्रविधियों आदि सभी पर प्रभाव पड़ता है।

4.3.4 निदर्शन इकाई

ऐसी प्रारम्भिक इकाइयाँ अथवा उन इकाइयों के समूह जो स्पष्ट रूप से परिभाषित, पहचाने जाने योग्य एवं पर्यवेक्षणीय होने के अतिरिक्त निदर्शन की दृष्टि से सुविधाजनक

होते हैं, निदर्शन इकाइयाँ कहलाती है। उदाहरणार्थ, एक पारिवारिक बजट के अध्ययन में प्रायः परिवार को अत्यधिक सुविधाजनक मानते हुए निदर्शन इकाई के रूप में स्वीकार किया जाता है।

4.3.5 निदर्शन ढाँचा

आँकड़ों के संग्रह के दौरान किये जाने वाले समग्र की सभी निदर्शन इकाइयों का एक ऐसा ढाँचा आवश्यक होता है जो उनकी समुचित परिचयात्मक विशेषताओं को प्रदान कर सके और इस प्रकार के ढाँचे को निदर्शन ढाँचा कहा जाता है।

निदर्शन ढाँचों को दो समूहों में विभाजित किया जा सकता है -

1. निदर्शन इकाइयों की सूची, तथा
2. क्षेत्रीय इकाइयों की सीमाओं को निदर्शन करने वाले मानचित्र।

सूची ढाँचे के अन्तर्गत इकाइयों को पहचाने जाने के लिए उपयुक्त सूचना सहित निदर्शन इकाइयों की एक सूची पायी जाती है। प्रायः इस ढाँचे के अन्तर्गत निदर्शन इकाइयों से सम्बन्धित अतिरिक्त निदर्शन अथवा इनके समूहों की, जो प्रायः क्षेत्रीय इकाइयों के रूप में पायी जाती है, भौगोलिक सीमाएं प्रदर्शित की गई होती हैं जिन्हें स्पष्ट रूप से पहचाना जा सकता है।

4.3.6 स्तर

किसी समग्र या समष्टि के कई भाग किये जा सकते हैं। प्रत्येक भाग को स्तर कहते है। स्तर विभिन्न आधारों पर बन सकते हैं। जैसे - किसी स्कूल के विद्यार्थियों को स्तरों में बाँटने का आधार हो सकता है पास होना। पास होने वाले विद्यार्थियों काएक स्तर होगा और फेल होने वाले विद्यार्थियों का दूसरा। इसी प्रकार किसी ग्राम की समष्टि (जनसंख्या) को विभिन्न आधारों पर स्तरों में बाँटा जा सकता है। लिंग के आधार पर पुरूषों और स्त्रियों के स्तर, धर्म के आधार पर हिन्दुओं, मुसलमानों, ईसाइयों आदि के स्तर, शिक्षा के आधार पर निरक्षर, माध्यमिक शिक्षा प्राप्त और उच्च शिक्षा प्राप्त व्यक्तियों के स्तर आदि।

4.3.7 साधन सूची

इकाइयों के सम्बन्ध में साधन सूची को उपलब्ध किया जाता है। इसकी सहायता से समग्र की इकाइयों को जाना जाता है। जैसे - टेलीफोन वाले व्यक्तियों में राजनीतिक जागरूकता का अध्ययन करने के लिए टेलीफोन डायरेक्टरी साधन सूची मानी जायेगी,

किन्तु अनेक समस्याओं का अध्ययन करने के लिए कोई भी साधन सूची उपलब्ध नहीं होती या अधूरी उपलब्ध होती है। ऐसी अवस्था में स्वयं शोधकर्ता को साधन सूची तैयार करनी पड़ती है।। कभी कभी उसे तैयार करना भी बड़ा कठिन होता है। जैसे - राजनीतिक दलों को चन्दा देने वाले पूँजीपतियों का नाम जानना अत्यन्त कठिन होगा। वैज्ञानिक शोध के लिए यह आवश्यक है कि साधन सूची में समस्त इकाइयाँ शामिल कर ली जावें। कोई भी इकाई न छूटे।

यदि साधन सूची उपलब्ध होने योग्य हो तो शोध का कार्य सुगम हो जाता है। कई बार सूची होते हुए भी शोधकर्ता को मिल नहीं सकती जैसे आयकर विभाग के पास आयकरदाताओं की सूची अथवा पुलिस के पास सन्देहात्मक चरित्र के लोगों या गुण्डों की सूची। किसी निदर्शन को तैयार करने से पूर्व साधन सूची अवश्य बनानी पड़ती है।

4.4 निदर्शन में चरण

निदर्शन के नियोजन को निम्नांकित चरणों में विभक्त किया है -

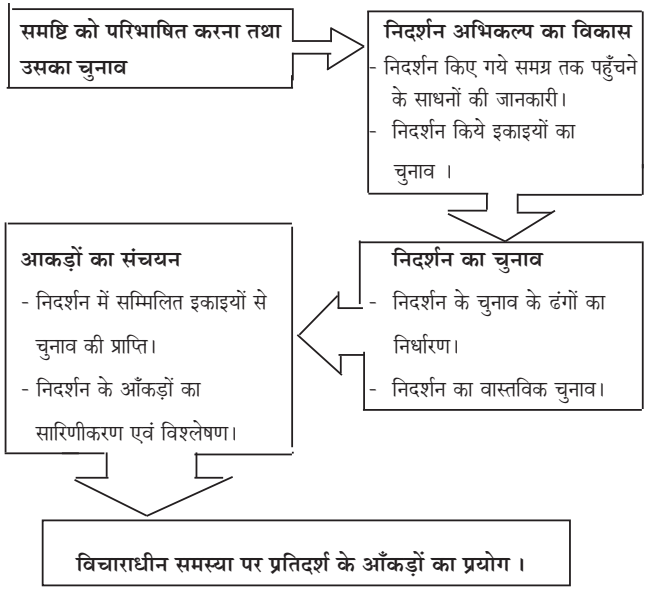

चित्र : निदर्शन के चरण

1. समष्टि को परिभाषित करना तथा उसका चुनाव

सर्वप्रथम समग्र की परिभाषा जाननी चाहिए। इस परिभाषा में स्थान, समय एवं इच्छित विशेषताओं का स्पष्ट उल्लेख किया जाना चाहिए। प्रायः ऐसे क्षेत्र का अध्ययन

करना अधिक उपयुक्त एवं सुविधाजनक होता है जिसकी जनगणना पहले से कर ली गई हो। समय की दृष्टि से इस तथ्य को ध्यान में रखा जाना चाहिए कि अवधि जितनी लम्बी होती है प्रतिनिधित्वपूर्ण प्रतिदर्श प्राप्त करने में उतनी ही अधिक कठिनाई का अनुभव करना पड़ता है। इच्छित विशेषताओं की दृष्टि से जनसंख्या की परिभाषा सामाजिक समूहों के संदर्भ में की जानी चाहिए।

2. निदर्शन अभिकल्प का विकास

समय की परिभाषा करने के पश्चात निदर्शन एवं सारिणीकरण के लिए भौगोलिक क्षेत्रों, सामाजिक समूहों, परिवारों, स्थानों, व्यक्तियों, घटनाओं, व्यवहारों, लक्षणों इत्यादि इकाइयों का चुनाव किया जाना चाहिए। प्रायः प्रयोग में लाई जाने वाली इकाइयों को -

अ) भौगोलिक अथवा राजनीतिक अथवा प्रशासकीय इकाइयों,

ब) सामाजिक समूहों अथवा संस्थाओं,

स) परिवार अथवा कुटुम्ब अथवा निवास की अन्य इकाइयाँ अथवा फार्मों,

द) व्यक्तियों तथा

य) व्यक्तियों के व्यवहारों अथवा विचारों अथवा लक्षणों के रूप में

वर्गीकृत किया जा सकता है ।

जहाँ कहीं भी व्यक्तियों को इकाई के रूप में चुना जाता है वहाँ अध्ययन आदर्श रूप ग्रहण करता है क्योंकि व्यक्तियों द्वारा प्रदान किये गये प्रत्युत्तरों को सारणीबद्ध किया जा सकता है और इन सारिणियों की सहायता से अधिक उपयुक्त निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं। इसके बाद स्त्रोत सूची का पता लगाकर इसकी प्राप्ति की जाती है। यद्यपि समग्र एवं निदर्शन की इकाइयों का निर्धारण प्रायः मस्तिष्क में पायी जाने वाली स्त्रोत सूची के आधार पर किया जाता है फिर भी वास्तविक सूची का निर्माण सम्पूर्ण प्रतिदर्श योजना का एक आवश्यक अंग है।

3. निदर्शन का चुनाव

तत्पश्चात प्रयोग किये जाने वाले निदर्शन के प्रकार अथवा प्रकारों के विषय में निर्णय लिये जाते है। इसके बाद निदर्शन के आकार अथवा निदर्शन के अनुपात को निर्धारित किया जाता है। तत्पश्चात सम्पूर्ण निदर्शन कार्य नीति की योजना तथा निदर्शन के अनुपात को निर्धारित किया जाता है।

इसके बाद निदर्शन के सूची का निर्माण तथा निदर्शन का चुनाव किया जाता है। चुने गए निदर्शन की जाँच इस दृष्टि से की जाती है कि वास्तव में सही इकाइयों को ही निदर्शन में सम्मिलित किया गया है । इसके बाद परिचयात्मक सूचना को प्रतिदर्श कार्डों पर उतारा जाता है। क्षेत्र अनुसंधान को आरम्भ करने के निदर्शन के परिक्षण के लिए निदर्शन सारिणियों का निर्माण किया जाता है।

आकड़ों के संग्रह अवधि के दौरान निदर्शन का नियंत्रण किया जाता है तथा इस बात का प्रयास किया जाता है कि निदर्शन में चुनी गयी सभी इकाइयों में से सम्बन्धित सूचना को किस प्रकार सुरक्षित रखा जा सकता है । कार्यालय के अन्तर्गत निदर्शन पर आवश्यक नियंत्रण लागू किया जाता है तथा इस बात का प्रयास किया जाता है कि विभिन्न निदर्शन इकाइयों से सम्बन्धित सूचना को किस प्रकार सुरक्षित रखा जा सकता है।

4. आंकड़ों का संचयन

निदर्शन में चुनी गयी इकाइयों में पायी जाने वाली विशेषताओं की जाँच समग्र के अन्तर्गत पायी जाने वाली विशेषताओं के सन्दर्भ में की जाती है ताकि निदर्शन में पायी जाने वाली विभिन्न विशेषताओं का पता चल सके जिन पर आरम्भिक स्थितियों में ध्यान दिया गया है। निदर्शन के अन्तर्गत आवश्यकतानुसार सामंजस्य एवं संशोधन किया जाता है। अनुसंधान में प्राप्त आँकड़ों के निदर्शन के विश्वसनीयता के पृष्ठभूमि में विवेचना की जाती है, निदर्शन प्रणालियों को प्रकाशित किया जाता है और प्राप्त हुई समालोचना के आधार पर इनका मूल्यांकन किया जाता है।

4.4.1 एक श्रेष्ठ अथवा प्रतिनिधिपूर्ण निदर्शन की विशेषताएँ

निदर्शन की सफलता उसकी उपयुक्तता, परिशुद्धता पर आधारित है। एक अच्छे चुने गये निदर्शन के द्वारा ही हम अनुसंधान की सफलता की अपेक्षा कर सकते हैं। उपयुक्त निदर्शन तभा चुना जा सकता है जब अनुसंधानकर्ता को अपने समग्र के बारे में प्रयाप्त जानकारी हो एवं उसके पास परिशुद्ध समग्र सूची हो। मिल्ड्रेन पार्टिन लिखते हैं कि सर्वेक्षण में वह निदर्शन उत्तम होता है जो कुशल प्रतिनिधित्व, विश्वसनीयता एवं लोच की आवश्यकताओं की पूर्ति करता है।

व्यवस्थित रूप से चुने गये अपेक्षाकृत छोटे निदर्शन बड़े निदर्शनों से भी अधिक विश्वसनीय होते हैं। सामान्यतः श्रेष्ठ निदर्शन की निम्नांकित विशेषताएं कही जा सकती हैं-

1. **पर्याप्त आकार**-निदर्शन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता उसके आकार की है

अर्थात एक श्रेष्ठ नेदर्शन के लिए यह आवश्यक है कि अनुसंधान समस्या के उद्देश्यों एवं प्रकृति के अनुसार पर्याप्त इकाइयों का चयन कियाय जाए । एक निदर्शन को केवल प्रतिनिधिपूर्ण होना ही पर्याप्त नहीं है। बल्कि उसमें पर्याप्तता भी होनी चाहिए। ''एक निदर्शन उस समय पर्याप्त होता है जब आकार उसके लक्षणों की स्थिरता में विश्वास स्थापित करने के लिए पर्याप्त हो।''

2. **समग्र का उचित प्रतिनिधित्व** - निदर्शन अपने समय का सही प्रतिनिधि होता है। लुण्डबर्ग के अनुसार इस धारणा कि तथ्यों का अंश सम्पूर्ण का प्रतिनिधि है। की वैधता मात्र दो बातों से निर्धारित होती है। यथा 1. अवलोकन किये जा रहे तथ्यों की प्रकृति तथा 2. उनके चुनाव के लिए अपनायी गयी पद्धति । इस प्रकार निदर्शन समग्र का सही प्रतिनिधित्व तभी करेगा जब वह उसके समरूपा हो तथा उसके चुनाव के लिए सही पद्धति काम में ली गयी हो।

3. **अभिनति रहित** - एक श्रेष्ठ निदर्शन की प्रतिनिधित्वता इस बात पर निर्भर करती है कि उसका चुनाव अभिनति रक्षित है या नहीं। सामान्यतः निदेर्शन में अभिनति तीन कारणों से आती है-

अ) यदि निदर्शन अप्रायिकता पद्धति से चुना गया हो।

इस प्रकार जब निदर्शन का चुनाव जाने अनजाने मानवीय इच्छा से प्रभावित हो जाता है तब वह अभिनतिपूर्ण हो जाता है।

ब) यदि समय सूची अपर्याप्त या अधूरी हो और विषय से संबंधित सभी इकाइयों को अपने में सम्मिलित न कर रही हो।

स) यदि अनुसंधानकर्ता अपनी इच्छा का प्रयोग करते हुए निदर्शन में कुछ भी परिवर्तन करता है। चाहे वह इस कारण ही क्यों न हो कि अनेक दूसरी इकाइयाँ लेना चाहता हो) तब इस बात की आशंका रहती है कि निदर्शन का किसी एक ओर मिथ्या झुकाव हो जायेगा।

इस प्रकार एक श्रेष्ठ निदर्शन का चुनाव करते समय वह ध्यान रखा जाता है कि अनुसंधानकर्ता की रूचि, स्वार्थ, इच्छा, सुविधा आदि पर न होकर वस्तुनिष्ठ तरीके से चुना जाना चाहिए।

4. **साधनों एवं उद्देश्यों के अनुरूप** - निदर्शन का चुनाव करते समय अनुसंधानकर्ता को इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि चयनित निदर्शन अनुसंधान के पास उपलब्ध साधनों के अनुरूप हो एवं साधनों के अनुरूप ही निदर्शन की संख्या, चयन निदर्शन प्रविधि आदि को चुना जाना चाहिए। इसी प्रकार अनुसंधान उद्देश्यों के अनुरूप ही होना चाहिए अन्यथा वह व्यर्थ होगा।

4.5 निदर्शन के प्रकार

निदर्शन का चुनाव निम्न प्रकार से किया जाता है -

1. प्रायिकता (सम्भावना) निदशर्न (Probability sampling)
2. अर्द्ध प्रसम्भावना प्रतिचनय निदर्शन (Semi-Probability sampling)
3. अप्रायकिता (असम्भावित) निदर्शन (Non-Probability Sampling)

प्रायिकता का प्रतिचयन या निदर्शन मूलतः सांख्यिकी के नियमों पर आधारित है जिससे अनुसंधानकर्ता यह आकलन कर सकता है कि यदि समग्र एवं निदर्शन दोनों का अध्ययन किया जाए तो उनसे प्राप्त जानकारी में किस सीमा तक अन्तर होने की सम्भावना नहीं है। जितने अन्तर के लिए वह तैयार है उसके आधार पर यह निश्चय भी किया जा सकता है कि निदर्शन बड़ा होना चाहिए, जबकि अप्रायकिता या असम्भाविता निदर्शन के आधार पर समग्र के विषय में ठीक ठीक आकलन नहीं हो सकता। इसका उपयोग सुविधा एवं धन की बचत के उद्देश्य से या अन्वेषणात्मक अध्ययनों में होता ह जिससे अनुसंधानकर्ता को आगे अनुसंधान के लिए कुछ उपकल्पनायें प्राप्त हो जायें।

4.5.1 प्रायिकता या सम्भावना निदर्शन

सम्भाविता या प्रायिकता शब्द का प्रयोग भी सम्भाविता के गणितीय सिद्धांत के अर्थ में करते हैं। इस प्रकार के निदर्शन में प्रत्येक इकाई के चुनाव की सम्भावना रहती है। इस प्रकार निदर्शन का चुनाव ऐसी पद्धति से किया जाता है जिनमें समग्र की प्रत्येक इकाई को निदर्शन में आने का अवसर मिलता है। इसके साथ ही इस बात की गणना भी सांख्यकीय आधार पर की जा सकती है कि इकाई के निदर्शन में सम्मिलित होने की क्याय संभावनायें है?

सम्भावित के दो प्रमुख प्रकार हैं -

1. प्राग-आनुभविक
2. अनुभवजन्य

(1) प्राग-अनुभविक - सम्भाविता के साथ साइमन लाप्लास का नाम सम्बद्ध है। इसे प्राग-आनुभविक इसलिए कहा जाता है क्योंकि हम पहले से ही यह स्वीकार कर आगे बढ़ते हैं कि सम्भाविता निश्चित होती है तथा हम घटनाओं की सम्भाविता का निर्धारण आनुभविक रूप से खोज किये बिना भी कर सकते हैं। लाप्लास यह कहा करता था कि सम्भाविता के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं। हम यह जानते हैं कि एक सिक्के में चित (Head) तथा पट (Tail) दो फलक हैं। इसलिए यदि एक सिक्के को उछाला जाये तो

इसके चित अथवा पट गिरने की सम्भावित 1/2 है। हम इसी प्रकार जानते हैं कि एक पासे में 6 फलक हैं। किसी भी फलक के गिरने की सम्भाविता 1/6 है।

(2) अनुभवजन्य - अनुभवजन्य तथा बारम्बारता सम्भावित अपनी मौलिक प्रकृति में अनुभवजन्य है। इसके अनुसार संभाविता परीक्षणों की एक श्रंखला में एक घटना के घटित होने की संख्या तथा प्रयोगों की सम्पूर्ण संख्या के बीच पाया जाने वाला अनुपात है। उदाहरण के लिए यदि हम एक सिक्के को 100 बार उछालें और हमें 40 बार चित प्राप्त हो तो चित के बल गिरने की घटना की सम्भाविता 40/100 हो जायेगी। इसी प्रकार यदि हम एक पासे को 100 बार फेकें और 10बार 6 वाला फलक ऊपर आये तो 6 वाले फलक के ऊपर आने की सम्भाविता 10/100 हो जायेगी।

सामान्य सम्भावित निदर्शनों के निम्नांकित लाभ हैं -

1. प्रशासनिक लागत अथवा पहले से ही सूचना निर्माण पर लगने वाली लागत में कमी होने के कारण कम लागत के बावजूद भी अच्छे परिणामों की प्राप्ति।

2. विभिन्न स्तरों में प्रयासों के समुचित वितरण के कारण कम व्यय होने पर भी अधिक अच्छे परिणामों की प्राप्ति।

3. व्यक्तिगत स्तरों के लिए आगणन करने की अधिक सम्भावना।

4.5.2 अर्द्ध-प्रसम्भावना प्रतिचयन (Semi-Probability Sampling)

प्रायिकता अथवा सम्भावना निदर्शन में जहोदा एवं कुक ने तीन विधियों का उल्लेख किया है जिन्हें क्रमशः 1 सरल दैव निदर्शन 2. स्तरीकृत दैव निदर्शन तथा 3. बहुस्तरीय दैव निदर्शन कहा जाता है। व्यवस्थित एवं गुच्छ निदर्शन भी प्रायिकता निदर्शन की ही प्रविधि है। अतः मोटे तौर पर प्रायिकता निदर्शन की निम्नांकित विधियाँ हैं ।

1. दैव निदर्शन
2. स्तरीकृत निदर्शन
3. बहुस्तरीकृत निदर्शन
4. व्यवस्थित निदर्शन
5. गुच्छ निदर्शन

निदर्शन के प्रकारों को चित्रात्मक रूप में इस प्रकार प्रस्तुत किया जा सकता है।

4.5.2.1 दैव अथवा यादृच्छिक निदर्शन (Random Sampling)

दैव अथवा यादृच्छिक निदर्शन एवं प्रायिकता या सम्भावना निदर्शन को एक पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है। निदर्शन समग्र के एक अंश को निकालने का एक ऐसा ढंग है जो जनसंख्या अथवा समग्र के प्रत्येक सदस्य के चुनाव को ज्ञात सम्भाविता प्रदान करता है। यहाँ पर यादृच्छित शब्द चुनाव के विशिष्ट ढंग का विशेषण है निदर्शन का नहीं। यदि निदर्शन इस प्रकार किया जाय कि समग्र के सभी तत्वों या इकाइयों को निदर्शन में चुने जाने की सम्भाविता समान हो तो उसे हम दैव यादृच्छित निदर्शन कहते हैं।

दैव निदर्शन के प्रयोग में निम्नलिखित बातों का ध्यान रखा जाना चाहिए।

1. समग्र की इकाइयाँ स्पष्ट कर उनकी सूची तैयार की जाये,
2. इकाइयों का आकार लगभग समान हो,
3. प्रत्येक इकाई एक दूसरे से स्वतंत्र हो,
4. प्रत्येक इकाई को निदर्शन में चुनाव का समान अवसर मिलना चाहिए।
5. निदर्शन चयन की विधि स्वतंत्र होनी चाहिए।
6. अध्ययनकर्ता की प्रत्येक इकाई तक पहुँच सुलभ होनी चाहिए।
7. चुनी हुई इकाई को न तो छोड़ा जाना चाहिए और न ही उसका प्रतिस्थापन करना चाहिए।

दैव या यादृच्छिक निदर्शन के अनेक प्रकार हो सकते हैं एवं उनके चुनने की प्रमुख प्रविधियाँ निम्नलिखित हैं -

1. लॉटरी विधि
2. कार्ड प्रणाली
3. रेमण्ड प्रणाली
4. नियमित अंकन प्रणाली
5. अनियमित अंकन प्रणाली
6. ग्रिड प्रणाली

1. लॉटरी विधि - सरल दैव निदर्शन चुनाव की यह विधि बहुत ही सरल है। कई सामान्य अवसरों पर इसका प्रचलन जनसाधारण में भी देखने को मिलता है। इस विधि के अन्तर्गत अनुसंधानकर्ता समग्र की प्रत्येक इकाई के लिए एक एक कागज की पर्ची तैयार करता है। उस पर उस इकाई का नाम या संकेत लिख दिया जाता है इस प्रकार

बनाई गयी पर्चियों के आधार पर कागज की गोलियाँ बना ली जाती हैं और उन्हें एक साथ ठीक से मिला दिया जाता है। ऐसा करने के बाद अनुसंधानकर्ता जिस संख्या में निदर्शन का चुनाव करना चाहता है उतनी गोलियों निकाल लेता है।और उन पर जिन इकाइयों के नाम या संकेत होते हैं उन्हें निदर्शन मान लिया जाता है। इस विधि का उपयोग करने के लिए एक सावधानी यह रखनी पड़ती है कि सभी गोलियों का आकार बराबर हो।

2. **कार्ड प्रणाली -** यह प्रणाली लॉटरी प्रणाली से मिलती जुलती होती है। लॉटरी प्रणाली में कागज की पर्चियों के उपयोग के कारण इसका एक प्रमुख दोष यह है कि ये पर्चियां एक दूसरे से चिपक सकती है। एक से आकार रंग या बनावट के कार्डों की समस्त इकाइयों के नाम अथवा संख्या का या कोई अन्य चिन्ह अंकित कर दिया जाता है। सबको एकत्रित कर गोल तथा बड़े ड्रम में भर कर जितनी इकाइयों का चुनाव करना होता है उतने बार घुमाकर कार्ड निकाले जाते हैं। निकाले गये कार्डों वाली इकाइयों को शोधकर्ता द्वारा अध्ययन किया जाता है। यह दो तरह से किया जा सकता है- (क)इसमे शोधकर्ता स्वयं या अन्य कोई आँख बन्द करके तथा (ख) इसमें कोई भी आँख खुली रखकर इकाइयों का चयन करता है। दोनों के मध्य इतना ही अन्तर है।

3. **रेण्डम अंक या टिप्पेट प्रणाली -** सरल दैव निदर्शन के चयन की एक अन्य विधि को रेण्डम प्रणाली या टिप्पेट प्रणाली के नाम से जाना जाता है। इस प्रणाली को प्रो. टिप्पेट ने 1927 में गणितीय अंकों के आधार पर तैयार किया है। टिप्पेट की तरह ही फिशर एवं वेल्स (1936) केण्डल एवं स्मिथ (1939) रैण्ड कारपोरेशन (1955), राम मित्रा एवं मथाई (1966) ने भी निदर्शन सारणियाँ बनायी हैं। लेकिन वर्तमान समय में टिप्पेट सारिणी का प्रयोग अधिक किया जाता है। उन संख्याओं को देव निदर्शन का प्रयोग करने के लिए सुनिश्चित कर दिया गया। यह संख्या बिना ही किसी क्रम के कई पृष्ठों पर लिखी हुई है। शोधकर्ता आवश्यकतानुसार, जितनी इकाइयों का अध्ययन करना है। उतनी इकाइयों को किसी भी पृष्ठ से लगातार लेता जाता है। उदाहरण के लिए यदि 100 मजदूरों के समग्र से 10 मजदूरों की इकाइयों का अध्ययन करना है तो उन 100 इकाइयों को क्रम से जमा कर टिप्पेट के क्रम से लेंगे। टिप्पेट प्रणाली में संख्याओं के चुनाव के दो प्रमुख ढंग हैं - 1. प्रत्यक्ष चुनाव का ढंग 2. अवशेष चयन के ढंग ।

(क) प्रत्यक्ष चुनाव का ढंग - किसी विशिष्ट प्रकार से तथा क्रमबद्ध संख्याओं की सारिणी से संख्याओं को चुनकर उन संख्याओं को स्वीकार किया जाता है जो निदर्शन

के आकार से अधिक नहीं होती। उदाहरण के लिए यदि हम 400 इकाइयों के समय से चुनाव करना चाहते हैं और हमने यह निश्चित कर रखा है कि हम संयाओं के स्तम्भों के आरम्भ और अन्त में दी गई संख्याओं के तीन तीन के समूहों में चुनाव करेंगे क्योंकि 400 में तीन अंक पाए जाते हैं ।

(ख) अवशेष वाला ढंग - मान लीजिए कि उस समग्र में 150 इकाइयाँ हैं जिससे हम अपने निदर्शन का चुनाव करना चाहते हैं ऐसी स्थिति में हमें निम्नांकित कार्यरीति का पालन करना पड़ेगा।

1. एकाएक हम संख्याओं का सारिणी के चाहे किसी भी स्तम्भ अथवा पंक्तियों से आरम्भ करें हमें तीन अंकों वाले समूहों के रूप में संख्याओं का चुनाव करना पड़ेगा।

2. हमें ज्ञात करना पड़ेगा कि तीन अंकों वाली संख्यओं में 150 का अधिकतम गुणन क्या है।

3. तीन तीन के समूहों के रूप में चुनी गई विभिन्न संख्याओं में से हमें केवल उन्हीं को स्वीकार करना होगा जो 900 से कम है।

4. स्वीकार की गई 150से अधिक संख्याओं को 150 से विभाजित कर इनके अवशेष को ज्ञात करना होगा तथा इसे ही अन्तिम रूप से निदर्शन में स्वीकार करना होगा।

4. **नियमित अंकन प्रणाली** - नियमित अंकन प्रणाली सरल देव निदर्शन की एक महत्वपूर्ण विधि मानी जाये या नहीं यह एक विवादित प्रश्न है। इस पद्धति के द्वारा अनुसंधानकर्ता जब निदर्शन का चुनाव करता है तब सबसे पहले वह वर्गान्तर की गणना करता है।

इस चुनाव वर्गान्तर की गणना करने के पश्चात आरम्भिक बिन्दु का चुनाव किया जाता है और उसके लिए अनुसंधानकर्ता पहली संख्या तथा वर्गांतर जोड़ता है। जो संख्या प्राप्त होती है उसमें पुनः वर्गान्तर जोड़ा जाता है। और इस प्रक्रिया को समग्र की सूची में जिन इकाइयों के नाम होते हैं उन्हें निदर्शन में सम्मिलित कर लिया जाता है। एक उदाहरण से विधि को स्पष्ट किया जा सकता है। यदि हमें 10,000 के समग्र में से 500 व्यक्तियों का चयन इस विधि से करना है तो हम सर्वप्रथम इन 10,000 व्यक्तियों की सूची तैयार करेंगे। इसके बाद वर्गान्तर की गणना करेंगे जो कि इस उदाहरण के सन्दर्भ में 20 होगी। इस वर्गान्तर की गणना के बाद पहली संख्या व 20 के बीच किसी एक संख्या का चुनाव लॉटरी द्वारा करेंगे। उदाहरण के लिए, हम यह मान लेते हैं कि वह

संख्या 4 है । इस संख्या को आरम्भिक बिन्दु कहा जाएगा। इसमें वर्गान्तर की संख्या हमें प्राप्त होती है। समग्र की सूची में इन अंकों पर जिन व्यक्तियों के नाम होंगे उन्हें निदर्शन में सम्मिलित कर लिया जाएगा।

5. **अनियमित अंकन प्रणाली** - इसमें भी समग्र या जनसंख्या की समस्त इकाइयों की एक सूची बनायी जाती है। इस सूची में प्रथम और अंतिम अंक को छोड़कर शेष इकाइयों की क्रमसंख्या पर शोधकर्ता निशान लगाता चलता है। ये निशान उतनी ही इकाइयों पर लगाए जाते हैं इस कारण इसमें पक्षपात का समावेश हो जाता है।

6. **ग्रिड प्रणाली** - यह क्षेत्र या भौगोलिक आधार पर निदर्शन निर्माण की प्रणाली है। इसमें किसी विशाल भौगोलिक क्षेत्र का जहाँ से निदर्शन लेना है नक्शों या मानचित्र लेकर उस पर सेल्यूलाइड की पारदर्शन ग्रिड प्लेट रख दी जाती है। इस प्लेट में वर्गाकार चौकोर खाने कटे हुए तथा उन पर नम्बर लिखे हुए होते हैं। यह पहले ही निश्चित कर लिया जाता है कि किस आधार पर किन किन नम्बरों का आकस्मिक ढंग से चलन किया जाना है। मानचित्र के जिन हिस्सों पर निर्धारित नम्बरों के वर्गाकार खाने आते हैं उनको चिन्हित करके अध्ययन के लिए चुन लिया जाता है। इसे क्षेत्र निदर्शन कहते हैं किन्तु वह थोड़ा सा भिन्न प्रकृति का होता है।

4.5.2.2 दैव निदर्शन के लाभ

इसके निम्नलिखित लाभ हैं -

1. दैव निदर्शन का प्रयोग किए जाने की स्थिति में समग्र की विशेषताओं अथवा इनके आवंटन का पूर्व ज्ञान आवश्यक नहीं है।

2. अनुसंधानकर्ता अपने परिणामों को यर्थाथता का मूल्यांकन सरलतापूर्वक कर सकता है क्योंकि निदर्शन त्रुटियों संयोग के नियमों का पालन करती है।

3. दैव निदर्शन की इकाइयाँ एक समग्र की परिवर्तनशीलता को अधिक अच्छे ढंग से स्पष्ट कर सकती है। अपेक्षाकृत उस स्थिति की जिसे समान संख्या में इकाइयों का चुनाव स्वेच्छापूर्वक किया गया हो।

4. जैसे जैसे दैव निदर्शन का आकार बढ़ता जाता है वैसे वैसे निदर्शन की प्रतिनिधित्वपूर्णता भी बढ़ती जाती है तथा उस सीमा का निर्धारण सम्भाविता के नियमों के आधार पर किया जा सकता है जिस सीमा तक इसके ऊपर समग्र के एक सही प्रतिनिधि के रूप में विश्वास कर सकते हैं

4.5.2.3 दैव निदर्शन से हानियाँ

1. पहले से समय के सूचीबद्ध रूप से उपलब्ध होने की आवश्यकता के पाए

जाने के कारण दैव निदर्शन का प्रयोग करने के मार्ग में आने वाली कठिनाई।

2. निदर्शन के चुनाव के पूर्व प्रत्येक इकाई के लिए संख्याओं के निर्धारण कार्य में होने वाले समय प्रयासों एवं धन के अतिरिक्त व्यय।

3. असंतोषजनक अथवा भ्रामक निदर्शन प्राप्त होने की सम्भावना । स्टीफन ने लिखा है- ''यह दैव निदर्शन में असन्तोषपूर्ण चुनाव के दौरान चुनाव का दैव एक दिशा में उतनी ही त्रुटियाँ प्रदान करेगा जितनी कि दूसरी दिशा में बहुत कम सहायता एवं आराम प्रदान करता है।''

4. समान सांख्यिकीय विश्वसनीयता की प्राप्ति के लिए आवश्यक निदर्शन का आकार प्रायः स्तरीकृत निदर्शन की तुलना में दैव निदर्शन में अधिक बड़ा होता है।

5. क्षेत्र अध्ययनों के अन्तर्गत चुनी गई इकाइयों के विस्तृत क्षेत्र में फैले होने के कारण समय, प्रयास एवं धन का व्यय अधिक होता है।

4.5.2.4 स्तरीकृत निदर्शन (Stratified Sampling)

सामाजिक अनुसंधान का उद्देश्य विभिन्न वर्गों के बीच तुलनात्मक अध्ययन करना है अथवा ऐसी स्थिति में जबकि अध्ययनकर्ता अध्ययन से पूर्व यह तय कर लेता है कि निदर्शन में समग्र में पाये जाने वाले समस्त वर्गों का उचित प्रतिनिधित्व हो तब स्तरीकृत निदर्शन का उपयोग किया जाता है। ये दोनों ही उद्देश्य सरल दैव निदर्शन के द्वारा ही पूरी किए जा सकते हैं और किए जाते हैं। इसके अतिरिक्त एक ऐसी स्थिति में जबकि समग्र के विभिन्न वर्गो में से कोई एक वर्ग अपेक्षाकृत बहुत छोटा होता है तो सरल दैव निदर्शन के द्वारा लिए गये निदर्शन में उस वर्ग का उतना प्रतिनिधित्व नहीं हो पाता कि उसका दूसरों वर्गों से तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके। यह महत्वपूर्ण है कि परिभाषा इस प्रकार दी जाए कि प्रत्येक तत्व एक और केवल एक ही स्तर में आए। यह हो सकता है कि सब स्तरों में से एक ही अनुसपत में निदर्शन का अनुपात बराबर न हो।

स्तरीकृत निदर्शन को निम्नांकित सारिणी की सहायता से उदाहरण समझाया जा सकता है।

(क) समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन - समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन में प्रत्येक निदर्शन की इकाइयाँ उसी अनुपात में ली जाती हैं जिस अनुपात में वे समग्र के अन्तर्गत होती है। यदि विभिन्न स्तरों में भिन्न भिन्न संख्या में इकाइयाँ पाई जाती है तो प्रत्येक स्तर के लिए समानुपातिकता की प्राप्ति हेतु प्रत्येक स्तर में से इकाइयों को एक स्थिर अनुपात में चुनते हैं। समानुपातिक निदर्शन अनुसंधानकर्ता को इस विषय में निश्चित होने की सामर्थ्य प्रदान करता है कि वह प्रत्येक स्तर से सही अनुपात में इकाइयों का चुनाव कर रहा है।

समानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन के विषय में निम्नलिखित तथ्य उल्लेखनीय है। -

1. समानुपातिक निदर्शन सूक्ष्मता की सीमा को बढ़ा देता है। क्योंकि प्रत्येक स्तर के निदर्शन के अन्तर्गत समानुपातिक प्रतिनिधित्व होता है।
2. इसका प्रयोग करने पर गैर-समानुपातिक निदर्शन की तुलना में प्रायः अधिक बचत होती है।
3. इसका प्रयोग सापेक्षातया सरल है और इसिलए प्रायः प्रयोग में लाया जाना चाहिए।
4. इकाइयों के चुनाव की तुलना में गुच्छों को निदर्शन की इकाइयों के रूप में चुनाव अधिक लाभदायक होता है।
5. स्तरीकरण के लिए उपयुक्त चरों के निर्धारण एवं चुनाव पर अधिक समय व्यय नहीं किया जाता।
6. स्तरों की संख्या जितनी ही अधिक होती है त्रुटि की सम्भावना उतनी ही कम होती है।

(ख) असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन - कभी कभी असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन का चयन करना पड़ता है। जहोदा के अनुसार असमानुपातिक स्तरीकृत निदर्शन के कई कारण हो सकते हैं -

1. निदर्शन के आकार की दृष्टि से सभी समान रूप से विश्वसनीय होते हैं । प्रत्येक स्तर के समान संख्या में इकाइयों का चुनाव किए जाने के कारण विभिन्न स्तरों की तुलना सम्भव हो जाती है।
2. निदर्शन के इस प्रकार से बहुत अधिक होती है क्योंकि इसके उत्तरदाता एक दूसरे से भौगोलिक समीपता की स्थिति में होते हैं।

4.5.2.5 बहुस्तरीय निदर्शन (Multi-Stage Sampling)

सरल दैव निदर्शन विधि से सम्बन्धित आने वाली कठिनाइयों में मुख्य हैं शोधकर्ता के पास समष्टि के समग्र इकाइयों की सूचि का पहले से पूर्ण ज्ञान न होना तथा यदि अध्ययन क्षेत्र अधिक बढ़ा हो तो, इकाइयों के बीच भौतिक दूरी का अधिक होना। बहुस्तरीय निदर्शन इन दोनों कठिनाइयों का निवारण सरलता से कर लेता है बहुस्तरीय निदर्शन में समष्टि को कई स्तरों में विभाजित किया जाता है तथा हर स्तर से प्रतिचयन लिए जाता है। उदाहरणार्थ लोक सभा चुनाव में मतगणना से पहले विभिन्न समाचार पत्रों द्वारा कराया गया सर्वेक्षण बहुस्तरीय निदर्शन पर आधारित होता हैं

4.5.2.6 व्यवस्थित निदर्शन (Systematic Sampling)

निदर्शन का उपयोग करने के स्थान पर समष्टि सूची में से नियमित अन्तराल के मद सदस्यों को चुन लेते है। जैसे यदि 1,500 की समष्टि में हमें 100 का प्रतिचयन लेना हो तो हम समष्टि सूची में से प्रत्येक पन्द्रहवें सदस्य को चुन लेते हैं 1500 को 100 से भाग देकर यह 15 का अन्तराल हमें मिल जाता है । यह आवश्यक है कि पहले तत्व का चयन दैव हो। पहली संख्या चुनने के लिए हम लाटरी की पद्धति या दैव संख्याओं की तालिका का उपयोग कर सकते हैं।

4.5.2.7 गुच्छ निदर्शन (Cluster Sampling)

यदि हम किसी समष्टी को बहुत से समूहों में बाँट लें और फिर इनमें से केवल कुछ समूहों का निदर्शन लेकर उनके तत्वों का अध्ययन करें तो इसे गुच्छ निदर्शन कहते हैं जैसे यदि किसी राज्य में 200 चुनाव क्षेत्र हों और हमें इनमें से 10 का प्रतिचयन ले लें और मतदाताओं का अध्ययन करें तो यह गुच्छ निदर्शन होगा, इस प्रकार से सारे राज्य में नहीं घूमना पड़ेगा। अपने नमूने में आम चुनाव क्षेत्रें के आधार पर हम सारे राज्य के विषय में आकलनकर सकेंगे। सामाजिक सर्वेक्षणों में इस प्रणाली का उपयोग यात्रा के खर्चों को कम करने के उद्देश्य से किया जाता है।

4.5.3 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन (Non-Probability Sampling)

इस प्रतिचयन विधि में इकाइयों का चयन प्रासम्भाव्यता सिद्धान्त नहीं होता, बल्कि अध्ययनकर्ता को इकाइयों के चयन में प्रायः स्वतंत्रता रहती है। जब इकाइयों के चयन का आधार संयोग न रहकर सुविधा, अवसर, निर्णय आदि रहता है जब ऐसे निदर्शन को अप्रसम्भाव्यता निदर्शन कहे हैं। अप्रसम्भाव्य प्रतिचयन की निम्नलिखित विधियाँ होती हैं -

1. **खण्ड निदर्शन (Chunk Sampling)** - इसके अन्तर्गत सम्पूर्ण समष्टि का व्यापक अध्ययन न करके केवल किसी एक विशेष अंश का सुविधानुसार अध्ययन किया जाता है।

2. **यथांश निदर्शन (Quota Sampling)** - इसके अन्तर्गत प्रत्येक स्तर जैसे लिंगभेद, विभिन्न शैक्षिक स्तरों व अन्य स्तरों के समानुपात में प्रतिदर्श की इकाइयों को लिया जाता है।

3. **अवसरानुसार निदर्शन (Incidental or Accidental Sampling)** - इसके अन्तर्गत बिना किसी पूर्व योजना के इकाइयों से सम्पर्क किया जाता है जैसे ट्रेन, बस, होटल, रेस्त्रां मार्ग में जहाँ भी कोई व्यक्ति मिले, उससे ही समस्या सम्बन्धी जानकारी प्राप्त कर ली जाती हैं।

4. **सुविधानुसार निदर्शन (Convenience Sampling)**- अध्ययनकर्ता उन स्थानों, व्यक्तियों, सहभाषियों से सम्पर्क करता है, जिससे उसे सम्पर्क में पर्याप्त सुविधा रहती है। जैसे जब एक महिला शोधकर्ता अपने अध्ययन में अपनी सुविधा के आधार पर केवल महिलाओं का ही चयन अपने प्रतिदर्श इकाइयों के रूप में करती हैं, तब ऐसे निदर्श को सुविधानुसार निदर्श कहते हैं।

5. **उद्देश्यानुसार निदर्शन (Purposive Sampling)** - केवल समस्या से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित व्यक्तियों से ही सम्पर्क किया जाता है। जैसे राजनीतिक समस्याओं के अध्ययन के लिए राजनीति से सम्बन्धित व्यक्तियों को ही अपने प्रतिदर्श का आधार बनाना एक प्रकार से अध्ययन के उद्देश्य से अधिक उपयुक्त रहता है।

6. **विचारानुसार निदर्शन (Judgement Sampling)** - इसमें प्रतिदर्श इकाइयों का चयन विचारपूर्वक किया जाता है । इकाइयों का चयन अध्ययन से सम्बन्धित समस्या के विभिन्न पहलुओं को ध्यान में रखकर किया जाता है।

7. **विशेषज्ञानुसार निदर्शन (Expert's Sampling)** - ऐसे प्रतिदर्श में इकाइयों के चयन में अपने विशेष अनुभव व प्रशिक्षण के कारण विशेषज्ञ के मत की ही अधिक महत्वपूर्ण भूमिका रहती है।

8. **स्वेच्छानुसार निदर्शन (Self-Selected Sampling)** - इसके अन्तर्गत उन इकाइयों का अध्ययन किया जाता है जो स्वेच्छानुसार विभिन्न समस्याओं पर अपना पता समाचार पत्रों व पत्रिकाओं में व्यक्त करते रहते हैं । वहाँ अध्ययनकर्ता अपने प्रतिदर्श के लिए इकाइयों का चयन नहीं करता।

4.5.3.1 अप्रसम्भाव्यता निदर्शन विधि के दोष

1. इसमें इकाइयों का चयन प्रायः अध्ययनकर्ता की सुविधा पर होता है, अतः इसमें पक्षपात की अधिक सम्भावना होती है।

2. पक्षपात के कारण निदर्श समक्ष का प्रतिनिधित्व नहीं करता।

3. इसमें प्रतिचयन की त्रुटि की गणना में कठिनाई होती है क्योंकि ऐसे प्रतिदर्शन में प्रसम्भाव्यता सिद्धान्त की अभिकल्पना नहीं रहती है।

4. इसके द्वारा परिणाम विश्वसनीय तथा वैध नहीं होते, तथा इस कारण इसमें भविष्य कथन की क्षमता भी प्रायः उपलबध नहीं होती।

4.6 सारांश

निदर्शन सामान्यतः समग्र में से चुना गए अंश के चुनाव को कहा जाता है जो समग्र अथवा सम्पूर्ण का उचित प्रतिनिधित्व करते हैं । निदर्शन का सम्बन्ध छोटे समूहों

के अध्ययन में रहता है इसलिए इस पर आधारित शोध परिणामों को संदेह की दृष्टि से देखा जाता है। निदर्शन उन स्थितियों में उपयोगी नही है जहाँ समष्टि के प्रत्येक इकाई के बारे में जानकारी जरूरी है। निदर्शन की कुछ प्रमुख अवयव हैं - इकाई, समग्र या समष्टि, निदर्शन इकाई, निदर्शन संरचना, स्तर, साधन सूची। निदर्शन के नियोजन को चार चरणों में विभक्त किया जाता है : 1. समष्टि को परिभाषित करना तथा उसका चुनाव 2. निदर्शन अभिकल्प का विकास, 3. निदर्शन का चुनाव, 4. आँकड़ों का संचयन निदर्शन का चुनाव निम्न प्रकार से किया जाता है -

1. प्रायिकता (सम्भावना) निदर्शन (Probability Sampling)
2. अर्द्ध प्रसम्भावना प्रतिचयन (Semi-Probability Sampling)
3. अप्रायकिता (असम्भावित) निदर्शन (Non-Probability Sampling)

निदर्शन के चयन तथा इसके प्रयोग में चाहे किसी भी प्रविधि का उपयोग किया जाय, अध्ययनकर्ता के वैयक्तिक गुणों के बिना निदर्शन को न तो विश्वसनीय बनाया जा सकता है और नही इसके द्वारा यथार्थ सूचनाओं को प्राप्त किया जा सकता है। अनुसंधानकर्ता की बौद्धिक ईमानदारी, अध्ययन विषय का समुचित ज्ञान, समग्र की जानकारी तथा एक महत्वपूर्ण विधि के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

4.7 बोध प्रश्न

1. निदर्शन प्रणाली को क्यों प्रयोग किया जाता है? इसके प्रयोग में क्या सावधानी बरतनी चाहिए?

2. निदर्शन कितने प्रकार के होते हैं तथा इनका चयन किस प्रकार किया जाता है? उदाहरण सहित समझाइये।

4.8 सन्दर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

इकाई - 5 परिकल्पनाओं का निर्माण एवं परीक्षण (Hypothesis Formulation and Testing)

इकाई की रूपरेखा-

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 परिकल्पना का अर्थ एवं परिभाषा

5.3 परिकल्पना का उद्देश्य

5.3.1 चरों का वर्गीकरण

5.3.2 परिकल्पना निर्माण के चरण

5.4 परिकल्पना की विशेषताएँ

5.4.1 परिकल्पनाओं के उदगम स्रोत

5.5 परिकल्पनाओं का वर्गीकरण

5.5.1 परिकल्पनाओं का परीक्षण

5.5.2 परिकल्पना परीक्षण के प्रकार

5.5.3 शोध समस्या के आधार पर

5.5.4 आँकड़ों के वितरण के आधार पर

5.5.5 आँकड़ों के संग्रह में चरों की मापन विधि पर आधारित

5.5.6 शोध में सम्मिलित चरों की संख्या पर आधारित

5.6 सारांश

5.7 बोध प्रश्न

5.8 संदर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के पश्चात पाठक जान सकेंगे -

- परिकल्पना का अर्थ तथा परिकल्पना को परिभाषित करने का तरीका ,
- परिकल्पनाओं का वर्गीकरण एवं परिकल्पना निर्माण के चरण,
- परिकल्पना की विशेषतायें एवं परिकल्पनाओं के उदगम स्रोत, तथा
- परिकल्पनाओं का परीक्षण एवं परिकलपना परीक्षण के प्रकार ।

5.1 प्रस्तावना

सामाजिक प्रघटनाओं के अध्ययन में परिकल्पनाओं या उपकल्पनाओं का निर्माण, उनका प्रयोग एवं उनकी उपयोगिता अनुसंधान का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण पक्ष है। किसी भी सामाजिक प्रघटना के वैज्ञानिक अध्ययन में अनुसंधानकर्ता वस्तुतः एक कदम भी आगे नहीं बढ़ सकता जबकि वह अपना अनुसंधानकार्य उपकल्पना से प्रारम्भ न करे। उपकल्पना के अभाव में अनुसंधान की न तो दिशा निर्धारित होती है एवं न ही विषय क्षेत्र का ज्ञान अनुसंधानकर्ता को होता है। अतः अनुसंधानकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह आकड़ों के संकलन व अवलोकन के लिए अपनी कल्पना, अनुभव या अन्य किसी स्रोत के आधार पर एक कार्यकारी तर्क वाक्य का निर्माण करें एवं बाद में अनुसंधान के दौरान इस तर्क वाक्य की परीक्षा करें। यह तर्क सामान्यतः उपकल्पना या परिकल्पना कहलाता है।

5.2 परिकल्पना का अर्थ एवं परिभाषा

परिकल्पना को सामान्यतः एक कार्यकारी तर्क वाक्य या एक काम चलाऊ सामान्यीकरण' माना जाता है। इस तर्क वाक्य अथवा सामान्यीकरण की अनुसंधान के दौरान परीक्षा की जाती है। वह सत्य भी हो सकता है तथा असत्य भी। परिकल्पना का शाब्दिक अर्थ है पूर्व चिन्तक, अर्थात पहले से सोचा गया कोई भी बिचार या चिन्तन। गुडे एवं हैट्ट ने अपनी महत्वपूर्ण पुस्तक 'मेथड्स इन सोशल रिसर्च' में इसे परिभाषित करते हुए लिखा है कि 'उपकल्पना भविष्य की ओर देखती है। यह एक तर्कपूर्ण वाक्य है, जिसकी वैधता की परीक्षा की जा सकती है। यह सत्य भी सिद्ध हो सकती है और असत्य भी' । साधारण शब्दों में परिकल्पना शोधकर्ता द्वारा शोध प्रश्न के उत्तर के बारे में एक सटीक अनुमान है, जिसे वह शोध विधियों द्वारा सत्यापित करना चाहता है।

उपयुर्क्त परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि परिकल्पना एक ऐसा कार्यकारी तर्क वाक्य, कल्पनात्मक धारणा या पूर्वानुमान होता है जिसे अनुसंधानकर्ता अनुसन्धान की प्रकृति के आधार पर पहले से निर्मित कर लेता है एवं अनुसंधान के दौरान अनुसंधानकर्ता परिकल्पना की वैधता की परीक्षा करता है । यह परिकल्पना सत्य असत्य दोनों हो सकती है। यदि अनुसंधान में संकलित एवं विश्लेषित किए गये तथ्यों के आधार पर परिकल्पना प्रमाणित हो जाती है एवं इसी प्रकार की परिकल्पना अनेक बार अनेक

स्थानों पर अर्थात समग्र व काल से परे प्रमाणित होती जाती है। तो वे धीरे धीरे एक सिद्धान्त के रूप में प्रतिस्थापित होती जाती हैं ।

5.3 परिकल्पना का उद्देश्य

वैज्ञानिक अध्ययन परिकल्पना के अभाव में संभव नहीं, परन्तु वैज्ञानिक शब्द का अर्थ अत्यन्त लचीला है। अतः कुछ अध्ययन केवल कठोर मापदण्ड पर ही वैज्ञानिक होते हैं और कुछ साधारण मापदण्ड पर ही वैज्ञानिक कहे जा सकते हैं। वास्तव में सामाजिक विज्ञानों की भी समस्याओं का स्वरूप कठोर मापदण्ड पर वैज्ञानिक नहीं है। कुछ अध्ययनों का स्वरूप बहुत सरल व साधारण होता है। विशेषतः अनुसंधान की प्रारम्भिक अवस्था कभी कभी केवल सामान्य महत्व की जानकारी के लिए ही किया जाता है। अतः ऐसे अन्वेषणात्मक अध्ययन (Exploratory Research) में परिकल्पना की रचना व्यर्थ रहती है क्योंकि यह समस्या का अध्ययन का मुख्य उद्देश्य केवल सामान्य आकड़ों का संकलन करना ही होता है, और उससे प्राप्त जानकारी से ही अनुसंधान का प्रयोजन समाप्त हो जाता है।

परिकल्पना अधिकतर कारणत्मक अनुसंधान (Causal Research) अथवा प्रायोगिक अनुसंधान (Experimental Research) के परीक्षण से सम्बन्धित होता है। किसी परिकल्पना का प्रमुख उद्देश्य चरों के बीच सम्बन्धों को परिभाषित करना है। जैसा कि हम जानते हैं कि परिकल्पना शोध करने के पूर्व ही शोध के अनुमानित परिणाम की व्याख्या है यह परिणाम इस तर्क पर आधारित है कि कैसे एक चर दूसरे चर को प्रभावित करता है। इसलिए, परिकल्पना के प्रमुख घटकों में चर राशियाँ तथा उनमें सम्बन्ध हैं । यह भी कहा जा सकता है कि परिकल्पनाओं के द्वारा शोधकर्ता शोध प्रक्रिया से सम्बन्धित चरों में संबंधों का सत्यापन करता है।

5.3.1 चरों का वर्गीकरण (Classification of Variables)

आमतौर पर चरों को तीन श्रेणी में विभाजित किया जाता है- आश्रित, स्वतन्त्र तथा नियन्त्रित। स्वतंत्र चर वे होते हैं जिन्हें अनुसंधानकर्ता परिवर्तित करते हैं, उदाहरणार्थ अगर एक शोधकर्ता यह देखना चाहता है कि खाद की मात्रा बढ़ाने से खेत की उत्पादकता पर क्या प्रभाव पड़ता है और इसके लिए वह अलग अलग खेतों में खाद की अलग अलग मात्रा देता है तथा हर खेत की पैदावार का आकलन करता है तो इस प्रयोग में उर्वरक की मात्रा स्वतन्त्र चर है तथा खेत में हुई पैदावार आश्रित चर है।

नियंत्रित चर वे चर हैं जिन्हें अनुसंधानकर्ता स्थिर रखना चाहता है। दिये गये उदाहरण में हर खेत में पानी की मात्रा को स्थिर रखकर ही खाद की कार्यक्षमता का परीक्षण किया जा सकता है, अतः पानी की मात्रा इस प्रयोग में नियन्त्रित चर है।

5.3.2 परिकल्पना निर्माण के चरण (Steps in Formulation of a Hypothesis)

परिकल्पना का निर्माण, जैसा कि दिये गये रेखा चित्र में हम देख सकते हैं, अविकसित प्रारम्भिक विचार से शुरू होता है। इसकी उत्पत्ति के स्रोत हम इकाई 1 में पढ़ चुके हैं। इसके पश्चात ही हम संबन्धित साहित्य का सर्वेक्षण तथा प्रारम्भिक अवलोकनों के आधार पर शोध समस्या अथवा शोध प्रश्न का निर्माण करते हैं। तत्पश्चात परिचालित तथा परिभाषित अवधारणाओं (Operational Definitions of Constructs) के सापेक्ष परिकल्पना का निर्माण किया जाता है।

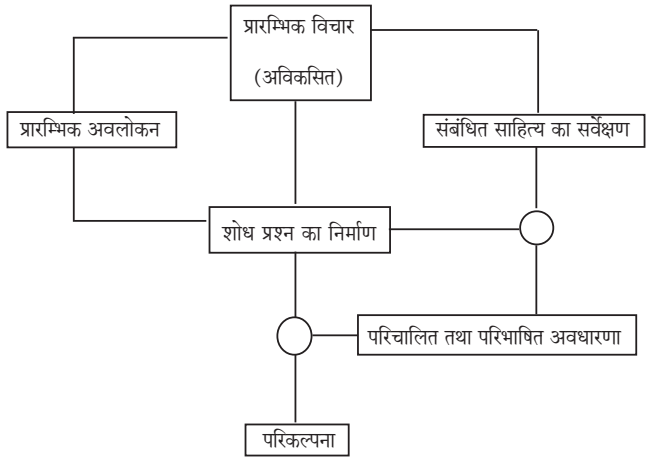

परिकल्पना निर्माण के चरण

5.4 परिकल्पना की विशेषताएँ (Characteristics of a Hypothesis)

प्राकृतिक एवं सामाजिक दोनों ही प्रकार के विज्ञानों में सामान्यतः अनुसंधानकर्ता अपना वैज्ञानिक अध्ययन किसी न किसी परिकल्पना के आधार पर ही प्रारम्भ करता है। गुडे एवं हैट्ट ने परिकल्पनाओं की निम्नलिखित पाँच विशेषताओं का उल्लेख किया है -

1. स्पष्टता

2. अनुभवसिद्धता

3. विशिष्टता

4. उपलब्ध प्रविधियों का सम्बन्ध

5. सिद्धान्तों से संबन्धित

परिकल्पना की कुछ सामान्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं -

1. परिकल्पनाएं सरल एवं अध्ययन विषयों के अनुरूप होनी चाहिए। यदि अध्ययनकर्ता अपनी अध्ययन समस्या से भली भाँति परिचित है एवं वैज्ञानिक प्रकृति वाला है तो वह सुगमता से परिकल्पना का निर्माण करता है।

2. परिकल्पना अनुसंधान कार्य का मार्ग निर्देशन करने वाली होनी चाहिए। अन्यथा अनुसंधानकर्ता जिन तथ्यों का एकत्रीकरण करेगा उनमें से अधिकांश उपयोगी न होंगे।

3. परिकल्पनाओं में अवधारणात्मक में स्पष्टता होनी चाहिए अर्थात उनमें एक तो अवधारणाएं दिखें और दूसरे शब्द एवं विचारधाराएं स्पष्ट एवं भ्रमरहित होनी चाहिए।

4. परिकल्पनाएं विशिष्ट होनी चाहिए, न कि सामान्य अर्थात परिकल्पना तो सदैव अध्ययन समस्या के किसी विशिष्ट पक्ष से सम्बन्धित होनी चाहिए।

5. परिकल्पनाओं में ऐसे पूर्व विचार एवं अवधारणाएं होती है जिनकी सत्यता की जाँच वास्तविक शब्दों के आधार पर की जा सकती है एवं इनमें किसी प्रकार की भी आदर्शात्मकता नहीं होनी चाहिए।

6. परिकल्पना को आवश्यक एवं उपलब्ध पद्धतियों के अनुरूप होना चाहिए, यदि ऐसा नहीं होता है तो परिकल्पना को अव्यवहारिक माना जाता है।

7. परिकल्पनायें वैज्ञानिक रूप से वस्तुनिष्ठ होनी चाहिए। अर्थात इन्हें अनुसंधानकर्ता के आदर्श मूल्य एवं स्वयं की भावनाओं को महत्व न देकर वस्तुनिष्ठ आधारों पर निर्मित करना चाहिए।

8. परिकल्पना जब पूर्व निर्मित सिद्धान्तों से संबंधित होती हैं तो निरन्तर अध्ययन के आधार रूप में बनी रहती है।। नयी एवं अलग अलग तरह की उपकल्पनायें वैज्ञानिकता के लिए कम सफल होती हैं।

9. परिकल्पना प्रस्तुत अध्ययन समस्या का पर्याप्त उत्तर होनी चाहिए अर्थात जो अध्ययन समस्या अनुसंधानकर्ता के सामने है उसका पर्याप्त उत्तर परिकल्पना द्वारा प्राप्त होना चाहिए।

5.4.1 परिकल्पनाओं के उदगम स्त्रोत (Sources of Hypothesis)

सामान्यतः साामजिक विज्ञानों में परिकल्पनाओं के दो प्रमुख स्त्रोतो का उल्लेख किया गया है- पहला वैयक्तिक या निजी स्त्रोत तथा दूसरा बाह्य स्त्रोत। वैयक्तिक या निजी स्त्रोत अनुसंधानकर्ता की अपनी स्वयं की अन्तदृर्ष्टि सूझबूझ कोरी कल्पना, विचार, अनुभव कुछ भी हो सकता है। वह सामान्यतः अपनी प्रतिभा, दूरदर्शिता, विचारों की मौलिकता तथा अनुभवों के आधार पर उपकल्पना का निर्माण कर सकता है। अनेक उदाहरण ऐसे दिये जा सकते हैं जिनमें वैज्ञानिकों ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर ऐसी अनेक परिकल्पनाओं का निर्माण किया जिनके आधार पर विश्व विख्यात वैज्ञानिक नियमों का प्रतिपादन संभव हुआ।

बाह्य स्त्रोत में कोई भी साहित्य, कल्पना, कहानी, कविता, विचार, अनुभव, सिद्धान्त, साहित्य, दर्शन, नाटक, उपन्यास अथवा प्रतिवेदन आदि कुछ भी हो सकता है।इसका मूल आशय यह है कि जब कभी अनुसंधानकर्ता किसी अन्य व्यक्ति या व्यक्तियों के द्वारा प्रतिपादित एक सामान्य विचार के आधार पर अपनी परिकल्पना का निर्माण करता है तो उसे हम परिकल्पना का बाह्य स्त्रोत करते हैं। चार प्रमुख स्त्रोत जिन्हें उपकल्पना की दृष्टी से महत्वपूर्ण माना जाता है वे निम्नलिखित हैं-

1. **सामान्य संस्कृति -** व्यक्तियों की गतिविधियों को समझने का सबसे अच्छा तरीका उनकी संस्कृति को समझना है। व्यक्तियों का व्यवहार एवं उनका सामान्य चिन्तन, बहुत सीमा तक उनकी अपनी संस्कृति के अनुरूप ही होता है। अतः अधिकांश उपकल्पनाओं का मूल स्त्रोत यह सामान्य संस्कृति होती है जिसमें विशिष्ट विज्ञान का विकास होता है।

2. **वैज्ञानिक सिद्धान्त** - वैज्ञानिक सिद्धान्त जो समय समय पर वैज्ञानिकों द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, भी कुछ परिकल्पना के स्त्रोत हो सकते हैं । प्रत्येक विज्ञान में अनेक सिद्धान्त होते हैं, इन सिद्धान्तों से हमें एक विषय के विभिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है। इस प्रकार इन सिद्धान्तों के अन्तर्गत सम्मिलित पक्षों के सम्बन्ध में प्राप्त ज्ञान भी उपकल्पनाओं का स्त्रोत माना जा सकता है।

3. **सादृश्यतायें-** जब कभी दो क्षेत्रों में कुछ समान्ताएं या समरूपताएं दिखायी देती हैं तो सामान्यतयः इस आधार पर भी परिकल्पनाओं का निर्माण कर लिया जाता है, अर्थात ऐसी समरूपताएं या सादृश्यताएं परिकल्पना के निर्माण तथा घटना में किसी कामचलाऊ नियम की खोज के लिए अत्यन्त उपयोगी पथ प्रदर्शक होती है। कभी कभी

दो तथ्यों के मध्य समानता के कारण नई परिकल्पना का जन्म होता है, और इनकी प्रेरणा के कारण सदृश्यताएं होती हैं लुई पास्चर द्वारा चेचक के टीके लगाने के सिद्धान्तों में गायों के चेचक से संक्रमित होने तथा उसी से सादृश्य मनुष्य के शरीर में चेचक के कीटाणु छोड़ने को उपकल्पना माना गया है।

4. **व्यक्तिगत प्रकृति - वैशिष्टय अनुभव** - परिकल्पना का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत सिद्धान्त है।सिद्धान्त हमारे चिन्तन को दिशा देता है। प्रत्येक सिद्धान्त से निगमन द्वारा हमें अनेक उपकल्पनाएँ प्राप्त होती हैं, फिर भी इन परिकल्पनाओं से निगमन द्वारा हम कुछ निष्कर्ष निकालते हैं जिनकी अनुभाव द्वारा ज्ञात तथ्यों से तुलना की जाती है।

5.5 परिकल्पनाओं का वर्गीकरण (Classification of Hypothesis)

1. **आप्रायोगिक परिकल्पनाएँ (Non-Experimental Hypothesis)** - जैसा कि इसके नाम से ही दर्शित है यह उन अनुसंधानों से सम्बन्ध रखता है जो कि वैज्ञानिक मापदण्डों का कठोर अनुपालन नहीं करते है।, उदाहरणार्थ कई सामाजिक शोधक्रियाएं पूर्णतयः वैज्ञानिकता की कसौटी पर खरी नहीं उतरतीं। आप्रायोगिक अनुसंधानों में परिकल्पना प्रायः तीन प्रकार की होती है।

1. **साधारण स्तर परिकल्पना (Simple Level Hypothesis)** - इस प्रकार की परिकल्पना से एक अनुसंधान से सम्बन्धित चरों एवं घटनाओं का केवल साधारण अध्ययन किया जाता है। उदाहरणार्थ अगर हमें 'सड़क दुर्घटनाओं की जानकारी प्राप्त करना है' तब ऐसे अनुसंधान में केवल आँकड़ों का संकलन अथवा वर्गीकरण करना ही पर्याप्त होता है।

2. **विषम स्तर परिकल्पना (Complex Level Hypothesis)** - जब अनुसंधान का उद्देश्य चरों तथा घटनाओं का घन अध्ययन होता है, उस स्थिति में अनुसंधान के स्वरूप का विषम होना स्वाभाविक ही है। उदाहरणार्थ, उपरोक्त शोध समस्या में ही अगर हमें यह भी जानना है कि सड़क दुर्घटनायें सड़क के किन किन स्थानों में तथा किस समय होती हैं तो आकड़ों के संकलन, वर्गीकरण तथा विश्लेषण के कार्यभार में अत्यधिक वृद्धि हो जायेगी, और तदनुसार ऐसे विषम अनुसंधान से सम्बन्धित परिकल्पना को विषम स्तर परिकल्पना कहेंगें।

3. **विशिष्ट स्तर परिकल्पना (Refined Level Hypothesis)** - कुछ अनुसंधान ऐसे होते हैं कि जिनमें संबंधित चरों व घटनाओं के प्रकार्यात्मक सम्बन्धों

(Functional Relations) व कार्यकरण संबंधों (Causal Relationships) का अध्ययन करना होता है। निःसन्देह, ऐसे अनुसंधान का स्वरूप अधिक विशिष्ट होता है, उदाहरणार्थ मान लिया जाय कि अगर हम यह जानना चाहते हैं कि क्या सड़क दुर्घटना यन्त्रों की खराबी के कारण ही मुख्यतः होते हैं, तो इस शोध प्रश्न के लिए हमें विशिष्ट स्तर परिकल्पना की संरचना करनी होगी।

2. **प्रायोगिक परिकल्पना (Experimental Hypothesis)** - प्रायोगिक अनुसंधानों में परिकल्पनाओं का स्वरूप थोड़ा भिन्न होता है क्योंकि उनमें सम्बन्धित चरों का नियंत्रण जोड़ तोड़ तथा अभिक्रियाओं के कारण कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर करना होता है, तथा उनसे सम्बन्धित आँकड़ों का स्वरूप अत्यन्त जटिल होता है और उनका विश्लेषण भी विषम सांख्यिकीय प्रविधियों द्वारा किया जाता है । अतः प्रायौगिक अनुसंधानों में परिकल्पनाओं का स्वरूप अत्यधिक निश्चित नियंत्रित तथा संक्रियात्मक रहता है । प्रायोगिक अनुसंधानों में प्रायः निम्नलिखित परिकल्पनाओं का उपयोग किया जाता है।

1. **अस्तित्वपरख परिकल्पना (Existential Hypothesis)** - अस्तित्वपरख का शाब्दिक अर्थ यह है कि जिसका इस समय अस्तित्व है। इस प्रकार अस्तिवपरख परिकल्पना का सम्बन्ध एक वर्तमान स्थिति के सीमित, स्थानीय तथा व्यक्तिगत अध्ययन से होता है। इस प्रकार के अध्ययन की महत्वपूर्ण विशेषता यह होती है कि इसके अन्तर्गत एक ही इकाई का गहन अध्ययन होता है और इससे प्राप्त निष्कर्ष का स्वरूप पर्याप्त मात्रा में वैज्ञानिक भी रहता है। उदाहरणार्थ स्मरण ज्ञान तथा प्रतिवृत्ति क्रिया से सम्बन्धित शोध।

2. **सांख्यिकीय परिकल्पना (Statistical Hypothesis)** - की यह विशेषता होती है कि इसके स्वरूप की रचना इस प्रकार की जाती है कि जिससे सम्बन्धित चरों के प्रकार्यात्मक सम्बन्धों के अध्ययनों में उपयुक्त सांख्यिकीय परीक्षणों का उपयोग सुविधापुर्वक किया जा सके। एक सांख्यकीय परिकल्पना एक ऐसा कथन होता है जिसका संबंध एक या एक से अधिक प्राचाल (Parameter) से होता है और यह संबंध एक ऐसी स्थिति से रहता है कि जो सत्य हो सकती है।

निराकरणीय परिकल्पना (Null Hypothesis - H_o) - निराकरणीय परिकल्पना की उपधारणा रहती है कि स्वतंत्र चर के प्रभाव के कारण दो या दो से अधिक समूहों में कोई वास्तविक अन्तर उत्पन्न नहीं हुआ है, और जो अन्तर देखने में आया है, उसका सम्बन्ध प्रतीचयन संबंधी त्रुटियों तथा संयोगजन्य त्रुटियां कुछ भी हो सकता है, परन्तु स्वतंत्र चर

का प्रभाव वह नहीं है। स्वतंत्र चर तब तक अन्तर का कारण नहीं माना जायेगा जब तक कि यह अन्तर सन्देह के परे सिद्ध नहीं किया जाता। उदाहरणार्थ यदि हमारा तर्क वाक्य यह है कि गणित योग्यता के आधार पर लड़के और लड़कियाँ एक समान नहीं होतीं, तब इस तर्क वाक्य की पुष्टि का सरलतम आधार पर यह होगा कि हम यह तर्क वाक्य सिद्ध करें कि गणितीय योग्यता के आधार पर लड़कों और लड़कियों में सार्थक अन्तर नहीं है। यदि हम उनमें सार्थक अन्तर नहीं सिद्ध कर पाते हैं तब हमें यह मानना होगा कि गणित योग्यता के आधार पर लड़के और लड़कियाँ एक समान होते हैं।

परन्तु यदि उनकी योग्यताओं में सार्थक अन्तर देखने में आता है तब निराकारणीय परिकल्पना को अस्वीकृत करना होगा और केवल इस स्थिति में हम एक दूसरे प्रकार की परिकल्पना की रचना करेंगे जिसमें हम कह सकेंगे कि गणित में लड़कों की योग्यता लड़कियों की योग्यता से अधिक होती है। (या फिर गणित में लड़कियों की योग्यता लड़कों की योग्यता से अधिक होती है), इस प्रकार की परिकल्पना को वैकल्पिक परिकल्पना Alternative Hypothesis H_A) कहते है।

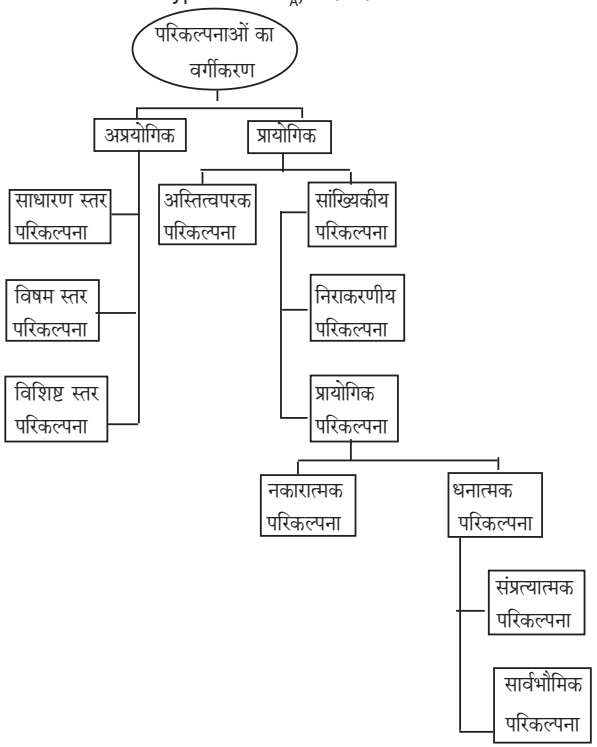

परिकल्पना का वर्गीकरण

4. प्रायोगिक परिकल्पना (Experimental Hypothesis H_1) - प्रायोगिक परिकल्पना की रचना में दो समूहों में अन्तर प्रत्याशित रहता है । चूँकि सामान्यतः समूहों में अभिक्रियाओं की मात्राएँ अलग अलग होती हैं अतः प्रयोगकर्ता अपने आँकड़ों के द्वारा प्रायोगिक परिकल्पना की पुष्टि को प्रत्याशित करता है। प्रायोगिक परिकल्पना को वैकल्पिक परिकल्पना भी कहते हैं । चूँकि ऐसी परिकल्पना के अन्तर्गत अध्ययन से संबंधित दोनों समूह में अन्तर प्रत्याशित रहता है, अतः प्रायोगिक परिकल्पना के अन्तर के प्रकार के आधार पर दो रूप, एक धनात्मक परिकल्पना (Positive Hypothesis) तथा दूसरा नकारात्मक परिकल्पना (Negative Hypothesis) देखने में आता है, इनके आधार पर सम्बन्धित प्रस्तावित परिकल्पना के भी दो रूप हो जाते हैं।

5. संप्रायात्मक परिकल्पना (Conceptual Hypothesis) - जब एक परिकल्पना स्वतंन्त्र चर तथा आश्रित चर के प्रत्याशित संबन्धों के विषय में एक संक्षिप्त कथन होता है, तब उसे संप्रयात्मक परिकल्पना कहते हैं । एक संप्रयात्मक परिकल्पना की रचना प्रतिरूप (माडल) के आधार पर की जाती है। इसकी रचना से पूर्व अनुसंधानों तथा सम्बन्धित सिद्धान्तों की सहायता ली जाती है, तथा सम्बन्धित चरों व सम्प्रत्ययों की संक्रियात्मक व्याख्या करनी होती है।

6. सार्वभौमिक परिकल्पना (Universal Hypothesis) - इस प्रकार की परिकल्पना का उद्देश्य सम्बन्धित चरों के विषय में ऐसे सम्बन्ध स्थापित करना होता है जिनका स्वरूप सार्वभौमिक हो अथवा परिकल्पना के आधार पर प्राप्त निष्कर्षों में ऐसे सामान्य नियमों की रचना करना होता है जो प्रत्येक काल तथा देश में वैध हो। सार्वभौमिक परिकल्पना केवल उसी स्थिति में सम्भव है, जबकि एक विषय का ज्ञान भण्डार पर्याप्त रूप से वैज्ञानिक स्तर पर विकसित हो। उदाहरणार्थ अवगढ़ों की गैसेस हेतु परिकल्पना (Sbshsftp'd Hypothesis for Gases)

5.5.1 परिकल्पनाओं का परीक्षण (Testing of Hypothesis)

परिकल्पना का परीक्षण एक अनुमान तथा निर्णय लेने की प्रक्रिया है जिसमें हम प्रतिदर्श के आधार पर यह सत्यापित करते हैं कि समष्टि प्राचाल (Parameters of the Universal Set) एक दी गई संख्या से कम, ज्यादा अथवा बराबर है। परिकल्पना के परीक्षण द्वारा हम यह तय कर सकते हैं कि दिये गये परिकल्पना की विश्वसनीयता कितनी है? परिकल्पना परीक्षण में विद्यार्थियों को परिकल्पना की विश्वसनीयता का मूल्यांकन करना पड़ता है । निराकरणीय परिकल्पना को अस्वीकार करने से पहले यह मान लिया

जाता है कि परिकल्पना की विश्वसनीयता उसके मान पर निर्भर करती है।

परिकल्पना परीक्षण में हम सांख्यिकी के प्रयोग से परिकल्पना के सत्य होने की प्रायिकता ज्ञात करते हैं। परिकल्पना परीक्षण के सामान्यतः चार चरण होते हैं :

1. निराकरणीय परिकल्पना का निर्माण तथा वैकल्पिक परिकल्पना का निर्माण।

2. परिकल्पना की सत्यता का मूल्यांकन करने के लिए परीक्षण आँकड़ों का निर्धारण।

3. पी-मूल्य (p-value) को ज्ञात करना, जो कि इस बात की प्रायिकता दर्शाता है कि परीक्षण आँकड़ों की सार्थकता कम से कम उतनी ही है जितनी कि परिकल्पना के सत्य होने की स्थिति में अवलोकनों में प्राप्त होता है। पी-मूल्य का मान जितना छोटा होगा, निराकरणीय परिकल्पना की सत्यता के विरूद्ध तर्क उतना ही सशक्त होगा।

4. निकाले गये परीक्षण आँकड़ों के दिये गये सार्थक स्तर के मानक मूल्यों से तुलना की जाती है। यदि परीक्षण आँकड़ों का मूल्य मानक मूल्यों से अधिक होता है तो निराकरणीय परिकल्पना को अस्वीकारकर वैकल्पिक परिकल्पना को स्वीकार कर लेते हैं और इसके विपरीत दशा में हम वैकल्पिक परिकल्पना को अस्वीकार कर के निराकरणीय परिकल्पना को स्वीकार कर लेते हैं।

5.5.2 परिकल्पना परीक्षण के प्रकार (Types of Hypothesis Tests)

परिकल्पना के परीक्षण के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण हैं। प्रत्येक परीक्षण निश्चित परिस्थिति तथा पूर्वधारणा के लिए उपयुक्त होता है। हर परीक्षण की दूसरे के सापेक्ष कुछ अच्छाइयाँ एवं कमियाँ रहती हैं। परिकल्पना परीक्षण का प्रकार मुख्यतः निम्नलिखित पूर्वधारणाओं पर आधारित किया जाता है।

5.5.3 शोध समस्या के आधार पर (On the Basis of Research Problem)

जैसा कि पूर्व में बताया गया है कि निराकरणीय परीकल्पना उपधारणा इस बात की पुष्टि करती है कि स्वतंत्र चर के प्रभाव के कारण दो या दो से अधिक समूहों में कोई वास्तविक अन्तर उत्पन्न हुआ है या नहीं। उदाहरणार्थ यद हम यह देखना चाहते हैं कि किसी कक्षा में पढ़ रहे छात्रों की लम्बाई औसतन पाँच फीट है या नहीं तो इसके लिए हम निराकरणीय परिकल्पना निम्न प्रकार से लिख सकते हैं।

(1) H_o : छात्रों की लम्बाई $\leq$ 5 फीट या,

(2) H_o : छात्रों की लम्बाई $\geq$ 5 फीट

यदि हम सिर्फ यह जानना चाहते हैं कि 'क्या छात्रों की औसत लम्बाई 5 फीट से अधिक है?' इसके लिए पहली परिकल्पना पर्याप्त है और यदि प्रश्न यह है कि 'क्या छात्रों की औसत लम्बाई 5 फीट से अधिक है' तो दूसरी परिकल्पना का प्रयोग होगा, परन्तु हम सिर्फ यह देखना चाहते हैं कि औसत लम्बाई 5 फीट है अथवा नहीं, तब हमें ऐसी परिकल्पना का निर्माण करना होगा जो कि पहले लिखे दोनों परिकल्पनाओं को एक साथ परीक्षित करें, अर्थात

(3) H_o : 5 फीट $\leq$ छात्रों की लम्बाई $\geq$ 5 फीट

पहले दो प्रकार की परिकल्पनाओं का परीक्षण हम एकपक्षीय (One Tailed test) परीक्षण से करते हैं, क्योंकि यहाँ सिर्फ आँकड़ों के वितरण को मानक प्रकृत वितरण (Standard Normal Distribution) के सापेक्ष एक ही दिशा से पुष्टि करना होता है, इसके विपरीत उपरोक्त लिखित तीसरे परिकल्पना में पुष्टि दोनों दिशा में करने के लिए हम द्वि-पक्षीय परीक्षण (Two-tailed test) की सहायता लेते हैं।

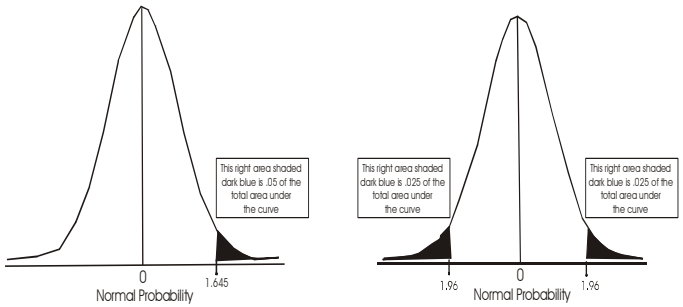

टी-परीक्षण, A-परीक्षण तथा जेड - एक-पक्षीय परीक्षण के उदाहरण हैं (यद्यपि इन परीक्षणों को द्वि-पक्षीय परीक्षण के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है।

5.5.4 आंकड़ों के विवरण के आधार पर (On the Basis of Data Distribution)

टी-परीक्षण तथा ए-परीक्षण का उपयोग जिन आँकड़ों पर किया जाता है, उसका स्वरूप प्रायः जनसंख्या सम्बन्धित प्राचल होता है, परन्तु कुछ आँकड़े ऐसे भी होते हैं कि जिनका स्वरूप प्राचल न होकर अप्राचल होता है। ऐसा प्रायः तब होता है जबकि आँकड़े दो या अधिक संवर्गों में विभाजित होते हैं स्पष्टतः व्यक्तियों, मूल्यों घटनाओं व आकड़ों को जब इस प्रकार का विभाजन होता है तब उनके सम्बन्धों में प्राचल सम्बन्धी अथवा प्रतिचयन सम्बन्धी अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। ऐसी स्थिति में उनका संबंध सामान्य जनसंख्या से न होकर विशेष संवर्गों से होता है। सांख्यिकी में ऐसे संवर्गों में

विभाजित आँकड़ों को ही अप्राचल आँकड़े कहते हैं। ऐसे संवर्गों में विभाजित आँकड़ों के अन्तर की सार्थकता की जाँच के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षणों का उपयोग किया जाता है। निम्नलिखित सारणी में कुछ प्रमुख प्राचल तथा अप्राचल परीक्षण तथा उनके सूत्र दिये गये हैं।

उद्देश्य	प्राचल परीक्षण (Parametric Tests)	अप्राचल परीक्षण (Non-Parametric Tests)
किसी समूह के मध्यमान की सार्थकता का आंकलन To assess the Mean of a population (μ)	z-test, test statistics given as $z=\frac{\bar{X}-\mu_{Hs}}{\sigma_p l\sqrt{n}}$ t-test, test statistics given as $t=\frac{\bar{X}-\mu_{Hs}}{\sigma, l\sqrt{n}}$ with d.f. =(n-1),where $\sigma=\sqrt{\frac{\sum_{n-2}^{n}(X_i-\bar{X}_{\gamma^2}}{n-1}}$	Sign Test, test statistic is given by $z=\frac{x-0.5}{\sqrt{\frac{0.25}{n}}}$ where
दो बड़े तथा स्वतंत्र समूहों के माध्यमान के अन्तर की सार्थकता की जाँच To assess the difference in mean of two independent samples.	z-test for difference in mean, and the test statistics is given as: $z=\frac{\bar{X}_1-\bar{X}_2}{\sqrt{\sigma_p^2\left(\frac{1}{n_1}+\frac{1}{n_2}\right)}}$ OR In case is not known we use in t-test$_2$ test statistics given as $t=\frac{\bar{X}_1-\bar{X}_2}{\sqrt{\frac{\sum_{i=1}^{n}(X_2-\bar{X}_1\gamma^2+\sum_{i=1}^{n}(X_\mu-\bar{X}_2\gamma^2}{n_2+n_2=2}}\times\sqrt{\frac{1}{n_2}+\frac{1}{n_2}}$ with d.f.=($n_1+n_2=2$), Alternatively $t=\frac{\bar{X}_1-\bar{X}_2}{\sqrt{\frac{(n_2-1)\sigma_2^2+(n_2-1)\sigma_2^2}{n_2+n_2-2}}\times\sqrt{\frac{1}{n_1}+\frac{1}{n_2}}}$	Wilcooxon Matched Pair Test (also known as Signed Rank Test); $z=\frac{R-\mu_i}{\sigma_1}$ *where R is the sum of ranks of the smaller sample* $\sigma_i=\sqrt{\frac{n_1n_2(n_2+n_2+1)}{12}}$ $\mu_i=\frac{n_2(n_2+n_2+1)}{2}$ n_1= Smaller Sample n_2 = Larger sample. Wilcooxon-Mann Whitney Test (U test) $U=n_1n_2+\frac{n_2(n_2+1)}{2}R$ Where n_1 and n_2 are the sample sizes and R_1 is the sum of ranks assigned to the values of the first sample.
	Paired t-test or difference test $t=\frac{\bar{D}-o}{\sqrt{\frac{\left(\sum_{i=1}^{n}D_1^2-\bar{D}_2^2\right)n}{n-1}}/\sqrt{n}}$ With d.f.=(n-1), where n=no.of pairs of two samples. Where D is the difference in pairs and D is the average of difference in the pairs.	
किसी प्रतिदर्श के अनुपात की सार्थकता To Assess the proportion (p) of a sample.	z-test and the test statistics is given as: $Z=\frac{H-p}{\sqrt{p-q\ln}}$ if p and q are not known we use and in their places.	One sample Run Test Distribution mean s.d. $\sigma_1=\sqrt{2n_1n_2\frac{2n_1n_2-n_2-n_2}{(n_1+n_2)^2(n_1+n_2-1)}}$
प्रसारण की सार्थकता Variance (σ_P^2)Analysis	Chi-square and the test statistics is given as- $X^2=\frac{\sigma_x^2}{\sigma_r^2}(n=1)$ with d.f.=(n-1) F test and the test statistics is given as $F=\frac{\sigma_{r^2}^2}{\sigma_{r^2}^2}=\frac{\Sigma(X_n\bar{X}_1)^2\ln-1}{\Sigma(X_n-\bar{X}_n)^2\ln-1}$ where σ_{x1}^2 is treated $>\sigma_{x2}^2$ with d.f. = ς_2=(n_1-1) for greater variance and d.f. = ς_2 =(n_2-1) for smaller variance.	The Kruskall Wallis Test (11 Test): $H=\frac{12}{n(n+1)}\sum_{i=1}^{i}\frac{R^2}{n_2}-3(n+1)$ where $n=n_1+n_2.....n_2$ and R_i being the sum of the ranks assigned to n_1 observation in the ith sample.

5.5.5 आँकड़ों के संग्रह में चरों की मापन विधि पर आधारित (On the Basis of Scale used for Data Collection)

सभी परिकल्पना परीक्षण चरों तथा उनके आपस के सम्बन्धों से जुड़े होते हैं, इसलिए चरों से संगठित आँकड़े किस मापन प्रक्रिया पर आधारित हैं, परीक्षण के चयन के लिए अति आवश्यक है। मुख्यतः मापन को निम्नलिखित श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

1. **क्रमवाचक मापक (Ordinal Scale)** - मापन के सारे मद एक क्रम में रहते हैं, किन्तु उनके बीच न तो अन्तर बराबर होता है न ही अनुपात । उदाहरणार्थ तुलनात्मक अध्ययनों में हम यह तो जानते हैं कि कोई मद दूसरे से अधिक है अथवा नहीं, किन्तु यह नहीं कह सकते कि कितना अधिक है।

2. **गुणात्मक मापक (Nominal Scale)** - मापन के सारे मद केवल चरों की गुणात्मकता का ही संकलन करते हैं तथा इनका क्रम से विश्लेषण पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है । उदाहरणार्थ कक्षा में छात्रों की नामांकन सूची जो कि सिर्फ छात्र के नाम के वर्णो पर आधारित है।

3. **अन्तराल मापक (Interval Scale)** - मापन के सारे मद एक क्रम में रहते हैं। उदाहरणार्थ - किसी कक्षा में उत्तीर्ण छात्रों की रैंक सूचि। प्रथम आये छात्र एवं पाँचवें आये छात्र के बीच 4 छात्र हैं। उसी प्रकार तीसवें तथा चौतीसवें छात्र के बीच में चार छात्र हैं, परन्तु हम यह नहीं कह सकते हैं कि पाँचवां स्थान प्राप्त करने वाला छात्र तीसवाँ स्थान प्राप्त करने वाले छात्र से छः गुना अधिक होशियार है।

4. **अनुपात मापक (Ratio Scale)** - मापन के सारे मद एक क्रम में रहते हैं तथा किन्हीं दो के बीच का अन्तर का अनुपात स्थिर रहता है । उदाहरणार्थ मीटर - स्केल, जिसमें 2 सेमी. तथा 4 सेमी. के बीच का अन्तर 25 सेमी. तथा 27 सेमी. के बीच के अन्तर के बराबर नहीं होता है, बल्कि 2 सेमी, 4 सेमी. के आधा, 1 सेमी के दुगना, इत्यादि के बराबर होता है।

अनुपात मापक से सम्बन्धित आँकड़ों में प्राचल परीक्षणों का प्रयोग करते हैं, तथा अन्य के लिए अप्राचल परीक्षणों का प्रयोग किया जाता है। अन्तराल मापक से संचयित आँकड़ों का विवरण यदि सामान्य प्रकृत (Standard Normal) हो तो प्राचल परीक्षण का प्रयोग किया जा सकता है।

मापन विधि (Scale Type)	परिकल्पना परीक्षण
गुणात्मक मापक (Normal Scale)	Mc Nemar Test, Sign test
क्रमवाचक मापक (Ordinal Scale)	Wilcoxon test
अंतराल मापक (Interval Scale)	t-test (for sample size < 30), z-test for large sample, ANOVA, Chi-Square Test
अनुमान मापक (Ratio Scale)	t-test (for sample size <30), z-test for large samples, ANOVA, Chi-Square Test

5.5.6 शोध में सम्मिलित चरों की संख्या पर आधारित

यदि हमारी शोध समस्या एक से अधिक चरों के सम्बन्धों के उद्देश्य से की जा रही हो तो उस स्थिति में एक चरीय विश्लेषण (Univariate Analysis) पर्याय नहीं होगा। यदि हम दो चरों का प्रभाव एक साथ देखना चाहते हैं तो हमें द्वि-चरीय विश्लेषण (Bivariate Analysis) करना होगा, और यदि यही प्रभाव हम तीन अथवा उससे अधिक चरों में देखना चाहें तब हमें बहु-चरीय विश्लेषण (Multiviriate Analysis) करना होगा।

उदाहरण 1 : एक अध्ययन में विज्ञान विषय के प्रति लड़कों तथा लड़कियों की प्रतिक्रियाओं की आवृत्ति अग्र रूप से प्राप्त हुई। बताइये क्या इनमें सार्थक अन्तर है?

संवर्ग	पूर्णतः अमान्य A	अमान्य B	अनिश्चित C	मान्य D	पूर्णतः मान्य E	योग F
लड़के	4	10	20	40	25	100
लड़कियाँ	10	15	50	20	5	100
योग	15	25	70	60	30	200

प्रस्तुत उदाहरण में ज्ञात करने के लिए लड़कों तथा लड़कियों की संयुक्त आवृत्तियों के आधार पर गणना की जाती है। अतः यहाँ विभिन्न संवर्गों के लिए लड़कों की f_o संख्या निम्नलिखित होगी।

A संवर्ग में 200 में से संयुक्त अभिवृत्तियाँ 15 हैं,

अतः संवर्ग में 100 में से संयुक्त अभिवृत्तियाँ 7.5 हैं,

इसी प्रकार B, C, D तथा E संवर्गों में ये संख्यायें क्रमशः 12, 5, 35, 30 तथा 15 हुई। चूँकि यहाँ लड़कों तथा लड़कियों की f_o सभी संवर्गों में समान होगी।

संवर्ग	पूर्णतः अमान्य A	अमान्य B	अनिश्चित C	मान्य D	पूर्णतः मान्य E
f_o	5	10	20	40	25
f_e	7.5	12.5	35	30	15
f_o-f_e	-2.5	-2.5	-15	10	10
$(f_o-f_e)^2$	6.25	6.25	225	100	100
$(f_o-f_e)^2/f_o$	.83	.50	6.43	3.33	6.67
$\Sigma \chi^2$	17.76				

लड़कियों के मान की गणना

संवर्ग	पूर्णतः अमान्य A	अमान्य B	अनिश्चित C	मान्य D	पूर्णतः मान्य E
f_o	10	15	50	20	5
f_e	7.5	12.5	35	30	15
f_o-f_e	2.5	2.5	-15	-10	-10
$(f_o-f_e)^2$	6.25	6.25	225	100	100
$(f_o-f_e)^2/f_o$	.83	.50	6.43	3.33	6.67
$\Sigma \chi^2$	17.76				

यहाँ लड़कों तथा लड़कियों का योग = 17.76 + 17.76 = 35.2

यहाँ d,f = (2-1) (5-1) = 4

4. d,f पर सार्थकता के लिए का मान 5 प्रतिशत विश्वास के स्तर पर = 9.488, एवं 1 प्रतिशत स्तर पर = 13.277

प्रस्तुत अध्ययन में प्राप्त χ^2 का मान दोनों मानों से अधिक है, अतः यहाँ निराकरणी परिकल्पना सत्य नहीं हो सकती है और 1 प्रतिशत विश्वास स्तर पर यह मानना होगा कि विज्ञान विषय के प्रति लड़के और लड़कियों की रूचि में सार्थक अन्तर देखने में आये हैं।

5.6 सारांश

अनुसंधानकर्ता के लिए यह आवश्यक है कि वह आकड़ों के संकलन व अवलोकन के लिए अपनी कल्पना, अनुभव या अन्य किसी स्रोत के आधार पर एक कार्यकारी तर्क वाक्य का निर्माण करे एवं बाद में अनुसंधान के दौरान इस तर्क वाक्य की परीक्षा करें। यह तर्क वाक्य सामान्यतः उपकल्पना या परिकल्पना कहलाता है।। परिकल्पना शोधकर्ता द्वारा शोध प्रश्न के उत्तर के बारे में एक सटीक अनुमान है, जिसे वह शोध विधियों द्वारा सत्यापित करना चाहता है। अन्वेषणात्मक अध्ययन (Exploratory Research)में परिकल्पना की रचना व्यर्थ रहती है क्योंकि यहाँ समस्या के अध्ययन का मुख्य उद्देश्य केवल सामान्य आकड़ों का संकलन करना ही होता है। परिकल्पना के प्रमुख घटकों में चर राशियाँ तथा उनमें संबंध है। यह भी कहा जा सकता है कि परिकल्पनाओं के द्वारा शोध कर्ता शोध प्रक्रिया से सम्बन्धित चरों में सम्बन्धों का सत्यापन करता है।

सामान्यतः सामाजिक विज्ञानों में परिकल्पनाओं के दो प्रमुख स्रोतों का उल्लेख किया गया है - पहला वैयक्तिक या निजी स्रोत तथा दूसरा बाह्य स्रोत। प्रायोगिक अनुसंधानों में परिकल्पनाओं का स्वरूप थोड़ा भिन्न होता है, क्योंकि उनमें संबंधित चरों का नियंत्रण जोड़ तोड़ तथा अभिक्रियाओं के कारण कठोर वैज्ञानिक मापदण्ड पर प्रायोगिक अभिकल्पों का उपयोग करना होता है, तथा उनसे सम्बन्धित आकड़ों का स्वरूप अत्यन्त जटिल होता है। और उनका विश्लेषण भी विषय सांख्यिकीय प्रविधियों द्वारा किया जाता है। प्रायोगिक अनुसंधानों में प्रायः निराकरणीय परिकल्पना और वैकल्पिक परिकल्पना का उपयोग किया जाता है। निराकरणीय परिकल्पना की उपधारणा रहती है कि स्वतंत्र चर के प्रभाव के कारण दो या दो से अधिक समूहों में कोई वास्तविक अन्तर उत्पन्न नहीं हुआ है और जो अन्तर देखने में आया है, उसका संबन्ध प्रतिचयन संबंधी त्रुटियाँ तथा संयोगजन्य त्रुटियां कुछ भी हों सकता है। परन्तु स्वतंत्र चर का प्रभाव वह नहीं है तथा स्वतंत्र चर तब तक अन्तर का कारण नहीं माना जायेगा जब तक कि यह अन्तर सन्देह के परे सिद्ध नहीं किया जाता। परिकल्पना के परीक्षण के लिए विभिन्न प्रकार के परीक्षण हैं प्रत्येक निश्चित परिस्थिति तथा पूर्वधारणा के लिए उपयुक्त होता है।

5.7 बोध प्रश्न

1. परिकल्पना के अर्थ, उद्देश्य तथा निर्माण - चरणों का उपयुक्त उदाहरण की सहायता से विवेचना कीजिए।
2. परिकल्पना परीक्षण के प्रकारों की दृष्टान्त सहित व्याख्या दीजिए।

5.8 संदर्भ पुस्तकें

सामाजिक अनुसंधान शोध - एम. एल. गुप्ता, डी.डी. शर्मा

सांख्यिकीय, डा. के. एल. गुप्ता,

सांख्यिकीय विधियाँ - प्रो. एस. पी. गुप्ता

अनुसंधान परिचय - डा. बी.एल. शर्मा

अनुसंधान परिचय - श्री पारसनाथ राय

Fundamental of Statistics - S.P. Singh

Principles of Statistics.

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त
विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

खण्ड

4

आंकड़ों का विश्लेषण (Data Analysis)

इकाई - 1 5
आंकड़ों के संग्रहण की नीतियाँ

इकाई - 2 24
अवलोकन

इकाई - 3 36
अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार एवं प्रश्नावली की निर्माण

इकाई - 4 54
आंकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 जगदीश प्रकाश	पूर्व कुलपति, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 राजेश कुमार पाण्डेय	एसोसिएट प्रोफेसर, वाणिज्य राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सैदाबाद, इलाहाबाद

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, मार्च 2010
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खण्ड-4 परिचय

खण्ड 4 आंकड़ों का विश्लेषण में कुल चार इकाइयाँ हैं जिनके द्वारा आँकड़ों के विश्लेषण की विधि को समझाया गया है। प्रथम इकाई में आँकड़ों के संग्रहण की नीतियों की चर्चा की गयी है जिसके अन्तर्गत समंकों के प्रकार, प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों के अन्तर एवं इनको एकत्रित करने की रीतियों के साथ साथ बरती जाने वाली सावधानियों की चर्चा की गयी है।

द्वितीय इकाई में अवलोकन (Observation) के अर्थ को समझाते हुए अवलोकन की विशेषताओं एवं प्रकार का वर्णन किया गया है। साथ ही अवलोकन विधि की उपयोगिता एवं इसकी विश्वसनीयता की चर्चा की गयी है।

तृतीय इकाई में अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार एवं प्रश्नावली निर्माण की चर्चा की गयी है जिसके अन्तर्गत साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा, विशेषताएं, उद्देश्य एवं साक्षात्कार के प्रकार का वर्णन किया गया है। साथ ही साक्षात्कार प्रविधि के प्रमुख चरण, गुण एवं दोष का वर्णन किया गया है।

चतुर्थ इकाई में आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीक की चर्चा आँकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्ण दशाएं, विश्लेषण के चरण एवं मापन तकनीकों के द्वारा की गयी है।

इकाई 1 : आंकड़ों के संग्रहण की रीतियाँ (Method of Data Collection)

इकाई रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 समंक

1.3 समंकों के प्रकार

1.4 प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों में अन्तर

1.5 प्राथमिक समंकों को एकत्र करने की रीतियाँ

1.6 द्वितीयक समंकों के संकलन की रीतियां

1.7 द्वितीयक समंकों के प्रयोग में सावधानियाँ

1.8 सारांश

1.9 बोध प्रश्न

1.10 व्यावहारिक प्रश्न

1.11 परीक्षण प्रश्न

1.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप यह जान सकेंगे -

- आँकड़े के अर्थ एवं इनके विभिन्न प्रकार,
- आँकड़ों के एकत्रीकरण की प्रमुख रीतियाँ,
- प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों के मध्य अंतर
- एक अच्छी प्रश्नावली तैयार करने की विधि।

1.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान ज्ञान का आधार है, ज्ञान के उन्नयन एवं संवर्धन हेतु अनुसन्धान की आवश्यकता होती है। किसी भी अनुसन्धान से हम निष्कर्ष तब तक नहीं प्राप्त कर सकते जब तक कि सम्बन्धित तथ्य को हम आँकड़ों के रूप में प्रस्तुत न कर सकें। अतः आँकड़ों का संग्रहण अनुसन्धान का मूलाधार है अर्थात् अनुसन्धान रूपी विशाल भवन का निर्माण संकलित समंकों की नीव पर ही हो सकता है। आँकड़े जितने शुद्ध होंगे, अनुसन्धान के निष्कर्ष उतने ही परिष्कृत होंगे। अतः अनुसन्धानकर्ता को आँकड़े के संग्रहण में विशेष सतर्कता बरतने की आवश्यकता होती है-

1.2 समंक (Data)

समंकों को वर्गीकृत करने के पूर्व हम संक्षेप में 'समंक' से आपको परिचित कराना चाहेंगे। प्रश्न उठता है कि समंक क्या है? क्या समंक कहीं से एकत्रित अवयवस्थित आँकड़े हैं? वस्तुतः समंक (Data) किसी अकेली संख्या या तथ्य को नहीं कहा जा सकता समंक सदैव तथ्य के समूह के रूप में होते हैं। अर्थात् एक विद्यार्थी के अंक, एक परिवार की आय, एक श्रमिक की मजदूरी संख्यात्मक तथ्य होते हुए भी समंक नहीं कहे जा सकते। समंक की सबसे बड़ी विशेषता समान प्रकृति की एक से अधिक संख्याओं का होना है। जैसे पाँच विद्यार्थियों के अंक, तीन परिवारों की आय, पाँच श्रमिकों की मजदूरी इत्यादि। समंकों को हम सदैव संख्याओं के रूप में व्यक्त कर सकते हैं। उदाहरण स्वरूप यदि हम कहें कि अ अमीर है, ब गरीब है तो हम इसे संख्यात्मक तथ्य नहीं कह सकते। यह कथन संख्यात्मक होने, (अर्थात् अ की आय रु0 5000 तथ्य की आय रु0 500) पर ही हम इसे समंक की श्रेणी में रख सकते हैं।

समंकों का संकलन सदैव पूर्व निश्चित उद्देश्य के लिए होता है। उद्देश्य विहीन आँकड़ों से हम कोई निष्कर्ष नहीं प्राप्त कर सकते।

संकलित समंक परस्पर सह-सम्बन्धित होने चाहिए। अतः आँकड़े ऐसे होने चाहिए जिनकी परस्पर तुलना की जा सके अर्थात् यदि हम किसी व्यक्ति की आय व अन्य व्यक्ति की लम्बाई के आँकड़े एकत्र करते हैं तो इन्हें समंक नहीं कहा जा सकता। आँकड़े के सम्बन्ध में एक सामान्य तथ्य यह कि ''सभी सांख्यिकीय समंक संख्यात्मक तथ्य होते हैं। किन्तु सभी संख्यात्मक तथ्य समंक नहीं होते।''

1.3 समंकों के प्रकार (Types of Data)

आँकड़ों के संग्रहण के आधार पर हम इन्हें दो भागों में विभाजित कर सकते हैं।

(अ) प्राथमिक समंक (Primary Data)

(ब) द्वितीयक समंक (Secondary Data)

प्राथमिक समंक :- प्राथमिक समंकों से अभिप्राय उन समंकों से हैं जिन्हें अनुसन्धानकर्ता द्वारा प्रथम बार मौलिक अथवा मूलरूप में एकत्रित किया जाता है। संकलनकर्ता द्वारा इन्हें प्रथम बार एकत्र किये जाने के कारण इन्हें प्राथमिक समंक कहा जाता है। **होरेस सेक्राइस्ट** के शब्दों में ''प्राथमिक समंकों से अभिप्राय यह है कि वे मौलिक हैं अर्थात् उनका समूहीकरण बहुत ही कम या नहीं हुआ है' घटनाओं का अंकन या गणन उसी प्रकार किया गया है जैसा पाया गया है। ये मुख्य रूप से कच्चे पदार्थ होते हैं।

उदाहरण स्वरूप यदि कोई व्यक्ति स्त्री साक्षरता से सम्बन्धित आँकड़े एकत्र करता है तो संकलित सामग्री के लिए प्राथमिक कहलायेगी।

द्वितीयक समंक (Secondary Data) द्वितीयक समंकों से आशय उन समंकों से है जिनका एकत्रीकरण किसी अन्य व्यक्ति, संगठन, अथवा शासन द्वारा पूर्व से किया जा चुका है और अनुसन्धानकर्ता द्वारा उन्हीं आँकड़ों को प्रयोग में लाया जाता है। उदाहरणस्वरूप यदि कोई व्यक्ति सरकार द्वारा प्रकाशित स्त्री साक्षरता सम्बन्धी आँकड़ों का प्रयोग स्वयं के अनुसन्धान हेतु करता है तो वे आँकड़े उसके द्वितीयक आँकड़े होंगे। यहाँ यह स्पष्ट करना आवश्यक होगा कि सभी संकलित आँकड़े कभी न कभी प्राथमिक अवश्य होते हैं, संकलनकर्ता एवं प्रयोगकर्ता के भिन्न-भिन्न होने पर आँकड़े द्वितीयक स्वरूप धारण कर लेते हैं।

ब्लेयर के शब्दों में ''द्वितीयक समंक वे होते हैं जो पहले से अस्तित्व में हैं और जो वर्तमान प्रश्नों के उत्तर में नहीं बल्कि किसी दूसरे उद्देश्य के लिए एकत्र किये जाते हैं।[2]

1.4 प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों में अन्तर

प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों में कोई मूलभूत अन्तर नहीं होते, अनुसन्धानकर्ता एवं संकलनकर्ता अलग-अलग होने की दशा में ये अंतर प्रकट होते हैं। प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़े के मध्य अन्तर हम निम्नवत कर सकते हैं।

अन्तर का आधार	प्राथमिक समंक	द्वितीयक समंक
मौलिकता	प्राथमिक समंक मौलिक होते हैं और अनुसन्धान कार्य में इनका प्रयोग कच्चे माल की भाँति होता है।	द्वितीयक समंक मौलिक नहीं होते अर्थात् वे पहले से ही विद्यमान होते हैं
उद्देश्य	प्राथमिक समंक पूर्णरूप से अनुसन्धान की दृष्टि से एकत्र/किये जाते हैं।	द्वितीयक समंक अनुसन्धानकर्ता की आवश्यकतानुसार नहीं संकलित किये जाते।
संकलन	प्राथमिक समंक अनुसन्धानकर्ता द्वारा स्वयं संकलित किये जाते हैं।	द्वितीयक समंक अन्य व्यक्तियों या संगठनों द्वारा पूर्व में ही एकत्रित किये होते हैं।
प्रयोग	प्राथमिक समंकों के प्रयोग हेतु-अनुसन्धानकर्ता को संकलित आँकड़ों में संशोधन नहीं करना पड़ता	द्वितीयक समंकों के प्रयोग हेतु अनुसन्धानकर्ता को संकलित आँकड़ों में संशोधन करने की आवश्यकता पड़ सकती है।
व्यय	प्राथमिक समंकों के संकलन में, अधिक समय, परीश्रम व धन की आवश्यकता होती है।	द्वितीयक समंक प्रायः पत्र-पत्रिकाओं, सरकारी व गैरसरकारी प्रकाशनों से सरलतापूर्वक उपलब्ध हो जाते हैं। अतः इनके संकलन में किसी भी प्रकार का व्यय, श्रम, व समय नहीं नष्ट करना पड़ता
सर्तकता	प्राथमिक समंकों के प्रयोग में अधिक सर्तकता की आवश्यकता नहीं होती।	द्वितीयक समंकों के प्रयोग में अधिक सर्तकता की आवश्यकता होती है।
विश्वसनीयता	प्राथमिक समंको की विश्वसनीयता अपेक्षाकृत अधिक होती है क्यों ये अनुसन्धानकर्ता द्वारा स्वयं एकत्र किये जाते हैं।	द्वितीयक समंक की विश्वसनीयता अपेक्षाकृत कम होती है क्योंकि ये किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किसी अन्य उद्देश्य से संकलित किये जाते हैं।

वस्तुतः प्राथमिक व द्वितीयक समंकों में अन्तर केवल मात्रा (Degree) का होता है। एक ही समंक कहीं पर प्राथमिक होते हैं और दूसरे स्थान पर द्वितीयक बन जाते हैं।

सेक्राइस्ट के शब्दों में ''व्यापकरूप से प्राथमिक एवं द्वितीयक समंकों के मध्य मात्रा का अन्तर है। समंक जो एक पक्ष के लिए प्राथमिक होते हैं वहीं दूसरे पक्ष के लिए द्वितीयक होते हैं।''

उदाहरण स्वरूप सरकार द्वारा एकत्र किये गये जनगणना सम्बन्धी आँकड़े सरकार के लिए प्राथमिक है किन्तु प्रयोगकर्ताओं के लिए द्वितीयक होते हैं।

1.5 प्राथमिक समंकों को एकत्र करने की रीतियाँ (Methods of Collecting Primary Data)

प्राथमिक समंकों का संकलन चूंकि अनुसन्धान द्वारा स्वयं

2. "Secondary Data and those already in existence and which have been collected for some other purpose than answering the avertion of hand.

अथवा किसी अन्य संकलनकर्ता के माध्यम से स्वयं की देखरेख में कराया जाता है अतः प्राथमिक समंको का संकलन प्रत्यक्ष सम्पर्क पर आधारित होते हैं। सामान्य तौर पर प्राथमिक समंकों के संकलन की निम्नलिखित रीतियाँ हैं-

(i) प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान (Direct Personal Investigation)

(ii) अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसन्धान (Indirect Oral Investigation)

(iii) स्थानीय स्त्रोतों या संवाददाताओं से प्राप्त समंक (Information through local sources or correspondents)

(iv) सूचकों द्वारा प्रश्नावली भरवाना (Questionaries to be filled by Informants)

(v) प्रगणकों द्वारा अनुसूचियाँ भरना (Schedules to be filled by Enumeratous)

(vi) रजिस्ट्रेशन पद्धति (Registration Method)

प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान

प्रत्यक्ष व्यक्तिगत अनुसन्धान विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं अनुसन्धान के क्षेत्र में जाकर सम्बन्धित व्यक्तियों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध स्थापित करके आवश्यक सूचनाओं एवं समंकों का संकलन करता है। उदाहरण स्वरूप यदि अनुसन्धानकर्ता किसी फैक्ट्री में कार्यरत श्रमिकों की आर्थिक स्थिति का अध्ययन करना चाहता है तो वह स्वयं फैक्ट्री में जाकर उनकी आय के सम्बन्ध में आँकड़े एकत्रित करेगा।

लाभ :

(i) इस प्रणाली के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता द्वारा स्वयं क्षेत्र में जाकर आंकड़े एकत्रित करने के कारण **उच्च स्तर की शुद्धता** पाई जाती है।

(ii) इस प्रणाली में **लोचकता** के गुण पाये जाते हैं क्योंकि इसमें अनुसन्धानकर्ता आंकड़े संकलित करते समय प्रश्नों में आवश्यकतानुसार परिवर्तन कर सकता है।

(iii) एक ही व्यक्ति द्वारा आँकड़ों का संकलन किये जाने के कारण इससे **सजातीयता एवं एकरूपता** के गुण पाये जाते हैं।

(iv) व्यक्तिगत सम्पर्क होने के कारण सूचनादाता में **अतिरिक्त उत्साह** पूर्वक प्रश्नावली के उत्तर देने की लालसा होती है।

दोष इस प्रणाली में निम्नलिखित दोष पाये जाते हैं।

(i) इस रीति का प्रयोग **सीमित क्षेत्र** के अनुसन्धान में हो सकता है। क्योंकि एक व्यक्ति द्वारा बड़े अनुसन्धान क्षेत्र में व्यक्तिगत सम्पर्क नहीं स्थापित किया जा सकता है।

(ii) अनुसन्धानकर्ता का अपना दृष्टिकोण, मान्यताएँ एवं पूर्वाग्रह होने के कारण आंकड़े के संकलन या प्रश्नावली के उत्तर में **पक्षपात की सम्भावना** बनी रहती है।

(iii) यह पद्धति **अधिक खर्चीली** है क्योंकि इसमें समय एवं धन दोनों का अधिक व्यय होता है।

(II) अप्रत्यक्ष मौखिक अनुसन्धान -

इस रीति के अन्तर्गत अनुसन्धान से सम्बन्धित व्यक्तियों या पक्षकारों से प्रत्यक्षरूप से सूचनाएँ प्राप्त न करके बल्कि उनकी

जानकारी रखने वाले अन्य पक्षकारों या व्यक्तियों से मौखिक पूछताछ के द्वारा समंक एकत्र किये जाते हैं। उदाहरण स्वरूप यदि किसी उद्योग में श्रमिकों की आर्थिक दशा के बारे में जानकारी उनके नियोक्ताओं (मालिकों) से लिया जाना।

लाभ :

(i) अनुसन्धान का **क्षेत्र विस्तृत** हो जाता है।

(ii) इसके माध्यम से कुछ **विशिष्ट सूचनाओं** या प्रकृत्तियों के बारे में भी जानकारी प्राप्त कर सकते हैं जैसे श्रमिकों का जुआ खेलना, छात्रों की नशे की प्रकृति, इत्यादि।

(iii) अनुसन्धान के विस्तृत क्षेत्र की तुलना में यह विधि कम **खर्चीली** है।

(iv) इस रीति में समंक संकलन में **व्यक्तिगत पक्षपात** की सम्भावना कम रहती है।

दोष :

(i) किसी व्यक्ति के सम्बन्ध में अन्य व्यक्ति द्वारा जानकारी लेने के कारण **सूचनाओं में भ्रम** की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।

(ii) सूचनाएँ संकलित कराने वाले पक्षों की लापरवाही, अज्ञानता एवं उदासीनता का प्रभाव आँकड़ों पर प्रतिकूल पड़ सकता है।

(iii) इसके अन्तर्गत **उच्च किस्म की शुद्धता** का अभाव पाया जाता है।

(III) संवाददाताओं या स्थानीय स्त्रोतों से प्राप्त समंक-

इस रीति में समंकों के एकत्रण के लिए अनुसन्धान के क्षेत्र में स्थानीय स्तर पर सम्वाददाताओं की नियुक्ति कर ली जाती है अथवा

पूर्व से कार्यरत किसी स्थानीय स्त्रोत का प्रयोग किया जाता है। उदाहरण स्वरूप समाचार पत्रों में मूल्य समंकों के प्रकाशन हेतु इस रीति का प्रयोग किया जाता है।

लाभ :

(i) इस रीति का प्रयोग अनुसन्धान के **विस्तृत क्षेत्र** में किया जा सकता है।

(ii) यह पद्धति **मितव्ययी** है।

(iii) शीघ्र एवं नियमित रूप से सूचनाएं प्राप्त करने हेतु यह विधि अत्यन्त उपयोगी है।

दोष :

(i) संवाददाताओं द्वारा नियमित रूप से सूचनाऐं प्रदान करने के कारण उनके द्वारा कभी-कभी **भ्रामक एवं असत्य** सूचनाएँ उपलब्ध कराई जाती है।

(ii) संवाददाताओं द्वारा सूचनाएँ भेजने के कारण उनमें **मौलिकता** की कमी होती है।

(iii) विभिन्न स्थानों एवं विभिन्न विधियों द्वारा सूचना एकत्र किये जाने के कारण आँकड़ों में **एकरूपता** एकरूपता का अभाव पाया जाता है।

(iv) संवाददाताओं द्वारा कभी-कभी सूचना भेजने में विलम्ब कर देने के कारण सूचना का **औचित्य समाप्त** हो जाता है।

(IV) प्रश्नावली भरवाकर सूचना प्राप्त करना -

इस रीति के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता समंक एकत्र करने हेतु एक प्रश्नावली (प्रश्नों की सूची) तैयार करता है तथा उन प्रश्नावलियों को डाक द्वारा अथवा व्यक्तिगत सम्पर्क करके सूचकों (जिनके

सूचना प्राप्त करनी है) को प्रेषित कर देता है। प्रश्नावली के साथ एक अनुरोध पत्र (Covering letter) भी लगाया जाता है तथा सूचकों को समंक एकत्रीकरण का उद्देश्य बताकर उनके द्वारा सही सूचना प्रदान करने का अनुरोध किया जाता है। डाक द्वारा प्रश्नावली वापस मंगाने हेतु पता लिखा एवं डाक टिकट लगा एक लिफाफा संलग्न करने से सूचकों को प्रश्नावली भेजने में धन नही व्यय करना पड़ता है

लाभ :

(i) यह प्रणाली अपेक्षाक्त **मितव्ययी** है इसमें प्रश्नावली छपवाने व डाक टिकट लगाने के अतिरिक्त कोई अन्य व्यय नहीं करना पड़ता।

(ii) यह प्रणाली अनुसंधान क्षेत्र **विस्तृत** होने की स्थिति में अत्यन्त उपयुक्त है।

(iii) इस विधि से प्राप्त सूचनाएँ **मौलिक** एवं शुद्ध होती है।

दोष :

(i) इस रीति का प्रयोग केवल शिक्षित वर्ग तक किये जाने के कारण इसका क्षेत्र अत्यन्त सीमित हो जाता है।

(ii) सूचकों पर कोई अंकुश या पर्यवेक्षण के अभाव के उनके द्वारा **अपूर्ण तथा असत्य** सूचनाऐं प्रदान कर दी जाती है।

(iii) सूचकों द्वारा अरूचि, आलस्य, भय, आशंका, अथवा गोपनीयता भंग होने के कारण अधूरी सूचनाऐं प्रदान की जाती है।

(iv) अपर्याप्त सूचना प्राप्त होने की दशा में पूरक प्रश्न पूँछना सम्भव नहीं हो पाता, जिससे इसमें लोच का अभाव

पाया जाता है।

(V) प्रगणकों द्वारा प्रश्नावलियाँ अथवा अनुसूचियाँ भरकर सूचना प्राप्त करना –

इस रीति से समंकों को संकलित करन हेतु प्रगणकों की नियुक्ति की जाती है। प्रगणकों द्वारा प्रश्नों की एक सूची लेकर सूचकों में सम्पर्क किया जाता है। सूचकों द्वारा प्राप्त सूचनाएँ प्रगणकों द्वारा स्वयं प्रश्नावली में भरी जाती है

गुण :

(i) वृहद क्षेत्र में समग्र अथवा प्रतिदर्श अनुसन्धान (Gensus Study) के लिए यह प्रणाली उपयुक्त है। इसका प्रयोग अशिक्षित सूचकों के मध्य भी किया जा सकता है।

(ii) प्रगणकों द्वारा सूचकों से सही सूचनाएं प्राप्त हो जाने के कारण सूचनाओं में **शुद्धता** होती है।

(iii) सभी प्रगणकों का प्रशिक्षण एक ही प्रकार से दिये जाने के कारण उनके द्वारा संकलित सूचनाओं में एकरूपता पाई जाती है।

दोष :

(i) यह प्रणाली अत्यन्त खर्चीली है क्योंकि इसमें प्रश्नावली छपवाने के साथ साथ प्रगणक भी नियुक्त करने पड़ते हैं।

(ii) प्रगणकों का चयन एवं प्रशिक्षण अत्यन्त दुष्कर कार्य होता है।

(VI) रजिस्ट्रेशन पद्धति :

इस रीति के अन्तर्गत किसी तथ्य से सम्बन्धित सूचनाओं के

पंजीकरण की व्यवस्था कर दी जाती है, तथा उसी आधार पर अनवरत आँकड़े एकत्र होते रहते हैं। उदाहरण भारत में जन्म व मरण का पंजीयन अनिवार्य है तथा इसी आधार पर जन्म तथा मृत्यु के आँकड़े एकत्र होते रहते हैं।

गुण :

यह पद्धति मितव्ययी है और कानूनी व्यवस्था होने के कारण सूचनाओं में शुद्धता बनी रहती है।

दोषः

रजिस्ट्रेशन के लिए एक विभाग की स्थापना करनी पड़ती है। प्रायः अभी भी लोग जन्म एवं मृत्यु का पंजीयन नहीं कराते हैं।

1.6 द्वितीयक समंकों के संकलन की रीतियाँ

द्वितीयक समंक वे समंक होते हैं जिन्हें किन्ही संगठनों या व्यक्तियों द्वारा पूर्व में संग्रहीत किया जाता है। ये समंक अनुसन्धानकर्ता के व्यक्तिगत प्रयास से न संग्रहीत होकर बल्कि प्रकाशित व अप्रकाशित रूप में उपलब्ध होते हैं। प्रायः अनुसन्धानकर्ता द्वारा प्रकाशित आँकड़ों का ही प्रयोग किया जाता है। द्वितीयक समंकों के प्रयोग में समंकों के मौलिक संकलन की समस्या उत्पन्न नहीं होती। अप्रकाशित समंक विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थानों के शोधग्रन्थ हो सकते हैं इनके सम्बन्ध में लोगों को कम जानकारी होने के कारण इनका प्रयोग सीमित होता है।

प्रकाशित समंक प्राप्त करने के निम्नलिखित स्त्रोत हो सकते हैं।

(1) **सरकारी प्रकाशन (Government Publication)**– प्रत्येक देश की सरकारें अपने विभिन्न मन्त्रालयों एवं उनके विभागों द्वारा विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित समंक नियमित रूप

से प्रकाशित किये जाते हैं। इन समंकों में पर्याप्त विश्वसनीयता होती है। भारतवर्ष में प्रकाशित प्रमुख शासकीय प्रकाशन निम्नवत् हैं।

(i)	भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन	(मासिक)
(ii)	आर्थिक सर्वेक्षण	(वार्षिक)
(iii)	पंचवर्षीय योजना प्रारूप	
(iv)	स्टैटिस्टिकल एबस्ट्रैक्ट आफ इंडिया	(वार्षिक)
(v)	इण्डियन ट्रेड जर्नल	(साप्ताहिक)
(vi)	जनगणना रिपोर्ट	
(vii)	मुद्रा एवं वित्त रिपोर्ट	(मासिक)

(2) अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के प्रकाशन– कतिपय अन्तर्राष्ट्रीय संस्थान जैसे संयुक्त राष्ट्रसंघ (U.N.O.), विश्वबैंक, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष (I.M.F.), अन्तर्राष्ट्रीय श्रमसंघ (I.L.O.) द्वारा समय-समय पर आँकड़ों का संकलन एवं प्रकाशन किया जाता है। विदेशों में होने वाले शासकीय प्रकाशन भी इसी श्रेणी में आते हैं जैसे, विश्वबैंक की वार्षिक रिपोर्ट, अन्तर्राष्ट्रीय मुद्राकोष की रिपोर्ट इत्यादि।

(3) आयोग एवं समितियों की रिपोर्ट – प्रायः देश की विभिन्न समस्याओं के अध्ययन के लिए सरकार द्वारा अथवा किसी अन्य संस्था द्वारा आयोग या समितियाँ नियुक्त की जाती रहती हैं। ये आयोग अथवा समितियाँ समस्याओं का अध्ययन करके सम्बन्धित आँकड़े संकलित करके समय-समय पर अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत करती रहती है जैसे वित्त आयोग के प्रतिवेदन, योजना आयोग के प्रतिवेदन इत्यादि।

(4) अर्द्ध सरकारी संगठनों के प्रकाशन – नगर पालिका, नगर महापालिका, नगर निगम, जिला परिषद्, इत्यादि संगठन विभिन्न प्रकार के आंकड़े एकत्रित करके प्रायः प्रकाशित करते रहते हैं जैसे जन्म, मृत्यु, स्वास्थ्य, शिक्षा एवं विवाह से सम्बन्धित आँकड़े।

(5) व्यापारिक एवं गैर सरकारी संगठनों के प्रकाशन – प्रायः अनेक व्यापारिक संगठन अपने क्षेत्र से सम्बन्धित समंकों का प्रकाशन करते रहते हैं जैसे भारतीय कॉटन मिल्स फेडरेशन, भारतीय उद्योग एवं वाणिज्य संघ, जूट मिल्स एसोसियेशन, बिड़ला ग्रुप, टाटाग्रुप, रिलायन्स ग्रुप इत्यादि। इसी प्रकार अनेक गैर सरकारी संगठनों द्वारा भी विगत कुछ वर्षों में समंकों का प्रकाशन किया जा रहा है। इनमें, इकॉनामिक टाइम्स का डेटा बैंक, मनोरमा इयर बुक, इत्यादि प्रमुख है।

(6) विश्वविद्यालय एवं शोध संस्थाओं के प्रकाशन :- देश के प्रमुख विश्वविद्यालय एवं शोध संस्थानों द्वारा भी अपने विशिष्ट शोध-कार्यों का प्रकाशन करते रहते हैं जैसे, भारतीय सांख्यिकीय संस्थान, राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन, विश्वविद्यालय शोध ब्यूरो, केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन इत्यादि।

(7) समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ – देश की प्रमुख समाचार पत्र, पत्रिकाओं द्वारा भी प्रायः विभिन्न प्रकार के सर्वेक्षणों का प्रकाशन किया जाता रहता है। ये आँकड़े अत्यन्त उपयोगी होते हैं। भारत में इकनॉमिक टाइम्स, दी फाइनैन्शियल एक्स्प्रेस, योजना, कुरूक्षेत्र, इत्यादि पत्र पत्रिकाएँ अपने प्रकाशनों में महत्वपूर्ण आँकड़े प्रकाशित करते रहते हैं।

(8) व्यक्तिगत शोधकर्ताओं के प्रकाशन :- अनेक शोधकर्ता व्यक्तिगत रूप से भी अनेक समस्याओं पर शोधकार्य करते

रहते हैं। जिनका प्रकाशन उनके द्वारा प्रायः पत्र-पत्रिगकाओं, या पुस्तकों के रूप में होता है।

(ब) अप्रकाशित स्त्रोत –

अनेक शोध संस्थाओं, संगठनों, व्यक्तियों, विश्वविद्यालयों इत्यादि में योग्य एवं अनुभवी व्यक्तियों द्वारा एकत्रित बहुत से आँकड़े अप्रकाशित रह जाते हैं। इन आंकड़ों की उपलब्धता होने पर इनका प्रयोग द्वितीयक आंकड़ों के रूप में किया जा सकता है।

1.7 द्वितीयक समंकों के प्रयोग में सावधानियाँ

द्वितीयक समंकों का संकलन चूँकि अन्य व्यक्तियों अथवा संगठनों द्वारा किया जाता है तथा इनके प्रयोग हेतु उद्देश्य प्रायः पूर्व में निर्धारित नहीं। होते अनुसन्धानकर्ता के लिए इन आंकड़ों के संग्रहण, स्त्रोत, एवं विश्वसनीयता की कोई गारण्टी नहीं होती। अतः इनके प्रयोग करने में निम्न सावधानियाँ ध्यान पर रखनी चाहिए।

(1) संकलन का उद्योग – सर्व प्रथम अनुसन्धान कर्ता को इस तथ्य का पता लगाना चाहिए कि समंकों को मूल रूप से संकलित करने का क्या उद्देश्य था ? यदि पूर्व निर्धारित उद्देश्य एवं अनुसन्धानकर्ता के वर्तमान उद्देश्य में समानता हो तो द्वितीयक समंकों का प्रयोग निःसंकोच किया जा सकता है।

(2) संकलनकर्ता की योग्यता – जिस संकलनकर्ता द्वारा आँकड़े एकत्र किये गये थे, उसकी योग्यता, कुशलता, उसकी ईमानदारी तथा राष्ट्रीयता एवं उपलब्ध संसाधनों के संदर्भ में जानकारी होना आवश्यक होता है।

(3) समंक संकलन का समय – द्वितीयक समंकों का प्रयोग करते समय समंक संकलन की अवधि को भी ध्यान में

रखना होता है। यदि समंकों का संकलन वर्षों पूर्व किया गया है और अब तक सम्बन्धित क्षेत्र में नवीनता आ चुकी है तो पूर्व संकलित समंक अनुसन्धान के लिए अनुपयुक्त हो जाते हैं जैसे जनसंख्या सम्बन्धी 1991 में संकलित आँकड़े वर्तमान में अनुसन्धान के सही निष्कर्ष नहीं प्रदान कर सकते।

(4) शुद्धता का स्तर – पूर्व में संकलित आँकड़ों की शुद्धता सम्बन्धी स्तर के संदर्भ में जानकारी प्राप्त कर लेना आवश्यक होता है। यदि शुद्धता का स्तर वर्तमान समस्या से मेल खाता है तो हम उन आंकड़ों का प्रयोग कर सकते हैं।

(5) समंक संकलन की रीति – अनुसन्धानकर्ता द्वारा द्वितीयक समंकों का प्रयोग करने से पूर्व यह जानना आवश्यक होता है कि समंकों का संकलन संगणना रीति से किया गया है अथवा निदर्शन रीति से।

(6) सन्निकटीकरण की सीमा – यह जान लेना भी आवश्यक होगा कि समंकों के सन्निकटीकरण की सीमा क्या है। यह सीमा जितनी कम होगी समंक उतने ही विश्वसनीय होंगे।

(7) परीक्षणात्मक जाँच – अनुसन्धानकर्ता द्वारा द्वितीयक समंकों के प्रयोग से पूर्व उनकी परीक्षणात्मक जाँच कर लेना भी आवश्यक होता है। इसके लिये समंकों के योग, दर, प्रतिशत, इत्यादि की गणना करके उनकी विश्वसनीयता को परखा जा सकता है।

(8) इकाई का परिभाषा – अनुसन्धान कर्ता द्वारा द्वितीयक समंकों को प्रयोग करने से पूर्व संग्रहीत आँकड़ों सम्बन्धी इकाई की परिमापन को भी ध्यान में रखना पड़ता है। उदाहरण स्वरूप यदि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का अध्ययन करना है तो पूर्व संकलित आँकड़े गरीबी रेखा की सीमा बदल जाने

के कारण निष्प्रयोज्य हो जायेंगे।

1.8 सारांश

किसी भी प्रकार की समस्या के सम्बन्ध में अनुसन्धान करने हेतु आँकड़े की आवश्यकता होती है। आँकड़े हम दो प्रकार से प्राप्त कर सकते हैं, एक वे आँकड़े जिन्हें हम स्वयं क्षेत्र में जाकर एकत्र करते हैं, उन्हें हम प्राथमिक समंक कहते हैं, वे आँकड़े जो किसी अन्य अनुसन्धानकर्ता अथवा सरकार द्वारा एकत्र किये जाते हैं तथा हमें विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं से प्रकाशित रूप से प्राप्त होते हैं उन्हें हम द्वितीयक समंक कहते हैं। अनुसन्धान के परिणामों की शुद्धता आँकड़ों पर निर्भर करती हैं। आंकड़े जितने शुद्ध होंगे अनुसन्धान के परीणाम भी उतने ही शुद्ध होंगे आंकड़ों की शुद्धता जितना कम होगी अनुसन्धान के परिणाम भी भ्रामक होंगे। अतः समंक संकलन में इस तथ्य को ध्यान में रखना आवश्यक होता है कि उन्हें सही स्रोतों से संकलित किया जाय। प्रकाशित आंकड़ों को सतही तौर पर देखकर ही स्वीकार कर लेना अनुसन्धानकर्ता के लिए घातक हो सकता है। अतः द्वितीयक समंकों का प्रयोग करते से पूर्व इनका भली भाँति परीक्षण कर लेना आवश्यक होता है। प्राथमिक समंकों से प्राप्त निष्कर्ष अपेक्षाकृत अधिक विश्वसनीय होते हैं। द्वितीयक समंकों का एकत्रीकरण किसी अन्य व्यक्ति द्वारा किये जाने के कारण अनुसन्धानकर्ता द्वारा प्राप्त निष्कर्षों की विश्वसनीयता अपेक्षाकृत कम होती है। वस्तुतः सांख्यिकीय अनुसन्धान में आंकड़े की शुद्धता पर ही निष्कर्षों की शुद्धता निर्भर करती है।

1.9 बोध प्रश्न

(i) प्राथमिक समंक क्या होते हैं। उन्हें हम कैसे प्राप्त करते हैं।

(ii) द्वितीयक समंकों के बारे में आप क्या जानते हैं?

(iii) क्या प्राथमिक एवं द्वितीयक आँकड़ों के मध्य कोई अंतर है?

(iv) द्वितीयक समंकों के प्रयोग में आप क्या सावधानी बरतेंगे?

(v) प्रश्नावली के बारे में सक्षिप्त टिप्पणी लिखो।

1.10 व्यावहारिक कार्य

(1) आप अपने गाँव का सर्वेक्षण करके कुल जनसंख्या, स्त्री, पुरुष संख्या, उनकी साक्षरता, स्कूल जाने वाले बच्चों की संख्या, संकलित करके निष्कर्ष निकालिए।

(2) द्वितीयक समंक प्राप्त करने के किन्ही तीन माध्यमों का उल्लेख कीजिए।

1.11 परीक्षण प्रश्न

(i) प्राथमिक समंकों का संकलन अनुसन्धानकर्ता द्वारा .....किया जाता है।

(ii) द्वितीयक समंकों .....होते हैं।

(iii) किसी अकेली संख्या को हम आँकड़ा कह सकते हैं अथवा नहीं।

(vi) प्राथमिक समंक.....होते हैं।

उत्तर :- (i) स्वयं (ii) प्रकाशित अथवा अप्रकाशित (iii) नहीं
(v) मौलिक

संदर्भ ग्रन्थ

1. Elements of Statistics - Dr. D.N. Ethance
2. Stastical methods, Edward A.L.
3. व्यावसायिक सांख्यिकीय - डा0 एस0 एम0 शुक्ल
4. अनुसन्धान परिचय - श्री पारसनाथ राय

5. सांख्यकीय विधियाँ - प्रो0 एस0 पी0 गुप्ता, डा0 अलका गुप्ता
6. सामाजिक अनुसन्धान (शोध) एम0 एल0 गुप्ता
7. Principles of Statistics - Prof. Ramendu Roy.

इकाई 2 : अवलोकन (Observation Design)

इकाई रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 अवलोकन/निरीक्षण का अर्थ एवं परिभाषा

2.3 अवलोकन की विशेषताएँ

2.4 अवलोकन के प्रकार

2.5 अवलोकन विधि की उपयोगिता या महत्व

2.6 अवलोकन विधि की विश्वसनीयता एवं प्रमाणिकता

2.7 अवलोकन की विश्वसनीयता के उपाय

2.8 सारांश

2.9 बोध प्रश्न

2.10 परीक्षण प्रश्न

2.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन का उद्देश्य है कि

- हम अवलोकन का अभिप्राय भली भाँति समझ लें।
- अवलोकन के प्रकार /वर्गीकरण कर सकें।
- अनुसन्धान के उपकरण के रूप में अवलोकन की विश्वसनीयता के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकें।
- अनुसन्धान में अवलोकन की उपयोगिता के बारे में जान सकें।

2.1 प्रस्तावना

हम सदैव अपने चारों ओर होने वाली घटनाओं का अवलोकन करते रहते हैं। प्रातः उठकर खिड़की दरवाजे खोलकर या छत पर खड़े होकर प्रकृति की मनोरम छटा एवं मौसम की दशा का अवलोकन करते हैं। वस्तुतः अवलोकन हमारे दैनिक जीवन की एक अत्यन्त महत्वपूर्ण क्रिया है। अनुसन्धान कार्य की पूर्णता एवं सफलता अवलोकन पद्धति का प्रयोग किये बिना प्राप्त नहीं की जा सकती। वस्तुतः अवलोकन विधि अनुसन्धान की अत्यधिक प्राचीन एवं प्रचलित विधि है। मानव द्वारा अपने चारों ओर फैले प्रारम्भिक ज्ञान को अवलोकन द्वारा ही प्राप्त हुआ। सर्दी, गर्मी, बरसात, धूप, छाँव इत्यादि पर्यावरणीय घटनायें अवलोकन के द्वारा ही मानव मष्तिष्क के समाहित हुई।

2.2 अवलोकन का अर्थ एवं परिभाषा

अवलोकन शब्द अंग्रजी भाषा के "Observation" शब्द का हिन्दी रूपान्तर है। जिसका अर्थ में देखना, अवलोकन करना, या निरीक्षण करना। अवलोकन के माध्यम से विश्व में अनेक महानतम् आविष्कार हुए हैं। उदाहरणस्वरूप मैडम मेरी क्यूरी ने रेडियोधर्मिता, न्यूटन के गुरूत्वाकर्षण एवं एलेक्जेन्जर फ्लेमिंग ने पेंनिसिलीन की खोज अवलोकन विधि के द्वारा ही की थी।

ज्ञान की खोज में अवलोकन विधि का प्रयोग प्राचीन काल में होने के कारण **सोजर** महोदय इसे वैज्ञानिक अनुसन्धान की शास्त्रीय पद्धति कहते हैं। वस्तुतः यह यथार्थ है कि हमने अवलोकन द्वारा ही अतीत में बहुत सारा ज्ञान प्राप्त किया है किन्तु अनुसन्धान की वैज्ञानिक विधि के रूप में अवलोकन का व्यवस्थित होना परमावश्यक होता है। इसके अन्तर्गत घटनाओं को देखना, सुनना, समझना एवं उन्हें लिखना भी सम्मिलित किया जाता है।

जहोदा एवं कुक के शब्दों में ''अवलोकन केवल दैनिक जीवन की ही अत्यधिक व्यापकता क्रिया मात्र नहीं है, यह वैज्ञानिक जाँच का भी एक प्राथमिक यंत्र है।''

गुडे तथा हाट के शब्दों में ''विज्ञान अवलोकन से प्रारम्भ होता है तथा उसे सत्यापन के लिए अन्ततः अवलोकन कर ही पुनः लौट आना पड़ता है।''

जॉन डार्लड के अनुसार ''अनुसन्धान का प्राथमिक यन्त्र मानव बुद्धि का अवलोकन तथा वस्तुओं के आधार पर ज्ञान प्राप्त करना होता है।''

प्रो० सी० ए० मेजर के अनुसार - ''ठोस अर्थ में अवलोकन को कानों तथा वाणी की अपेक्षा नेत्रों के प्रयोग की आजादी होती है।

आक्सफोर्ड शब्द कोश को अनुसार ''घटनाएँ, कार्य कारण, अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के सम्बन्ध में, जिस रूप में वे उपस्थित होती है, का यर्थाथ निरीक्षण एवं वर्णन है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आलोक में हम कह सकते हैं कि कार्य-करण अथवा पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में ज्ञान प्राप्त करने हेतु स्वाभाविक रूप से घटित होने वाली घटनाओं को सूक्ष्म रूप में देखना ही अवलोकन है। वस्तुतःअवलोकन के माध्यम से ही हम प्राथमिक सामग्री का संकलन प्रत्यक्ष रूप में कर सकते हैं।

इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता द्वारा घटनाओं को देखा, सुना, समझा एवं सामग्री को संकलित किया जाता है।

2.3 अवलोकन की विशेषताएँ

वस्तुतः अवलोकन अनुसंधान की प्राचीनतम पद्धति है, प्रत्यक्ष अध्ययन मानवीय इन्द्रियों के प्रयोग इत्यादि के माध्यम से हम

अवलोकन की प्रक्रिया को समझ सकते हैं।

(i) प्रत्यक्ष अध्ययन :- अवलोकन विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता घटनाओं को प्रत्यक्ष रूप में अपने नेत्रों से देखता है। उनसे सम्बन्धित व्यक्तियों से सम्पर्क कर तथ्यों को एकत्रित करता है।

(ii) मानव इन्द्रियों का प्रयोग :- अवलोकन विधि के अन्तर्गत मानवीय इन्द्रियों का प्रयोग किया जाता है। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता- द्वारा मुख्य मुख्य रूप से अपने कान, आँख, एवं वाणी का प्रयोग किया जाता है।

(iii) सूक्ष्म एवं उद्देश्यपूर्ण अध्ययन :- अवलोकन विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित होकर घटनाओं का गहन एवं सूक्ष्म अध्ययन करता है।

(iv) प्राथमिक सामग्री का संकलन :- चूँकि अनुसन्धानकर्ता स्वयं घटनास्थल पर उपस्थित रहकर घटनाओं के बारे में प्राथमिक जानकारी एकत्र करता है। अतः घटनाओं के प्रत्यक्षदर्शी होने के कारण वे घटनाएँ अति विश्वसनीय होती है।

(v) कार्य-कारण सम्बन्ध ज्ञात करना :- सामान्य अवलोकन में हम प्रायः घटनाओं के देखते हैं। जबकि वैज्ञानिक अवलोकन के अन्तर्गत हम घटनाओं को देखकर उनके कारणों तथा परिणामों की भी खोज करते हैं।

(vi) निष्पक्षता :- अवलोकन के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता, चूँकि स्वयं घटनाओं को अपने नेत्रों से देखता है और उन्हें विज्ञान की कसौटी पर कसकर, भली-भाँति जाँच परख करता है इसलिए उसका निष्कर्ष वैज्ञानिक एवं निष्पक्ष होता है।

(vii) सामूहिक व्यवहार का अध्ययन :- अवलोकन विधि सामूहिक व्यवहार का अध्ययन करने हेतु सर्वोत्तम विधि है।

अवलोकन की उपरोक्त विशेषताओं के आलोक में हम कह सकते हैं कि यह अनुसन्धान की एक विश्वसनीय, वैज्ञानिक एवं महत्वपूर्ण प्रविधि है।

2.4 अवलोकन के प्रकार (Kinds of Observation)

घटनाओं की विविधता एवं जटिलता के आधार पर समस्त घटनाओं का अध्ययन एक ही प्रकार के अवलोकन से नहीं किया जा सकता। अनुसंधानकर्ता कभी स्वयं, व कभी समूह में विविध प्रकार की घटनाओं का अध्ययन करता है। सामान्य तौर पर अध्ययन की सुविधा के लिए अवलोकन को निम्नवत् वर्गीकृत किया जा सकता है,

(1) अनियन्त्रित अवलोकन

(2) नियन्त्रित अवलोकन

(3) सहभागी अवलोकन

(4) असहगामी अवलोकन

(5) अर्द्ध सहगामी अवलोकन

(6) सामूहिक अवलोकन

1. अनियन्त्रित अवलोकन – अनुसन्धान के क्षेत्र में अनियन्त्रित अवलोकन प्राचीन विधि है। अनियन्त्रित अवलोकन से आशय ऐसे अवलोकन से हैं जिनमें उन लोगों या घटनाओं जिनका हम अवलोकन कर रहे हैं, उन पर अवलोकन के समय किसी प्रकार का नियन्त्रण न रहे। दूसरे शब्दों में अनियन्त्रित अवलोकन के अन्तर्गत अवलोकनकर्ता एवं अवलोकित, घटना, व्यक्ति अथवा समूह पर किसी भी प्रकार का कोई नियंत्रण नहीं रखा जाता अर्थात अवलोकनकर्ता द्वारा उन घटनाओं का उनके वास्तविक एवं स्वाभाविक

रूप में ही अध्ययन किया जाता है।

2. नियंत्रित अवलोकन – नियंत्रित अवलोकन से आशय अवलोकन की ऐसी प्रविधि से है जिसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं घटना पर योजनाबद्ध रूप से नियंत्रण रखता है। उसकी भूमिका वास्तविक स्थिति एवं प्राप्त सामग्री के मध्य एक मध्यस्थ की होती है। उसके द्वारा संकलन के विभिन्न साधनों का प्रयोग करके सामग्री का संग्रहण कराया जाता है। नियंत्रित अवलोकन के अन्तर्गत तथ्यों का संकलन निश्चित एवं पूर्व नियोजित रूप से किया जाता है। प्रायः इस विधि का प्रयोग आक्रमण, नेतृत्व, उद्यमों में कार्यरत श्रमिकों आदि के लिए किया जाता है।

3. सहभागी अवलोकन – सहभागी अवलोकन के आशय ऐसे अवलोकन से है, जिसके अन्तर्गत अवलोकन कर्ता एवं अध्ययन किये जाने वाले में सम्मिलित होकर अवलोकन कार्य करता है। समूह या घटना की सभी क्रियाओं में उसकी सहभागिता होती है। वस्तुतः सहभागी अवलोकन में अनुसन्धानकर्ता उस घटना या समूह से इस प्रकार घुल मिल जाता है कि कभी कभी उसे अपने अस्तित्व का ध्यान भी नहीं रहता।

4. असहभागी अवलोकन – असहगामी अवलोकन के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता अध्ययन की विषय वस्तु, घटना, या समूह के साथ अपने को सम्मिलित नहीं करता, एवं तटस्थ दृष्टा की भाँति वैज्ञानिक रूप में घटना का अवलोकन करता है। इस विधि के अन्तर्गत अध्ययनकर्ता सम्बन्धित विषय वस्तु घटना, अथवा समूह के मध्य निवास नहीं करता, और न ही उनकी किसी गतिविधि में भाग लेता है। उसकी भूमिका एक अपरिचित और मौन दर्शक भी होती है।

5. अर्द्धसहभागी अवलोकन – अर्द्धसहभागी अवलोकन

से आशय अवलोकन की उक्त तकनीक से है जिसके अन्तर्गत अवलोकनकर्ता अध्ययन की जाने वाली घटना, विषय वस्तु या समुदाय के सामान्य कामकाज में भाग लेता है किन्तु अधिकांशतया वह तटस्थ भाव से अवलोकन करता है। इस विधि के अन्तर्गत सहभागी व असहभागी दोनों विधियों के लाभ प्राप्त होते हैं।

6. सामूहिक अवलोकन – अवलोकन की इस विधि के अन्तर्गत अवलोकन कार्य किसी एक व्यक्ति द्वारा न किया जाकर बल्कि अनुसन्धानकर्ताओं के समूह द्वारा किया जाता है। वस्तुतः सामूहिक अवलोकन नियंत्रित व अनियन्त्रित अवलोकन का मिश्रण है। इस विधि के अन्तर्गत एक ही विषय वस्तु का अध्ययन कई अनुसन्धानकर्ताओं द्वारा किया जाता है।

2.5 अवलोकन विधि की उपयोगिता या महत्व

अनुसन्धान के क्षेत्र में अवलोकन विधि की उपयोगिता सर्वविदित है, प्राचीन काल से ही अवलोकन द्वारा अनेक अनुसन्धान किये गये हैं, जैसे जेम्सवाट द्वारा उबलते पानी से भाप की शक्ति का अवलोकन करके भाप के इंजन का निर्माण किया गया। सामान्यतया अवलोकन विधि निम्नलिखित कारणों से अत्यन्त उपयोगी है।

(i) प्राथमिक एवं सरल पद्धति – मानव द्वारा प्राचीन काल से ही अवलोकन का प्रयोग किया जाता रहा है अतः यह अनुसन्धान की प्राथमिक विधि है। इसके अतिरिक्त अनुसन्धान की विभिन्न प्रचलित विधियों में यह विधि सबसे सरल है।

(ii) यथार्थ एवं विश्वसनीय – चूँकि अवलोकन विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं अपने नेत्रों से घटनाओं एवं तथ्यों का अवलोकन करता है अतः यह प्रविधि अन्य प्रविधियों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक यर्थाथ एवं विश्वसनीय है।

(iii) प्राक्कल्पना के निर्माण – अवलोकन के माध्यम से अनुसन्धानकर्ता को अनेक घटनाओं को देखने, सुनने व समझने का अवसर मिलता है जिसके कारण उसके अनुभवों में अभिवृद्धि होती है। परिणामस्वरूप अवलोकनकर्ता ने विभिन्न प्राक्कल्पनाओं के निर्माण की क्षमता प्राप्त हो जाती है।

(iv) सत्यापन की सुविधा – मानव द्वारा अवलोकन विधि से संकलित किये गये तथ्यों की सत्यता को आसानी से सत्यापित किया जा सकता है। वस्तुतः अनुसन्धान की शुद्धता हेतु सत्यापन एक अनिवार्य आवश्यकता होती है।

(v) सर्वाधिक प्रचलित विधि – अनुसन्धान के लिए प्रचलित विभिन्न विधियों में अवलोकन विधि सर्वाधिक प्रचलित एवं लोकप्रिय पद्धति है- प्रायः प्रत्येक प्रकार के अनुसन्धान नें इसका प्रयोग सदियों से होता आता है अतः यह एक परिष्कृत एवं परिमार्जित विधि है।

2.6 अवलोकन विधि की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता

अनुसन्धान की समस्त प्रविधियों में अवलोकन विधि की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता सर्वाधिक है। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता स्वयं अपने नेत्रों से घटनाओं को देखता एवं कानों से सुनता है। किन्तु फिर भी अवलोकन को सत्यता का अचूक प्रमाण नहीं माना जा सकता है। अवलोकन की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता में संदेह के कतिपय प्रमुख कारण निम्न है।

(i) ज्ञानेन्द्रियों की सीमाएँ – अवलोकन में हम अपने नेत्रों का ही प्रयोग करते हैं। कई बार हम जो कुछ देखते हैं और जो यर्थाथ है उसमें भिन्नता आ जाती है। प्रायः हम विचित्र

आवाजों, एवं चटकीले रंगों की ओर शीघ्र आकर्षित होते हैं।

(ii) अवलोकन एवं निर्वचन – कई बार हम जो कुछ देखते हैं, उसका निर्वचन हम अपने पूर्व ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर किसी और रूप में कर देते हैं। इससे अवलोकन की विश्वसनीयता कम हो जाती है। उदाहरण स्वरूप यदि किसी फैक्ट्री के दरवाजे पर कुछ धुंधला सा लिखा हो तो पढ़ने वाले लोग उसे ''अन्दर आना मना है'' ही पढ़ेंगे।

(iii) व्यवहार की कृत्रिमता – अनुसन्धानकर्ता जब किसी घटना, या विषय का अध्ययन करता है तो वास्तविकता का अध्ययन नहीं कर पाता क्योंकि अनुसन्धान सामग्री या सम्बन्धित लोगों को यह पता चल जाता है कि उनके व्यवहार का अवलोकन किया जा रहा है। जिससे उनमें कृत्रिमता आ जाती है।

(iv) घटना की अपर्याप्तता – कई बार अनुसन्धानकर्ता द्वारा अपूर्ण घटनाओं का अवलोकन किया जाता है। अपूर्ण घटनाओं के अवलोकन से अनुसन्धान की प्रमाणिकता एवं विश्वसनीयता समाप्त हो जाती है।

(v) अनुसंधानकर्ता का पक्षपात – यदि अनुसन्धानकर्ता किसी विशेष मत अथवा विचारधारा का पक्षधर है तो उसके द्वारा किया गया अवलोकन दोषपूर्ण हो सकता है। यही कारण है कि किसी एक घटना का निर्वचन कई लोगों द्वारा किये जाने पर उनके परिणामों में भिन्नता आ जाती है।

2.7 अवलोकन की विश्वसनीयता के उपाय

अनुसन्धान हेतु अवलोकन की प्रक्रिया अत्यन्त विश्वसनीयता बनाने हेतु हमें निम्न प्रयास करने चाहिए।

(i) अवलोकन में विश्वसनीयता लाने हेतु अवलोकनकर्ता को अवलोकन की एक **विस्तृत कार्य योजना** तैयार कर लेनी चाहिए।

(ii) अनुसन्धानकर्ता द्वारा अवलोकन की विश्वसनीयता बनाये रखने हेतु **अनुसूची का प्रयोग** करना चाहिए, उसके द्वारा घटनाओं को देखकर तत्काल अनुसूची में लिखे प्रश्नों का उत्तर भरते जाना चाहिए।

(iii) अवलोकन कर्ता को परिकल्पना (Hypothesis) का निर्माण अवश्य कर लेना चाहिए। क्यों कि **परिकल्पना निर्माण** के उपरान्त अध्ययनकर्ता अध्ययन से सम्बन्धित तथ्यों का ही संकलन करेगा।

(iv) अवलोकनकर्ता को सदैव अवलोकन की प्रमाणिकता हेतु टेप रिकार्डर, वीडियो, फोटो, इत्यादि वैज्ञानिक यन्त्रों का प्रयोग करना चाहिए।

2.8 अवलोकन पद्धति के दोष या सीमाएं

अवलोकन पद्धति चूँकि किसी वैज्ञानिक कसौटी पर आधारित होती है। अतः इस विधि में निम्नलिखित दोष हो सकते हैं।

(i) अवलोकन कार्य चूँकि नेत्रों द्वारा देखकर एवं कान द्वारा सुन कर किया जाता है अतः इन ज्ञानेन्द्रियों की भी सीमायें होती हैं। कभी-कभी हम कतिपय विशेष घटनाओं की ओर अधिक आकर्षित होते हैं।

(ii) जब अवलोकित सामग्री, या विषयवस्तु को यह पता चल जाता है कि उसके व्यवहारों का अवलोकन किया जाता है तो उनके **व्यहारों** में **कृतिमता** आ जाती है।

(iii) अवलोकनकर्ता चूँकि मानव होता है वह मानवीय दुर्बलताओं,

क्रोध, द्वेष, घृणा, पक्षपात इत्यादि से ग्रसित हो सकता है, जिससे अध्ययन दोषपूर्ण दो जाते हैं।

(iv) ऐसी अनेक घटनायें होती हैं जिनका अवलोकन नहीं हो पाता, जैसे अपराध व्यक्तिगत जीवन, प्रेमी प्रेमिका सम्बन्ध इत्यादि।

2.9 सारांश

वस्तुतः मानव अपने आरम्भिक जीवन में ही वस्तुओं या घटनाओं को देखकर उन्हें पहचानने, उपयोगिता का मापन करने इत्यादि कार्यों में लगा हुआ है। वस्तुतः हम बिना किसी वस्तु का अवलोकन किये उसके बारे में कोई निष्कर्ष नही निकाल सकते, अतः अवलोकन अनुसन्धान का मूलाधार है। विश्व में अनेक बड़े आविष्कार अवलोकन से ही सम्भव हो सके, जेम्सवाट ने बटलोई में उबलते पानी के ढक्कन को बार-बार उठता गिरता देखकर ही भाप की शक्ति का पता लगाया, और भाप के इंजन का निर्माण किया। अवलोकन विधि का प्रयोग करके हम आज भी अनेक वैज्ञानिक, एवं सामाजिक शोध पूर्ण करते हैं। यह विधि अत्यन्त सरल, उपगोयी एवं विश्वसनीय है। इसमें सत्यापन करने की सुविधा भी है। समय के साथ-साथ इसके अर्न्तगत अनेक प्रामाणिक उपकरणों मय कैमरा, रिकार्डर, इत्यादि उपकरणों का प्रयोग होने लगा है। आज भी यह विधि अत्यन्त प्रामाणिक एवं विश्वसनीय मानी जाती है।

2.10 बोध प्रश्न

(i) अवलोकन से आप क्या समझते हैं ?

(ii) अवलोकन को वर्गीकृत कीजिए।

(iii) सामूहिक अवलोकन से आप क्या समझते हैं?

(iv) अवलोकन की विश्वसनीयता के विभिन्न उपाय बताइये।

(v) अवलोकन की विश्वसनीयता के विभिन्न उपाय बताइए।

(vi) अवलोकन विधि के दोष व सीमाओं का उल्लेख कीजिए।

2.11 परीक्षण प्रश्न

(i) अवलोकन विधि को वैज्ञानिक अनुसन्धान की शास्त्रीय पद्धति किसने कहा?

(ii) अवलोकन हेतु हम किन इंद्रियों का प्रयोग करते हैं?

(iii) अवलोकन के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता किस प्रकार के आकड़े एकत्र करता है।

(iv) अवलोकन की वह विद्या जिसमें अवलोकनकर्ता उस घटना या समूह से मिल जाता है।

उत्तर (i) गोजर (ii) आँख, कान, (iii) प्राथमिक (iv) सहगामी अवलोकन

संदर्भ सूची

(1) सांख्यिकीय - डा0 के0 एल0 गुप्ता

(2) अनुसन्धान परिचय - डा0 वी एल0 शर्मा

(3) Elements of Statistical - Mr. Mohan Singhal

(4) अनुसन्धान परिचय - जी0पी0 एन0 राय

(5) सांखियकीय विधियाँ - प्रो0 एस0 पी0 गुप्ता

(6) Statistics - Prof. B.N. Asthana

इकाई 3 : अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार एवं प्रश्नावली का निर्माण

इकाई रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा

3.3 साक्षात्कार प्रविधि की विशेषताएँ

3.4 साक्षात्कार के उद्देश्य

3.5 साक्षात्कार के प्रकार

3.6 साक्षात्कार प्रविधि के प्रमुख चरण

3.7 साक्षात्कार प्रविधि के गुण अथवा महत्ता

3.8 साक्षात्कार प्रविधि के दोष अथवा सीमाएं

3.9 प्रश्नावली

3.10 प्रश्नावली का निर्माण

3.11 प्रश्नावली का बाह्य अथवा भौतिक पक्ष

3.12 प्रश्नावली का नमूना

3.13 सारांश

3.14 बोध प्रश्न

3.15 परीक्षण प्रश्न

3.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप इस योग्य हो सकेंगे कि-

- साक्षात्कार का अर्थ समझ सकें, एवं परिभाषित कर सकें,
- साक्षात्कार के उद्देश्य से भली-भाँति अवगत हो सकें,
- साक्षात्कार का वर्गीकरण कर सकें,
- आप साक्षात्कार आयोजित कर सकें,
- अनुसन्धान हेतु साक्षात्कार की उपयोगिता को समझ सकें।

3.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान की तकनीक के रूप में अवलोकन अत्यन्त प्राचीन पद्धति है। अवलोकन विधि की कतिपय सीमाओं के कारण हम अनुसन्धान के एक औजार के रूप में साक्षात्कार विधि का प्रयोग करते हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि साक्षात्कार आमने -सामने बैठकर बातचीत करने जैसा ही होता है इस पद्धति के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता अपनी अध्ययन वस्तु से आमने - सामने के सम्बन्ध (Face to Face Relationship) स्थापित कर वार्तालाप कर सकता है। हममें से सभी प्रायः कभी न कभी साक्षात्कार देते व लेते हैं। इसके माध्यम से हम अनुसन्धान हेतु आवश्यक विषय सामग्री सहजतापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं। वस्तुतः साक्षात्कार एक प्रकार की मौखिक प्रश्नावली है जो साक्षात्कारकर्ता के मस्तिष्क में साक्षात्कार के समय बनती जाती है एवं साक्षात्कार देने वाला व्यक्ति उस प्रश्नावली के उत्तर तत्काल मौखिक रूप में देता चलता है।

3.2 साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा

साक्षात्कार को अंग्रेजी में इन्टरव्यू (Interview) कहा जाता है, यह शब्द दो शब्दों के मेल से बना है Inter का अर्थ है भीतर तथा View का अर्थ है देखना। दोनों शब्दों को सम्मिलित रूप से हम अन्तरदृष्टि, अथवा अन्तरदर्शन कह सकते हैं। अर्थात हम जिन अप्रकट अथवा अदृश्य तथ्यों का वाह्य रूप से निरीक्षण नहीं कर

सकते, उन तथ्यों की जानकारी प्राप्त करना ही साक्षात्कार कहलाता है।

वस्तुतः साक्षात्कार शैक्षणिक अथवा वैज्ञानिक स्तर पर सम्पन्न की गयी वह प्रक्रिया है जिसमें अपरिचित एक दूसरे के आमने सामने होते हैं।

सी0ए0 मोजर के शब्दों में – ''एक सर्वेक्षण साक्षात्कार, साक्षात्कारकर्ता तथा उत्तरदाता के मध्य एक वार्तालाप है जिसका उद्देश्य उत्तरदाता से निश्चित सूचना प्राप्त करना होता है।

हैंडर तथा लिंडमेन के शब्दों मे – ''साक्षत्कार दो या अधिक व्यक्तियों के मध्य एक संवाद है जिसमें मौखिक उत्तर प्रत्युत्तर होते हैं।

फायर के शब्दों में – ''साक्षात्कार एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसमे दो व्यक्तियों के मध्य उत्तर प्रत्युत्तर होते हैं।

उपर्युक्त परिभाषाओं में यह स्पष्ट है कि साक्षात्कार अनुसन्धान की एक ऐसी व्यवस्थित एवं पूर्व नियोजित पद्धति है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति उद्देश्य विशेष को सम्मुख रखकर आमने-सामने, उत्तर प्रत्युत्तर संवाद, एवं वार्तालाप करते हैं। वस्तुतः यह एक मनोवैज्ञानिक विधि है जिससे साक्षात्कारकर्ता उत्तरदाता की भावनाओं विचारों मनोकृत्तियों एवं आन्तरिक तथ्यों का अध्ययन करता है।

3.3 साक्षात्कार प्रविधि की विशेषताएँ

- साक्षात्कार सम्पादित करने हेतु दो या दो से अधिक व्यक्तियों का होना आवश्यक होता है।
- साक्षात्कार कर्ता एवं साक्षात्कार देने वाले के मध्य परस्पर सम्पर्क, वार्तालाप अवश्य होनी चाहिए।
- साक्षात्कार का आयोजन किसी पूर्व निर्धारित उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है।
- साक्षात्कार सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक क्रिया है।
- साक्षात्कार में अनुसन्धानकर्ता द्वारा अध्ययन विषय से सम्बन्धित सूचनाओं तथ्यों का संकलन किया जाता है।
- साक्षात्कार सूचना संकलन की मौखिक विधि है।
- साक्षात्कार के अन्तर्गत आमने-सामने के प्राथमिक सम्बन्ध स्थापित किये जाते हैं।

3.4 साक्षात्कार के उद्देश्य

साक्षात्कार के प्रमुख उद्देश्य निम्नलिखित है :

1. **प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनाओं की प्राप्ति** – साक्षात्कार विधि के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता प्रत्यक्ष सम्पर्क स्थापित करके सूचनाओं का आदान प्रदान करता है। इसके अन्तर्गत दो या दो से अधिक व्यक्तियों के मध्य प्रत्यक्षतः विचारों का आदान प्रदान होता है।
2. **व्यक्तिगत तथ्यों की प्राप्ति** – साक्षात्कार आयोजन का उद्देश्य लोगों से सम्बन्धित व्यक्तिगत एवं आन्तरिक तथ्य प्राप्त करना भी है।
3. **अवलोकन का अवसर** – साक्षात्कार के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता को व्यक्तिगत विचारों / तथ्यों की जानकारी के साथ-साथ व्यक्ति के व्यवहार इत्यादि के अवलोकन का आधार भी प्राप्त होता है।
4. **उपकल्पनाओं का स्त्रोत** – साक्षात्कार का उद्देश्य अनुसन्धानकर्ता के लिए उपकल्पानाओं (Hypothesis) के निर्माण हेतु आवश्यक सामग्री प्राप्त करना है।

3.5 साक्षात्कार के प्रकार

साक्षात्कार के उद्देश्यों, क्षेत्र, अवधि, इत्यादि के आधार पर इसे निम्नलिखित भागों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः

1. **निदानात्मक साक्षात्कार** – निदानात्मक साक्षात्कार से अभिप्राय उस पद्धति से है जिससे अनुसन्धान की विषयवस्तु के कारणों को ज्ञात किया जा सके, जैसे डाक्टर द्वारा रोग के कारणों को जानने हेतु रोगी से पूँछताछ।

2. **उपचारात्मक साक्षात्कार** – अनुसन्धान हेतु चयनित विषय से सम्बन्धित समस्याओं के समाधान हेतु आयोजित साक्षात्कार उपचारात्मक साक्षात्कार कहलाता है।

3. **अनुसन्धानात्मक साक्षात्कार** – अनुसन्धानात्मक साक्षात्कार का उद्देश्य वैज्ञानिक व सामाजिक अनुसन्धानों के बारे में नवीन तथ्यों की खोज करना होता है।

4. **व्यक्तिगत साक्षात्कार** – इस प्रकार के साक्षात्कार के अन्तर्गत एक समय में एक व्यक्ति साक्षात्कार लेने वाला एवं एक व्यक्ति सूचना देने वाला होता है। दोनों परस्पर विषय से सम्बन्धित वार्तालाप करते हैं। अनुसंधानकर्ता प्रश्न पूछता है एवं सूचनादाता उन प्रश्नों के उत्तर देता है।

5. **सामूहिक साक्षात्कार** – इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता एक समय में एक से अधिक व्यक्ति अथवा समूह से आवश्यक सूचनायें प्राप्त करता है। वह समूह से बारी-बारी प्रश्न पूछता है किन्तु समूह की उपस्थिति एवं सहमति आवश्यक होती है।

6. **औपचारिक साक्षात्कार** – औपचारिक साक्षात्कार के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता, अनुसूची अथवा प्रश्नावली में दिये गये प्रश्नों को ही पूछता है तथा साक्षात्कार कर्ता द्वारा दिये

गये उत्तरों को लिखता है। इस प्रक्रिया में साक्षात्कारकर्ता पूर्ण रूप से नियंत्रण से रहता है इसलिए इसे नियंत्रित साक्षात्कार भी कहा जाता है।

7. **अनौपचारिक साक्षात्कार** – इस प्रकार के साक्षात्कार के अन्तर्गत किसी भी विशेष अनुसूची की सहायता नहीं ली जा सकती। इसके अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता साक्षात्कारदाता से किसी भी प्रकार के प्रश्न पूछने हेतु स्वतन्त्र होता है इसीलिए इसे अनियन्त्रित साक्षात्कार भी कहा जाता है।

3.6 साक्षात्कार प्रविधि के प्रमुख चरण

जैसा कि आप जानते हैं, किसी भी अनुसन्धान के आयोजन हेतु उद्देश्य का पूर्वनिर्धारण आवश्यक होता है। निर्धारित उद्देश्य के अनुसार अनुसन्धान की प्रविधि का चयन किया जाता है। अनुसन्धानकर्ता यदि साक्षात्कार के माध्यम से कोई सूचना एकत्र करना चाहता है तो उसे साक्षात्कार की पूर्व तैयारी व कतिपय मानक निर्धारित करने होंगे। सामान्य तौर पर जब हम किसी अनुसन्धान के आयोजन हेतु साक्षात्कार प्रविधि का प्रयोग करते हैं तो हमें निम्नलिखित चरणों (Step) से होकर गुज़रना पड़ता है।

1. साक्षात्कार आयोजित करने से पूर्व हमें उससे सम्बन्धित समस्त तैयारी कर लेना चाहिए। इसके लिए सर्वप्रथम यह आवश्यक होता है कि साक्षात्कारकर्ता अनुसन्धान की अध्ययन समस्या के समस्त पहलुओं का विस्तृत ज्ञान प्राप्त कर ले।

2. साक्षात्कार के उद्देश्य का निर्धारण करने के साथ ही वांछित सूचनाओं के सन्दर्भ में स्पष्ट निश्चय कर लेना चाहियें।

3. साक्षात्कारकर्ता द्वारा साक्षात्कार का आयोजन किस प्रकार

किया जायेगा, यह भी निश्चित कर लेना चाहिए, जैसे व्यक्तिगत सामूहिक इत्यादि।

4. जिन प्रश्नों के आधार पर सूचनाएँ एकत्र करनी है उन प्रश्नों को व्यवस्थित एवं उद्देश्यपूर्ण ढंग से प्रस्तुतीकरण हेतु तैयार कर लेना चाहिए।

5. साक्षात्कार से प्राप्त सूचनाओं के लेखन की विधि भी सुनिश्चित कर लेनी चाहिए।

6. साक्षात्कार हेतु अनुकूलतम अवसर एवं उपयुक्त स्थान का चुनाव कर लेना भी आवश्यक होता है।

7. साक्षात्कार हेतु सम्मुख उपस्थित होने के तत्काल पश्चात् कार्य भी सुनिश्चित हेतु आत्मीय सम्बन्ध (rapport) स्थापित करना आवश्यक होता है।

8. साक्षात्कार के प्रश्न क्रमबद्ध, सरल एवं स्पष्ट, मूल विषय से सम्बद्ध एवं भावना से रहित होने चाहिए।

9. साक्षात्कार के प्रश्नों का समुचित उत्तर संक्षेप में लिख लेना आवश्यक होता है। इसके लिए टेपरिकार्डर का भा प्रयोग किया जा सकता है।

3.7 साक्षात्कार प्रविधि के गुण अथवा महत्ता

वस्तुतः साक्षात्कार विधि द्वारा हम अनुसन्धान विषय से सम्बन्धित मौखिक सूचनाएँ प्राप्त कर सकते हैं। साक्षात्कार के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता को अवलोकन का अवसर भी प्राप्त होता है। साक्षात्कार के महत्व अथवा गुणों को हम विभिन्न शीर्षकों के अन्तर्गत निम्न प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं।

(1)मनोवैज्ञानिक महत्व – साक्षात्कार विधि के अन्तर्गत व्यक्ति का मनोवैज्ञानिक अध्ययन सम्भव हो सकता है। इसके

अन्तर्गत साक्षात्कार के दौरान साक्षात्कार देने वाले व्यक्ति के उद्देश्यों, भावनाओं धारणाओं, इच्छाओं, विचारों, मुद्राओं इत्यादि के आधार पर सूचनादाता के मनोवैज्ञानिक व्यवहार का अध्ययन किया जाता है।

(2) भूतकालीन घटनाओं का अध्ययन – साक्षात्कार के अन्तर्गत भूतकालीन घटनाओं एवं उनके प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। प्रायः अनेक घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं होती अतः उस घटना के बारे में जानकारी प्राप्त करने हेतु उन व्यक्तियों के साक्षात्कार की आवश्यकता पड़ती है जिन्होंने उस घटना को देखा है।

(3) अमूर्त घटनाओं का अध्ययन – साक्षात्कार के द्वारा हम अमूर्त एवं अदृश्य घटनाओं का भी अध्ययन कर सकते हैं। व्यक्ति की मानसिक दशा, विचार, भावनाओं, संवेगों आदि का अध्ययन भी इसके अन्तर्गत किया जा सकता है।

(4) सूचनाओं का सत्यापन – साक्षात्कार के अन्तर्गत सूचनादाता द्वारा दी गई सूचनाओं की विश्वसनीयता एवं सत्यता की जाँच साक्षात्कार के दौरान ही की जा सकती है।

(5) घटनाओं का अवलोकन – साक्षात्कार के दौरान साक्षात्कारकर्ता घटनाओं के बारे में प्रश्न पूछने के अतिरिक्त कई घटनाओं का अवलोकन भी कर सकता है।

(6) लचीली विधि – साक्षात्कार विधि विषय वस्तु एवं संचालन की दृष्टि से लचीली विधि है। इसका प्रयोग विभिन्न प्रकार के तथ्यों का संकलन करने हेतु किया जाता है।

3.8 साक्षात्कार विधि के दोष अथवा सीमाएं

साक्षात्कार विधि की अनेक अच्छाइयों के साथ-साथ इसमें कतिपय विसंगतियाँ भी हैं। इस विधि की सीमायें निम्नलिखित हैं-

(i) **दोषपूर्ण स्मरण शक्ति** – साक्षात्कार के दौरान प्रायः साक्षात्कारकर्ता सूचानाओं को लिखता नहीं है। अतः साक्षात्कार के दौरान हुई समस्त वार्ता स्मरण रख पाना असम्भव होता है।

(ii) **पक्षपात की सम्भावना** – सूचनादाता एवं साक्षात्कारकर्ता के विचारों मूल्यों एवं चिन्तन में भिन्नता होने के कारण किसी एक घटना पर समान दृष्टिकोण असम्भव होता है। अतः सूचनादाता अपने विचार प्रकट करते समय अपने व्यक्तिगत भावों एवं पक्षपात को अवश्य जोड़ता है।

(iii) **साक्षात्कारदाता पर निर्भरता** – साक्षात्कार में सूचनाओं का संकलन पूर्णरूपेण साक्षात्कारदाता पर निभर करता है। साक्षात्कारदाता प्रायः साक्षात्कारकर्ता से अनेक बहाने करके बार-बार बुलाता है।

(iv) **अशुद्ध रिपोर्ट** – साक्षात्कारकर्ता द्वारा लिखित प्रतिवेदन में उसके व्यक्तिगत पक्षपात विचारों एवं भावनाओं का समावेश होने के कारण प्रायः रिपोर्ट में शुद्धता का विलोपन हो जाता है।

(v) **खर्चीली प्रणाली** – साक्षात्कार एक खर्चीली प्रणाली है क्योंकि इसके अन्तर्गत साक्षात्कारकर्ता अनेक साक्षात्कारदाताओं से सम्पर्क करता है। वृहद स्तर पर साक्षात्कार के आयोजन हेतु कार्यकर्ताओं की नियुक्ति, प्रशिक्षण, वेतन, मार्ग व्यय इत्यादि पर अधिक समय करना पड़ता है।

3.9 प्रश्नावली (Questionnaire)

प्रश्नावली विषय अथवा समस्या से सम्बन्धित अनेक प्रश्नों की एक सूची होती है, जिसे अनुसन्धानकर्ता द्वारा तैयार करके डाक द्वारा अथवा व्यक्तिगत सम्पर्क करके सूचनादाताओं के पास भेजा जाता है। वस्तुतः प्रश्नावली के अन्तर्गत अनुसन्धान से सम्बन्धित सामग्री को प्रश्नों के रूप में क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

3.10 प्रश्नावली का निर्माण (Formation of Questionnaire)

अनुसन्धान की सफलता अथवा असफलता बहुत हद तक प्रश्नावली की रचना एवं निर्माण विधि पर निर्भर करती है। प्रश्नावली के प्रश्नों का उत्तर प्रायः अनुसन्धानकर्ता भी गैरमौजूदगी में सूचनादाता द्वारा दिये जाते हैं। अतः प्रश्नावली के निर्माण में अत्यधिक सावधानी व सर्तकता की आवश्यकता होती है। प्रश्नावली के निर्माण में हमें निम्न तथ्यों का ध्यान अवश्य देना चाहिए।

1. अध्ययन की समस्या – (The Problem of Study)– प्रश्नावली निर्माण से पूर्व समस्या के विभिन्न पक्षों का अध्ययन एवं विश्लेषण आवश्यक होता है। समस्या के विभिन्न पहलुओं को दृष्टिगत रखते हुए ही प्रश्नावली का निर्माण करना चाहिए।

2. प्रश्नों की अपयुक्तता – (Suitability of Questionnaire) – प्रश्नावली में किसी भी प्रश्न को सम्मिलित करने से पूर्व उन प्रश्नों का उपयुक्तता पर अवश्य विचार कर लेना चाहिए। अनावश्यक प्रश्नों के सम्मिलित करने से धन, समय व श्रम भी बर्बादी होती है।

3. प्रश्नों की स्पष्टता – (Clearity of Questions) – प्रश्नावली के अन्तर्गत पूछे गये प्रश्न सरल सुस्पष्ट होने चाहिए, भ्रमक प्रश्नावली से हम अनुसन्धान के लाभ को प्राप्त नहीं कर सकते।

4. सही सूचना प्रदान करने वाले प्रश्न – प्रश्नावली में पूछे जाने वाले प्रश्न सही एवं स्पष्ट सूचना प्रदान करने वाले होने चाहिए।

5. न्यूनतम प्रश्न (Minimum questions) प्रश्नावली में प्रश्नों की संख्या न्यूनतम होना चाहिए। अधिक लम्बी प्रश्नावली के उत्तर देने में प्रायः सूचनादाता को परेशानी होती है। उनके द्वारा प्रश्नावली प्रायः भरकर वापस ही नहीं की जाती है। लम्बी प्रश्नावली के निर्माण में अनावश्यक धन, समय व श्रम का अपव्यय होता है।

6. गणना (Calculation) – प्रश्नावली में इस प्रकार के प्रश्नों को सम्मिलित करना चाहिए, जिनकी गणना, वर्गीकरण, एवं सारणीयन आसानी से किया जा सके। अधिकांश प्रश्नों के उत्तर 'हाँ' या 'नहीं' में होने पर अनुसन्धान हेतु अध्ययन में वस्तुनिष्ठता बनी रहती है।

7. गोपनीय सूचनाएँ (Secret Information) – प्रश्नावली में सूचनादाता से सम्बन्धित व्यक्तिगत एंव गोपनीय सूचनाओं से सम्बन्धित प्रश्नों को नहीं सम्मिलित करना चाहिए क्योंकि ऐसे प्रश्नों के उत्तर सूचनादाता नहीं देता। इसके अतिरिक्त सूचनादाता द्वारा दी गई सूचनाओं की गोपनीयता भी बनाये रखनी चाहिए।

8. तकनीकी शब्दों की व्याख्या – यथासम्भव प्रश्नावली में तकनीकी शब्दों का प्रयोग नहीं करना चाहिए। यदि ऐसा करना आवश्यक होने पर उन तकनीकी शब्दों की व्याख्या अवश्य कर देना चाहिए।

3.11 प्रश्नावली का वाह्य अथवा भौतिक पक्ष (Physical Aspects of Questionnaire)

प्रश्नावली की सफलता प्रश्नों की भाषा, शैली व शब्दों पर निर्भर करने के अतिरिक्त उसकी भौतिक बनावट पर भी निर्भर करती है। भौतिक बनावट के अन्तर्गत निम्नलिखित पक्षों को ध्यान में रखा जाता है।

(i) आकार – सामान्य तौर पर प्रश्नावली का निर्माण इतने बड़े कागज में होना चाहिए जिसे आसानी से मोड़कर लिफाफे में रखा जा सके। कागज का आकार 8''× 12'' अथवा 9''×11'' हो सकता है। छोटे आकार भी प्रश्नावली हेतु पोस्टकार्ड का प्रयोग मितव्ययी होता है।

(ii) कागज – प्रश्नावली के निर्माण हेतु प्रयोग किया जाने वाला कागज, चिकना, कड़ा, मजबूत एवं टिकाऊ होना चाहिए। रंगीन कागज का प्रयोग भी किया जा सकता है।

(iii) प्रश्नावली की लम्बाई – प्रश्नावली की लम्बाई अनावश्यक रूप से अधिक नहीं होनी चाहिए जिसे भरने में सूचनादाता को परेशानी हो।

(iv) पठनीय – प्रश्नावली की पठनीयता बनाये रखने हेतु उसे छपवाना अथवा सायक्लोस्टाइल कराया जा सकता है।

(v) हाशिया एवं स्थान छोड़ना (Margin and Spacing) – प्रश्नावली का निर्माण करने के पश्चात् प्रायोगिक तौर पर एक छोटे निर्दशन क्षेत्र में उसका परीक्षण अवश्य कर लेना चाहिए जिसमें प्रश्नावली की किसी भी त्रुटि का

पता लगाकर उसे आसानी से दूर किया जा सकता है।

3.12 प्रश्नावली का नमूना

भारतवर्ष के वर्तमान राजनीतिक परिवेश से जनता सन्तुष्ट नहीं है। राजनीतिक जनता की अपेक्षाओं के अनुकूल आचरण नहीं कर रहे हैं। विकास की गति अत्यन्त धीमी है। चारों तरफ भ्रष्टाचार अन्याय का बोलबाला है। राजनीतिज्ञों द्वारा विकास के लिए आवंटित धनराशि का दुरूपयोग किया जा रहा है। गरीबी, बीमारी, बेरोजगारी से जनता त्रस्त है। न्यायपालिका की कार्य प्रणाली पर भी प्रश्न चिन्ह लग चुके हैं। आगे एक प्रश्नावली की जा रही है। कृपया अपने व्यस्ततम समय से थोड़ा वक्त निकालकर प्रश्नावली के समुचित उत्तर भेजने का कष्ट करें। आपके उत्तर पूर्णरूपेण गोपनीय रखे जायेंगे। कुछ चुने हुए उत्तरदाताओं को पुरस्कृत करने की भी योजना है।

(1) आप सूचनाएँ एकत्र करने हेतु किन साधनों का प्रयोग करते हैं?

(i) अखबार (ii) दूरदर्शन / रेडियो

(iii) पारस्परिक चर्चा (iv) उपर्युक्त सभी

(2) दिन प्रतिदिन घटित होने वाली घटनाओं के लिए आप किसे जिम्मेदार मानते हैं?

(i) वर्तमान शासन प्रणाली (ii) वर्तमान राजनीतिज्ञ

(iii) वर्तमान न्याय प्रणाली (iv) इनमें से कोई नहीं

(v) इनमें से सभी

(3) क्या आप वर्तमान शासन प्रणाली से संतुष्ट हैं ?

(i) हाँ (ii) नहीं

(4) यदि नहीं तो आप किस प्रकार की शासन प्रणाली चाहते हैं?

(i) संसदीय (ii) अध्यक्षात्मक

(iii) राजतन्त्र (iv) सैनिक तानाशाही

(5) वर्तमान समय में देश के समक्ष सबसे प्रमुख सवाल क्या है?

(i) आतंकवाद (ii) देश की एकता

(iii) आर्थिक विकास (iv) इनमें से सभी

(6) देश की एकता के लिए क्या जरूरी है?

(i) राज्यों की स्वायत्तता (ii) शक्तिशाली केन्द्र

(iii) सैनिक शासन (iv) इनमें से कोई नहीं

(7) गरीबी एवं बेरोजगारी दूर करने के हेतु क्या आवश्यक है?

(i) आरक्षण (ii) अवसर की समानता

(iii) आर्थिक विकास (iv) भ्रष्टाचार का अंत

(8) क्या आप वर्तमान सरकार की कार्यप्रणाली से सन्तुष्ट हैं?

(i) हाँ (ii) नहीं

(9) यदि नहीं तो आप किस पार्टी की सरकार चाहते हैं?

(i) भाजपा (ii) सपा

(iii) बसपा (iv) कोई नहीं

(10) क्या आप जनता प्रतिनिधियों की कार्यप्रणाली से सन्तुष्ट हैं?

(i) हाँ (ii) नहीं

(iii) कुछ नहीं कह सकता

यदि अन्य कोई खास बात कहना चाहते हैं तो लिखें

(11) आप बेरोजगारी को कैसे दूर कर सकते हैं?

(i) उद्योग लगाकर (ii) सबको काम के अवसर प्रदान कर

(iii) जनसंख्या नियंत्रण करके (iv) उपर्युक्त सभी

(12) गरीबी हटाने का सर्वोत्तम तरीका क्या है ?

(i) खैरात बांटना (ii) उद्योग लगाना

(iii) गरीबों को देश से निकाल देना

(iv) अमीरों से छीनकर गरीबों को बांट देना

(13) आप इस देश में अपने आपको सुरक्षित महसूस करते हैं।

(i) हाँ (ii) नहीं

(14) वर्तमान पुलिस प्रणाली से आप संतुष्ट हैं।

(i) हाँ (ii) नहीं

(15) वर्तमान न्याय प्रणाली क्या जनभावनाओं के अनुरूप कार्य कर रही है?

(i) हाँ (ii) नहीं

(16) वर्तमान न्याय प्रणाली से आप क्या अपेक्षा रखते हैं?

(i) तत्काल न्याय (ii) संविधान की परिधि में न्याय

(iii) पक्षपात राहत-न्याय (iv) उपर्युक्त सभी

यदि वर्तमान व्यवस्था के संदर्भ में आप कोई सुझाव देना चाहते हैं तो निम्न बाक्स में लिखें।

यहाँ आप अपना पूर्ण विवरण दें। यह जानकारी पूर्णरूपेण गोपनीय रहेगी।

नाम :.....

पूर्ण पता :.....धर्म .....

रोजगार :.....मासिक आय .....

आयकर दाता हैं अथवा नहीं।

लिंग.....उम्र.....

शैक्षिक योग्यता .....

कभी विशेष यात्रा की है .....

फोन/मोबाइल नं0 .....

3.13 सारांश

अवलोकन वह विद्या है जिसके माध्यम से हम अनेक वस्तुओं व घटनाओं के बारे में ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। वस्तुतः अवलोकन अनुसन्धान की तकनीक के रूप में प्राचीनकाल से प्रचलित है किन्तु अवलोकन विधि की सीमाओं के कारण अनुसन्धान के लिए साक्षात्कार विधि का प्रयोग किया गया। साक्षात्कार विधि के माध्यम से हम अपनी अध्ययन वस्तु के आमने-सामने के सम्बन्ध स्थापित करके वार्तालाप कर सकते हैं। इसके माध्यम से हम अनुसन्धान हेतु आवश्यक विषय सामग्री सहजता पूर्वक प्राप्त कर सकते हैं। साक्षात्कार के अन्तर्गत हम शैक्षणिक अथवा मनोवैज्ञानिक अनुसन्धान सहजता पूर्वक सम्पादित कर सकते हैं। साक्षात्कार विधा के अन्तर्गत प्रत्यक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनाओं की प्राप्ति होने के कारण अनुसन्धान के परिणाम के सत्य के करीब होते हैं। साक्षात्कार के अतिरिक्त प्रश्नावली का प्रयोग भी अनुसन्धान हेतु अत्यन्त उपयोगी होता है। प्रश्नावली, विषय अथवा समस्या से सम्बन्धित अनेक

प्रश्नों की एक सूची होती है। अनुसन्धान से सम्बन्धित सामग्री को प्रश्नों के रूप में क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत करके हम अनेक सूचनायें एकत्र कर सकते हैं।

3.14 बोध प्रश्न

(i) साक्षात्कार का अर्थ एवं परिभाषा कीजिए।

(ii) साक्षात्कार विधि की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

(iii) साक्षात्कार विधि के दोष अथवा सीमाएं क्या है?

(iv) प्रश्नावली से आप क्या समझते हैं?

(v) आप प्रश्नावली का निर्माण किस प्रकार से करेंगे?

(vi) कोई अध्ययन विषय लेकर एक प्रश्नावली तैयार करे?

3.15 बोध प्रश्न

(i) अनुसन्धान की तकनीक के रूप में अवलोकन प्राचीन/नवीन पद्धति है।

(ii) साक्षात्कार सम्पन्न करन हेतु कम से कम दो या अधिक व्यक्ति होने चाहिए।

(iii) साक्षात्कार का आयोजन पूर्व निर्धारित उद्देश्य/बिना किसी उद्देश्य के होता है।

(iv) साक्षात्कार विधि के अन्तर्गत हम प्रत्यक्ष/परोक्ष सम्पर्क द्वारा सूचनायें प्राप्त करते हैं।

(v) साक्षात्कार विधि के अध्ययन से हम मौखिक/लिखित सूचनायें प्राप्त करते हैं।

(vi) प्रश्नावली के प्रश्नों का उत्तर सूचनादाता अनुसन्धानकर्ता की मौजूदगी/गैरमौजूदगी में देता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

(1) Method in social Research, Goode & Hatt

(2) Social Research, Zund berg - G.A.

(3) सामाजिक सर्वेक्षण व सामाजिक शोध - रवीन्द्र नाथ मुखर्जी

(4) सामाजिक अनुसन्धान शोध - एम0 एल0 गुप्ता, डी0डी0 शर्मा

इकाई 4 : आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें (Scaling Techniques of Data Analysis

इकाई रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 ऑकड़ों का विश्लेषण

4.3 ऑकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्व दशायें

4.4 ऑकड़ों के विश्लेषण के चरण

4.5 चर

4.6 ऑकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें

4.7 साराँश

4.8 बोध प्रश्न

4.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप यह जान सकेंगे कि-

- आँकड़ों के विश्लेषण करने के विधि,
- आँकड़ों के विश्लेषण से परिणाम प्राप्त करने का तरीका, तथा
- आँकड़ों के विश्लेषण की मापन की विभिन्न तकनीकें ।

4.1 प्रस्तावना

अनुसन्धान के लिए केवल तथ्यों का एकत्रीकरण ही पर्याप्त नहीं होता बल्कि एकत्रित आंकड़ों के आधार पर कतिपय निष्कर्ष

प्राप्त करने की आवश्यकता होती है। एक अच्छा शोधकर्ता एकत्रित तथ्यों का प्रस्तुतीकरण इतने सुन्दर ढंग से करता है कि उनमें सजीवता आ जाती है और वे स्वयं बोलने लगते हैं। सर्वप्रथम शोधकर्ता द्वारा तथ्यों का सम्पादन किया जाता है। विभिन्न प्रविधियों द्वारा एकत्रित तथ्यों की जाँच करके त्रुटियों को दूर करने का प्रयास किया जाता है। विसंगतियाँ दूर कर तथ्यों को स्पष्टता प्रदान की जाती है।

4.2 आँकड़ों का विश्लेषण/निर्वचन

अनुसन्धानकर्ता द्वारा आँकड़ों के एकत्र करने के उपरान्त उनका विश्लेषण किया जाता है। वस्तुतः तथ्यों के संकलन, सम्पादन, वर्गीकरण एवं सारणीयन के उपरान्त अनुसन्धानकर्ता उन आंकड़ों के विश्लेषण एवं निर्वचन (विवेचन) का कार्य प्रारम्भ करता है। विश्लेषण एवं निर्वचन के आधार पर ही नियमों का प्रतिपादन, उपकल्पनाओं की सत्यता की परख एवं वैज्ञानिक निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

4.3 आँकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्व दशायें

वस्तुतः तथ्यों (आँकड़ों) का विश्लेषण एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है किन्तु इसकी सफलता हेतु अनुसन्धानकर्ता में कतिपय विशिष्ट गुणों का होना अनिवार्य होता है आँकड़ों का विश्लेषण तभी तथ्यपरक हो सकता है जबकि निम्नलिखित पूर्व दशाओं को अनुसन्धानकर्ता पूरी करता हो।

(i) तथ्यों के बारे में समग्र जानकारी होना – आँकड़े के विश्लेषण हेतु अनुसन्धानकर्ता के लिए वस्तुतः अध्ययन के आधार पर उपलब्ध आँकड़े इतने अव्यवस्थित होते हैं कि अध्ययनकर्ता व उनका विश्लेषण करने हेतु सक्षम नहीं

होता। अतः विश्लेषणकर्ता को स्वतः विभिन्न गुणों, तथ्यों के प्रति जागरूक होना चाहिए।

(ii) व्यक्तिगत पक्षपात से राहत – अनुसन्धानकर्ता को इस तथ्य की ओर विशेष सावधानी बरतनी होगी कि किसी भी दशा में आँकड़ों के विश्लेषण में व्यक्तिगत पक्षपात न होने पाये। विश्लेषण में अभिनति (Bias) पक्षपात होने पर सही निष्कर्ष नहीं प्राप्त किये जा सकते।

(iii) घटनाओं के प्रति विशेष अन्तर्दृष्टि – चूँकि अनुसन्धानकर्ता तथा संकलन के समय स्वयं अनेक घटनाओं का अवलोकन के माध्यम से साक्षी होता है अतः अवलोकित घटनाओं के सम्बन्ध से अनुसन्धानकर्ता की अन्तर्दृष्टि स्पष्ट एवं सूक्ष्म होनी चाहिए।

(iv) वौद्धिक ईमानदारी – आँकड़ों के विश्लेषण हेतु अनुसन्धानकर्ता में वौद्धिक ईमानदारी का होना परमावश्यक होता है। यद्यपि आँकड़ों के विश्लेषण हेतु अनुसन्धानकर्ता द्वारा वैज्ञानिक कार्य विधियों का सहारा लिया जाता है किन्तु वौद्धिक ईमानदारी के अभाव में उसके द्वारा वैज्ञानिक नियमों की उपेक्षा की जा सकती है।

(v) समालोचनात्मक कल्पना शक्ति का होना – अनुसन्धानकर्ता चूँकि तथ्यों के संकलन के उपरान्त उनके मध्य पाये जाने वाले सह-सम्बन्धों (Corelations) को भी जानना चाहता है। अतः उसमें समालोचनात्मक कल्पना शक्ति का होना आवश्यक होता है। समालोचनात्मक कल्पना शक्ति के आधार पर ही विभिन्न तथ्यों के मध्य पारस्परिक सम्बन्धों को ज्ञात कर उनका समालोचनात्मक परीक्षण किया जाता है।

4.4 आँकड़ों के विश्लेषण के चरण (Stages of Data Analysis)

आँकड़ों के विश्लेषण हेतु वैज्ञानिक विधि का प्रयोग करने हेतु अनुसन्धानकर्ता कई चरणों से गुजरता है। प्रत्येक चरण में सम्पादित किये जाने वाले कार्यों को व्यवस्थित ढंग से सम्पन्न करने पर ही वैज्ञानिक निष्कर्ष यथार्थ हो सकते हैं। तथ्य विश्लेषण के महत्वपूर्ण चरण निम्नलिखित हैं :

(i) आँकड़ों का सम्पादन – आँकड़ों के सम्पादन का आशय संकलित आँकड़ों का सूक्ष्म निरीक्षण करके उनकी कमियों, अशुद्धियों को दूर करके तथ्यों को स्पष्टता, प्रदान करने से है।

(ii) तथ्यों का वर्गीकरण – अनुसन्धान के उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए आँकड़ों को वर्गीकृत किया जाता है। आँकड़ों के वर्गीकरण का उद्देश्य विश्लेषण एवं निर्वचन (Analysis and Interpretation) तथ्यों को व्यवस्थित करना है।

(iii) द्वितीयक समंकों की जाँच – जब हम अनुसन्धान में प्राथमिक तथ्यों के साथ-साथ द्वितीयक तथ्यों का प्रयोग करते हैं तब हमें द्वितीयक तथ्यों की विश्वसनीयता की परख अवश्य कर लेनी चाहिए।

(iv) संकेतन – संकेतन का उद्देश्य लम्बे उत्तरों को संक्षेपित करके विश्लेषण कार्य को सरल बनाना है। प्राप्त आंकड़ों उत्तरों को अर्थपूर्ण श्रेणियों में विभाजित करने की प्रक्रिया को संकेतन कहते हैं।

(v) सारणीयन – अनुसन्धान के अन्तर्गत समस्या से सम्बन्धित

तथ्यों को संकलित करके उन्हें सारणियों अथवा तालिकाओं के रूप में प्रस्तुत किया जाता है।

(vi) साँख्यिकीय विश्लेषण – अत्यावश्यक होता है।

(vii) निर्वचन – आँकड़ों के विश्लेषण का एक प्रमुख चरण निर्वचन है। यह अनुसन्धान का महत्वपूर्ण भाग है। निर्वचन की प्रक्रिया के अन्तर्गत हम प्राप्त तथ्यों के आधार पर परिणाम निकालते हैं।

(viii) सामान्यीकरण – सामान्यीकरण के अन्तर्गत अनुसन्धानकर्ता द्वारा निष्कर्ष प्राप्त करके नियमों व सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया जाता है।

4.5 चर (Variables)

अनुसन्धान कार्य हेतु आँकड़ों का संग्रहण जितना आवश्यक होता है उन एकत्रित आँकड़ों का विश्लेषण भी उतना ही आवश्यक होता है। आँकड़ों के विश्लेषण से ही हम निष्कर्ष निकाल सकते हैं। आँकड़ों के विश्लेषण से पूर्व श्रेणी को गुणात्मक तथ्यों (Quantitative series) में परिवर्तित किया जाता है। उदाहरण स्वरूप हम परिवारों का मापन परिवारों के सदस्यों की गणना करके कर सकते हैं।

1. **गुणात्मक चर (Qualitative Variables)** – गुणात्मक चर वे चर होते है जो आँकड़ों के किसी गुण विशेष को इंगित करते हैं। इनके आधार पर हम अनुसन्धान में प्रयुक्त सामग्री को कतिपय स्पष्ट श्रेणियों में विभाजित कर सकते हैं। जैसे लिंगभेद के आधार पर स्त्री, पुरुष, अध्ययन विषयों के आधार पर कला, वाणिज्य व विज्ञान, धर्म के आधार पर हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई, पारसी इत्यादि।

2. **मात्रात्मक चर (Quantitative Variables)** – मात्रात्मक चर वे होते हैं जो आँकड़ों में निहित गुणों की मात्रा को तय करते हैं। जैसे छात्रों के परीक्षा प्राप्ताँक, गरीबी रेखा का मापन इत्यादि मात्रात्मक चर सतत् चर एवं असतत् चर दो रूपों में हो सकते हैं। सतत चर वे है जो किन्ही दो मानों के मध्य का मान भी धारण कर सकते हैं जैसे लम्बाई 5 फिट हो सकती है तथा 5 फिट चार इंच भी हो सकती है। इस प्रकार लम्बाई, वजन, मापन इत्यादि सतत् चर होते है। इसके विपरीत असतत चर वे होते हैं जिन्हें किन्हीं दो मानों के मध्य नहीं रखा जा सकता है। जैसे परिवार के सदस्यों की संख्या 3-4 नहीं हो सकती, वह संख्या तीन या चार हो सकती है। इसी प्रकार किसी परिवार में बच्चों की संख्या 5-6 नहीं हो सकती। यह संख्या या तो पाँच होगी अथवा छह होगी। अर्थात् असतत् चरों के मान सदैव पूर्णांक में होंगे।

4.6 आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकें

आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकों को आँकड़ों की कतिपय विशेषताओं, जैसे, चरों की प्रकृति, यर्थाथता, परिणामों की प्रकृति इत्यादि के आधार पर निम्नलिखित रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।

(i) नामित पैमाना (Nominal Scale) – आँकड़ों के विश्लेषण हेतु प्रयोज्य नामित पैमाना के अन्तर्गत आँकड़ों को किसी गुण अथवा - विशेषता के आधार पर मापित किया जाता है। इसके अन्तर्गत आँकड़ों को उनके गुण अथवा विशेषता के आधार पर कतिपय वर्गों अथवा समूहों में बाँट लिया जाता है। प्रत्येक वर्ग गुण अथवा विशेषता के आधार पर भिन्न-भिन्न होते हैं। जैसे विषयों

के आधार पर वाणिज्य, कला, व विज्ञान वर्ग, निवास के आधार पर शहरी, ग्रामीण, लिंगभेद के आधार पर स्त्री, पुरुष इत्यादि प्रकार के विभाजन नामित पैमाने के अन्तर्गत किये जाते हैं। मापन की यह तकनीक अपेक्षाकृत कम परिष्कृत है क्योंकि इसके अन्तर्गत हम आँकड़ों के गुणों के आधार पर केवल गणना कार्य कर सकते हैं।

(ii) क्रमित पैमाना (Ordinal Scale) – आँकड़ों के मापन की यह तकनीक आँकड़ों में अन्तर्ग निहित गुणों की मात्रा व आकार पर आधारित होती है। इस प्रकार के मापन के अन्तर्गत अनुसन्धान सामग्री (व्यक्तियों, वस्तुओं) को उनके किसी गुण विशेष की मात्रा के आधार पर कतिपय वर्गों में विभाजित कर दिया जाता है। जैसे व्यक्तियों के कार्य का वर्गीकरण उत्कृष्ट, अतिउत्तम, उत्तम, व खराब। इसी प्रकार विद्यार्थियों को उनकी योग्यता के आधार पर श्रेष्ठ (Excellent), अच्छा (Good), औसत (Average) व कमजोर (Weak) इत्यादि। क्रमित पैमान के अन्तर्गत हम आँकड़ों को उनके गुणों के आधार पर घटते व बढ़तेक्रम में रख सकते हैं। इसके अन्तर्गत भी हम समूह के सदस्यों की गणना मात्र कर सकते हैं। समूहों के व्यक्त करने वाले प्रतीकों के साथ गणितीय क्रियायें नहीं की जा सकती। जैसे हम किसी कक्षा के विद्यार्थियों के परीक्षा परिणाम मात्र श्रेणी के आधार पर वर्गीकृत कर सकते हैं।

(iii) अन्तरित पैमाना (Interval Scale) – आँकड़ों के विश्लेषण की यह मापन तकनीक गुण की मात्रा अथवा परिणाम पर आधारित होती है। इस प्रकार के मापन के अन्तर्गत अनुसन्धान की सामग्री को उनके गुणों की मात्रा

के आधार पर इकाइयों के रूप में अभिव्यक्त किया जाता है तथा किन्ही दो आंकड़ों के मध्य अन्तर समान रहता है। जैसे विद्यार्थियों को उनके अंग्रेजी भाषा ज्ञान के आधार पर अंक प्रदान करना। यहाँ 32-33 अंकों के मध्य वही अन्तर होता है। प्रायः हम सामाजिक, आर्थिक मनोवैज्ञानिक, व शैक्षणिक चरों का मापन अन्तरित पैमाने के आधार पर ही करते हैं। इन इकाइयों के साथ हम गणितीय क्रियायें (यथा, जोड़, घटना, इत्यादि कर सकते हैं। इस स्तर के मापन में शून्य जैसा कोई बिन्दु नहीं होता है। इस स्तर के मापन परिणाम सापेक्ष हो सकते हैं निरपेक्ष कदापि नहीं। जैसे गणित में फेल विद्यार्थी को हम यह नहीं कह सकते है कि उसका गणित ज्ञान शून्य है। वह मात्र प्रश्न पत्र में दिये गये प्रश्नों को हल नहीं कर सका, उसके द्वारा गणित के अन्य प्रश्नों को हल किया जा सकता है। अन्तरित मापन के अन्तर्गत हम गुणा, भाग जैसी गणनायें नहीं कर सकते हैं।

(iv) अनुपातिक पैमाना (Ratio Scale) – आँकड़ों के विश्लेषण की यह मापन तकनीक सर्वाधिक परिष्कृत एवं परिमार्जित है। इस प्रकार के मापन में अन्तरित मापन पैमाने के सभी गुणों के साथ-साथ शून्य की परिकल्पना भी निहित रहती है। शून्य प्रायः वह स्थिति होती है जब आँकड़ों का कोई गुण रूपेण अस्तित्व हीन हो जाता है। जैसे, भार, दूरी, व लम्बाई इत्यादि का मापन आनुपातिक मापन पैमाने के अर्न्तगत आते हैं क्योंकि मापन की इकाइयाँ पूर्ण रुपेण अस्तित्व हीन हो सकती है। आनुपातिक मापन पैमाने में प्राप्त मापों की अनुपातिक तुलनीयता हो सकती है। जैसे 80 किग्रा भार वाली किसी वस्तु को 40

किग्रा भार वाली उसी वस्तु को, दो गुने रूप में व्यक्त किया जा सकता है। आनुपातिक मापन से प्राप्त परिणामों के साथ हम जोड़, घटाना, गुणा, भाग, इत्यादि गणितीय क्रियायें आसानी से कर सकते हैं।

4.7 साराँश

ज्ञान शब्द अपने आप में वृहत कार्य संजोये हुए हैं जानने की कोई सीमा नहीं होती। हम अपने ज्ञान की सीमाओं में नहीं बाँध सकते। ज्ञान प्राप्ति एवं इसके विकास तथा परिमार्जन हेतु अनुसन्धान एक सशक्त माध्यम है। अनुसन्धान की प्रक्रिया के माध्यम से ही हम अपने ज्ञान को नवीनीकृत कर सकते हैं। अनुसन्धान हेतु हमें कतिपय तथ्यों को आँकड़ों के रूप में संग्रहीत करने की आवश्यकता होती है। आँकड़ों के संग्रहण के उपरान्त उनका सम्पादन, वर्गीकरण, सारणीयन, विश्लेषण, एवं निर्वचन करके ही हम अनुसन्धान के परिणाम प्राप्त कर सकते हैं। वस्तुतः आँकड़ों के विश्लेषण हेतु कतिपय मापकों की आवश्यकता होती है। इन्हीं मापन तकनीकों के माध्यम से आँकड़ों का विश्लेषण करके निष्कर्ष प्राप्त किये जा सकते हैं।

4.8 बोध प्रश्न

(i) आँकड़ों के विश्लेषण से क्या अभिप्राय है?

(ii) आँकड़ों के विश्लेषण हेतु पूर्व दशाओं का उल्लेख करो?

(iii) आँकड़ों के विश्लेषण के प्रमुख चरण क्या हैं?

(iv) चर किसे कहते हैं, वे कितने प्रकार के होते हैं?

(v) आँकड़ों के विश्लेषण की मापन तकनीकों का उल्लेख कीजिए। कौन सी विधि गणितीय गणनाओं को सम्पादित करने में सक्षम हैं?

संदर्भ ग्रन्थ

(i) Method in social Research - Goode & Hatt.

(ii) सामाजिक सर्वेक्षण व सामाजिक शोध, रवीन्द्र नाथ मुकर्जी

(iii) Fundamentals of Statistics - S.P, Singh

(iv) Social Research - Lung berg, G.A.,

(v) Principals of Statistics - Ramendu Roy.

खण्ड

5

सांख्यिकीय पैकेज एवं रिपोर्ट लेखन

इकाई - 1 5

प्रबंध शोधकर्ता के लिए प्रासंगिक साफ्टवेयर सकुल के लिए जागरूकता

इकाई - 2 13

विश्लेषण तथा निष्कर्ष ग्रहण (Analysis and Drawing Inferences)

इकाई - 3 19

अनुसंधान प्रतिवेदन का लेखन (Research Report Writing)

इकाई - 4 24

डाटा भण्डारण और खनन (Data ware housing and Mining)

परामर्श-समिति

प्रो0 नागेश्वर राव	**कुलपति - अध्यक्ष**
डॉ0 हरीशचन्द्र जायसवाल	वरिष्ठ परामर्शदाता - कार्यक्रम संयोजक
श्री एम0 एल0 कनौजिया	कुलसचिव - सचिव

संरचनात्मक सम्पादन

डॉ0 मंजूलिका श्रीवास्तव	निदेशक, दूरस्थ शिक्षा परिषद्, नई दिल्ली

विषयगत सम्पादन

प्रो0 एस0 ए0 अंसारी	निदेशक, मोनिरबा, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

लेखक

डॉ0 सुबोजित बनर्जी	असिस्टेन्ट प्रोफेसर, डिपार्टमेन्ट आफ बिजिनेस एडमिनिस्ट्रेशन, वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय, जौनपुर

प्रस्तुत पाठ्य सामग्री में विषय से सम्बन्धित सभी तथ्य एवं विचार मौलिक रूप से लेखक के स्वयं के हैं।

© उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद

सर्वाधिकार सुरक्षित। इस पाठ्य-सामग्री का कोई भी अंश उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना, मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

उत्तर प्रदेश राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, इलाहाबाद की ओर से श्री एम0 एल0 कनौजिया, कुलसचिव द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित, मार्च 2010
मुद्रक नितिन प्रिन्टर्स, 1, पुराना कटरा, इलाहाबाद।

खण्ड-5 परिचय

इस खण्ड में विशेषरूप से संप्रेषण (Communication) में सांख्यकीय पैकेज एवं रिपोर्ट लेखन की कुशलताओं (Skills) की चर्चा की गई है। प्रथम इकाई शोधकर्ताओं के लिए कम्प्यूटर के महत्व, डाटा में एक्सेल का प्रयोग एवं विश्लेषण, एक्सेल में डेटा प्रविष्टि, तथा चार्ट बनाना उन्हें सूत्र में दर्ज करके परिकलन आदि की व्याख्या की गई है। द्वितीय इकाई में आंकड़ों के संकलन, सांकेतीकरण, संवर्गीकरण, सारणीयन की रचना अनुंसाधन से प्राप्त आंकड़ो का सांख्यकीय प्रस्तुतीकरण तथा विश्लेषण आदि की व्याख्या की गयी है। तृतीय इकाई में अनुसंधान प्रतिवेदन लेखन के महत्व, अनुसंधान प्रतिवेदन के मुख्य संघटक तथा अनुसंधान प्रतिवेदन के लेखन में क्या सावधानियाँ रखनी चाहिये आदि बातों की चर्चा की गई है। चतुर्थ इकाई में डाटा भण्डार गृह की मूल अवधारणा एवं विशिष्टता डाटा भण्डार गृह के विकास, डाटा भण्डार गृह की व्यवस्था एवं डाटा खनन (Data Mining) एवं खनन प्रणाली आदि को विस्तापूर्वक बताया गया है।

इकाई - 1 : प्रबंध शोधकर्ता के लिए प्रासंगिक साफ्टवेयर संकुल के लिये जागरूकता

(Awareness of Software Packages Relevant to Management Researcher)

इकाई की रूपरेखा-

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 एम एस-एक्सेल

1.2.1 एम.एस. एक्सेल में डाटा दर्ज करना

1.2.2 पाठ तथा संख्यात्मक डेटा स्परूप

1.2.3 परिणाम की गणना के लिए कार्यपत्रक में कोई सूत्र दर्ज करना

1.3 एम एस एक्सेल में चार्ट बनाना

1.3.1 चार्ट विजार्ड

1.4 सारांश

1.5 अभ्यास - प्रश्न

1.6 संदर्भ-पुस्तकें

1.0 : उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद पाठक जान सकेंगें :

- प्रबंध शोधकर्ताओं के लिए कम्प्यूटर का महत्व;
- डाटा में एक्सेल का प्रयोग विश्लेषण और व्याख्या;
- एक्सेल में डेटा प्रविष्टि; तथा
- चार्ट बनाना और सूत्र दर्ज करके परिकलन करना।

1.1 प्रस्तावना

तीव्र गति से गणना एवं प्रदर्शन करने की क्षमता के साथ-साथ कम्प्यूटर, अनुसंधान के लिए सबसे पसंदीदा उपकरण बन गया है, आधुनिक अनुसंधान के क्षेत्र में अनुसंधान प्रणाली पर कोई भी पाठ कम्प्यूटर के उल्लेख के बिना अधूरा है। कम्प्यूटर आसानी से और जल्दी से परिकलन कर सकते

हैं और जो काम पहले कई दिनों या महीने में होते थे अब कम समय में आसानी से हो सकते हैं। हेर फेर इसके अलावा है। यह जोड़तोड़ तथा गणना डेटा के आधार पर किया जा सकता है। इसके साथ कम्प्यूटर एडेड विश्लेषण आयामों से अनुसंधान समस्या का विश्लेषण शोधकर्ता कर सकते हैं। विश्लेषण के अलावा कम्प्यूटर साफ्टवेयर अत्यन्त परिष्कृत संपादन और डेटा में उपयोगी होते हैं। सांख्यिकीय साफ्टवेयर भी विसंगतियों को दूर करने और मूल्यों के लापता मान ज्ञात करने का काम कर रहे हैं।

कम्प्यूटर का अनुप्रयोग केवल अनुभवजन्य अध्ययन करने के लिए सीमित नहीं है। इसका समान लाभ के साथ, खोजपूर्ण अध्ययन के लिए भी इस्तेमाल किया जा सकता है। उभरती तकनीक डाटा खनन का प्रयोग डेटा के एक सेट के भीतर अन्वेषण गतिविधियों का समर्थन करने के उद्देश्य से कर रहे हैं। उन्नत डेटा भण्डारण और पुनर्प्राप्ति की क्षमता का प्रयोग डेटा के भण्डारगृहों से डेटा खनन के साथ सफलतापूर्वक शोधकर्ताओं द्वारा किया जाता है। व्यापार के लिए जटिल मुद्दों और उनके समाधान हेतु विशेष साफ्टवेयर अनुसंधान की प्रक्रिया के हर चरण के लिए उपलब्ध हैं। अनुकार संकुल व्यापक रूप से आटोमोबाइल जैसे तकनीकी केन्द्रित उद्योगों में अनुसंधान के लिए उपयोग किया जाता है। उड्डयन और जैव प्राद्योगिकी इंटरनेट क्रान्ति के आने के साथ, शोधकर्ताओं ने यह सर्वेक्षण प्रशासन और डाटा एकत्र करने के लिए एक सुविधाजनक माध्यम मिल गया है www.opinion.com और www.surveymonkey.com जैसे वेबसाइट उपकरण हैं जिनके माध्यम से शोधकर्ता अपनी प्रश्नावली डिजाइन कर सकते हैं और नेट पर होस्ट कर सकते हैं; उत्तरदाताओं का उपयोग और रजिस्टर कर सकते हैं एक बटन के एक क्लिक के साथ अपने जवाब एकत्र कर सकते हैं। स्वचालित रूप से एक डेटाबेस है जिसका उपयोग सांख्यिकीय विश्लेषण के लिये किया जा सकता है।

इस पाठ में, एक सामान्य रूप से उपयोग और बुनियादी कम्प्यूटर पैकेज MS-Excel की चर्चा की गई है जिसका विश्लेषण के लिए उपयोग किया जाता है। कार्यपत्रकों (Worksheets) और इस साफ्टवेयर से संबंधित कोशिकाओं (Cells) के रूप में कुछ बुनियादी अवधारणाओं पर भी चर्चा की गई है ।

1.2 एम.एस. एक्सेल MS-Excel

Microsoft Excel सबसे आम डेटा प्रबंधन अनुप्रयोग है। जैसा कि नाम का सुझाव है, यह Microsoft Office पैकेज है जो माइक्रोसाफ्ट विंडोज आपरेटिंग सिस्टम पर चलता है। यह 1991 के बाद से बाजार में लाया गया है। नए संस्करण कई अतिरिक्त सुविधाओं के साथ आए हैं लेकिन पैकेज के बुनियादी कामकाज नही हैं।

Microsoft Excel तालिका स्वरूप में डेटा एकत्र करने के लिए उपयोगी है। सांख्यिकीय मान की गणना, कार्यों का मूल्यांकन, और कार्यों का रेखांकन Excel अनुमति देता है। एक सारणी

के रूप में गणना हम बाहर ही गणना करना अगर हम उन्हें कागज और पेंसिल के साथ कर रहे थे के रूप में ज्यादा “ “ पेपर Excel में किसी कार्यपत्रक (Worksheet) कहा जाता है और यह लेबल पंक्तियों और स्तंभों के द्वारा एक आयकताकार ग्रिड में विभाजित है एक पंक्ति (Rows) और स्तंभ (Columns) के प्रतिच्छेदन किसी कार्यपत्रक कक्ष के रूप में भेजा है और इन कोशिकाओं सभी डेटा, पाठ, और सूत्र जो एक गणना और उसके संबंधित दस्तावेज शामिल होते है। काकर्यपत्रक किसी भी कम्प्यूटर के लिए प्रारम्भ बिन्दु डेटा विश्लेषण सहायता प्राप्त है जब छोटा नीचे एक जैसे एक्सेल, एक स्प्रेडशीट खिड़की, खोलने, पर प्रकट होगा।

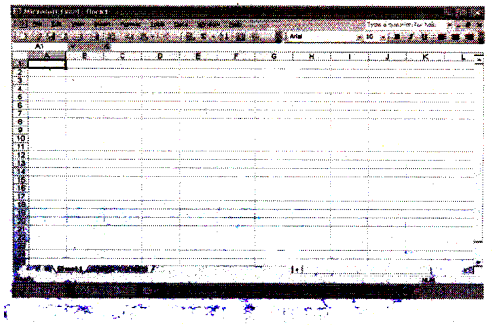

छवि 1: EXCEL स्प्रेडशीट खिड़की

स्प्रेडशीट पंक्तियों के होते हैं (1, 2, 3.....) और स्तंभों (ए, बी, सी .... वर्तमान के रूप में नाम बॉक्स में प्रदर्शित होने के रूप में अच्छी तरह से बाक्सिंग दिखने सेल के साथ) ऊपर चित्र A1 में मौजूदा सेल के रूप में प्रकट होता है आकृति में भी सूचना कार्यपत्रक के शीर्ष पर उपकरण पट्टियाँ, एक कोशिका (चयनित है इस पर प्रकाश डाला कर्सर क्लिक करके), केवल एक ही कक्ष किसी भी समय में चयनित किया जा सकता है और इस कक्ष को सक्रिय कक्ष के रूप में भेजा है इन में से कई शब्द प्रोसेसर में जो परिचित है और वे बहुत ही इसी तरह के भीतर स्प्रैडशीट कार्यों की सेवा, किसी पाठ (हमारे गणना दस्तावेजीकरण करने के लिए प्रयोग किया जाता है)। एक स्प्रेडशीट में दर्ज तरीके के एक नम्बर अपने फान्ट शैली, फान्ट आकार बदलने सहित में प्रारूपित किया जा सकता है यह बोल्ड, इटैलिक और अन्डर लाइन कर रही है। संख्यात्मक डेटा के रूप में भी उपकरण ($,% आदि)। तीसरे उपकरण पट्टी के दाई ओर से एकत्र किया जा सकता है तरीकों की एक किस्म में स्वरूपित किया जा सकता है।

प्रश्नावली - 1

आधुनिक दिन अनुसंधानकर्ता कम्प्यूटर के लिए एक अमोघ संसाधन है कम्प्यूटर के चरित्रिक गुणों के संदर्भ में व्याख्या कीजिए।

प्रश्नावली 2

स्प्रेडशीट्स क्या है? क्यों उन्हें कम्प्यूटर के लिए निर्माण बलॉक के रूप में माना जाता है।

1.2.1 एम.एस. एक्सेल में डाटा दर्ज करना

याद है कि किसी कार्यपत्रक कक्ष इस पर क्लिक करके सक्रिय कक्ष बनाया गया है। एक बार जब यह किया जाता है तो सेल डेटा स्वीकार करने को तैयार हो जाता है (नीचे आकृति) हमने सक्रिय कक्ष के रूप में कक्ष B2 चयन किया है और फिर शब्द में टाइप किया, ''बिक्री में''। जैसा कि हम देख सकते हैं शब्द ही सेल में दोनों और सूत्र पट्टी में दिखाई देता है अगर हम (संपादित करें या मिटा दें और बदलें) इस शब्द के बाद हम सेल पर बस क्लिक करें, तो सूत्र पट्टी जहाँ यह मानक पाठ संपादन ।-बीम सूचक बन जाता है, करने के लिए कर्सर को स्थानांतरित करना चाहते हैं संपादन सूत्र पट्टी में जगह लेता है और जब हम क्लिक करें चेक सूत्र पट्टी के छोड़ दिया है (यह एक बार हम क्लिक करें प्रदर्शित करने के लिए संपादन मोड में सूत्र पट्टी सक्रिय हो जायेगा) या कुंजी दर्ज करें प्रेस बाक्स कक्ष में परिलक्षित।

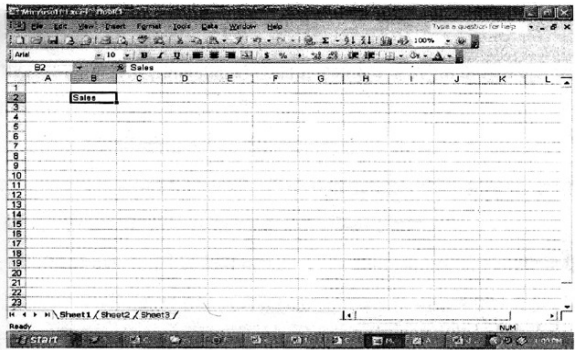

1.2.2 पाठ तथा संख्यात्मक डेटा स्वरूपण

एक्सेल कक्षों में पाठ और डेटा स्वरूपण के लिए कई क्षमताओं को प्रदान करता है। इन पाठ स्परूपों हमें एक स्प्रैडशीट है कि लगभग एक यह है कि आकर्षक और प्रेरक है अपठनीय है बदलने के लिए अनुमति देते हैं हम स्वरूप मेन के माध्यम से प्रारूप सकते है। यदि कोशिकाओं (कक्षाओ) को हम प्रारूप देने के लिए चाहते है तो स्वरूप का चयन करें और कक्ष पर क्लिक करें। हाइलाइट एक संवाद बाक्स को पॉप कि प्रारूप हमें (के लिए उपलब्ध फॉन्ट, आकार, संरेखण, सीमाओं आदि के विकल्प प्रदर्शित) होगा। बनाओ, परिवर्तन और ठीक में से वांछित क्लिक करें अगर हम एक ही बार में प्रारूप करने के लिए संपूर्ण पंक्तियों या स्तंभों को चाहते हैं तो संख्या का चयन करें या पत्रक के किनारे पर पत्र के लिए कक्षों की मार्कर है की पूरी श्रृंखला को उजागर स्वरूप मेनू पर जाएँ और पंक्तियाँ या स्तंभ का चयन करें। गुण संपादित करने के लिए हम चाहेंगे का चयन करें। एक संवाद बाक्स प्रकट होगा जो हमें हमारे परिवर्तनों को बनाने के लिए अनुमति देता है।